प्रकाशक

मंगल प्रकाशन

गोविन्द राजियों का रास्ता,

जयपुर-१

प्रथम संस्करण [पुनःसंस्कारित] १९७४

मूल्य

१५—००

मुद्रक

मातृभूमि प्रिंटिंग प्रेस, जयपुर

विषय सूची

भूमिका

अ. फागु काव्य, परिवेश, परम्परा और प्रवृत्तियाँ

प्रसंगवश कई फागु काव्यो के सपादको और चिन्तको ने फागु शब्द की व्युपत्ति देने का प्रयास किया है। 'वसत विलास' फागु के सपादक कान्ति लाल व्यास ने फागु की व्युत्पत्ति सस्कृत के फाल्गुन शब्द से इस प्रकार दी है।

फाल्गुन → फागु → फागु।[1]

डॉ० भोगी लाल साडेसरा ने इस व्युत्पत्ति को भाषा-वैज्ञानिक दृष्टि से असंगत ठहराते हुए अपना मत इस प्रकार दिया है :—

फग्गु → फगु → फागु।[2]

इन व्युत्पत्तियो पर विचार करने से पूर्व शब्द के इतिहास और परिवेश पर दृष्टपात करना आवश्यक होगा। 'फल्गु' शब्द सामान्य रूप से तीन अर्थो मे संदर्भित होता है :—

(१) वसन्त, (२) रक्त वर्ण, (३) श्वेत वर्ण का एक विशेष नक्षत्र।

ये तीनो ही अर्थ वसत से सबधित है। इस शब्द से जो व्युत्पत्तियाँ हुई वे इस प्रकार हैं।

(१) फल्गु → फाल्गुन → फागुन। (२) फल्गु → फग्गु → फागु → फाग।

उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र के अनुसार उस मास का नाम फाल्गुन और ऋतु का नाम वसंत पडा। यद्यपि ऋतु चक्र के अनुसार वसत ऋतु चैत और वैशाख मासो का प्रतिनिधित्व करती है, परन्तु लोक जीवन मे उसके आगमन का उत्साह उमग और स्फूर्ति फाल्गुन मास से प्रारभ हो जाती है। होली का पर्व भी इसी मास मे आता है, जिसका एक नाम वसतोत्सव भी था। फागु शब्द फल्गु से व्यु-

---

१. कान्तिलाल व्यास, वसत विलास, भूमिका, ३७।

२. डॉ० सांडेसरा, 'प्राचीन फागु काव्य सग्रह' फागुनो साहित्य प्रकार, पृष्ठ ५३–५४।

त्पन्न है, जिसका सीधा अर्थ हुआ वसंत । इस आधार पर फागु की परिभाषा हुई — फागु वह काव्य है, जिसमे वसत की सुषमा और क्रीडाओ का वर्णन किया जाता है ।

इस सन्दर्भ मे १२ वी शती के हेमचन्द्र द्वारा प्रसगति 'फग्गु' शब्द का उल्लेख किया जाता है, और उसका अर्थ वसतोत्सव से लगाया जाता है ।[1] लेकिन सदर्भित अंश की पूरी पक्ति को पढ़कर देखा जाय तो ज्ञात होगा कि केवल 'फागु' शब्द का अर्थ वसतोत्सव नही है । वहाँ हेमचन्द्र ने 'फागु महुच्छणे' शब्द को प्रयुक्त किया है, जिसका सीधा अर्थ होता है—(फल्गु मधुक्षणे) । इस तथ्य से हमारी धारणा और भी पुष्ट हो जाती है कि फागु का अर्थ वसंत ही है ।[2] दूसरा प्रबल साक्ष्य आदि-फागु 'वसत विलास' का है, जिसमे वसत वर्णन को प्रमुखता दी गई है ।

सस्कृत के 'फल्गु' शब्द से 'हल्का' 'हका' अर्थ लगाकर जो व्यर्थ की खीचा-तानी की गई है[3], वह असगत है, परवर्ती फागु काव्य जैसे 'गणपति फागु', मोहिनी फागु', 'विरह देशाउरी फागु' जैसे कतिपय अपवादो को छोडकर, शेष फागु काव्यों मे विशिष्टतया जैन फागु काव्यो मे सयम मर्यादा और काव्य का सतुलन है । शृंगारिक और अनैतिक भावनाओ का विकास १५ वी और १६ वी शती मे हुआ जो कि समकालीन युगबोध और सामाजिक मूल्यो की देन थी । वह शृंगारिक प्रवृत्ति कृष्ण काव्य मे भी शनैः शनै पनप रही थी और जिसका पूर्ण विकास रीतिकालीन काव्य मे हुआ । यह प्रवृत्ति पूर्ववर्त्ती फागु काव्य जैसे 'जिनचद सूरि फाग', 'थूलिभद्द फागु' और 'नेमिनाथ फाग' मे परिलक्षित नही होती । 'वसंत

---

१. 'Hem Chandra in his Des inamamala explains it as'फग्गु महुच्छणे', 'Phaggu means the festival of spring' (M. C. Modi, Vasent vilasa Phagu, Introduction, p. 9)

२. फागुन महुच्छणे फलही ववणीफसुल फसुला मुक्के (देशी नाम माला पष्ठ वर्ग ८२), विवेच्य लेखक ने टीकाकार के अर्थ पर ध्यान दिया है, जिसने फागु का अर्थ ही वसतोत्सव कर दिया है ।)

इस शब्द का उल्लेख सरस्वती कठाभरण मे उसी अर्थ मे मिलता है :—
(अ) सा तइ सहत्थ दिण्ण फग्गुच्छणकद्दम थणच्छगे (५–२२९)
(आ) फग्गुच्छण चिक्खिल्ल ज तइ दिण्ण थणच्छंगे । (५–२२)
(इ) फागुमहे तरुणीओ गइगइ मुअहत्थ चिक्खिल्ले । (५–३०४)

३. फल्गु k. also means 'Light' and the poem is a much as 'it describes the light joys of youthful Coonples in spring.' (M. C. Modi, Vasant vilas phagu, Introduction, P. 9)

विलास फागु' जो शृंगार रस की निष्पत्ति की दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ फागु काव्य है उसमे भी वही शृंगारिक प्रवृत्तियां हैं, जो कालीदास के 'ऋतु संहार' और जयदेव के 'गीत गोविन्द' मे पाई जाती है। अतः यह धारणा निर्मूल है कि फागु काव्य 'हल्का' होता है। किसी किसी फागु काव्य मे तो हृदय की वह गहराई है कि जिसमे पैठने मे काफी समय लग सकता है।

यह सुनिश्चित है कि फागुओ को नृत्य और गायन के साथ फागुन मास मे प्रस्तुत किया जाता रहा होगा। अन्त.साक्ष्यो के आधार पर यह बात प्रमाणित हो जाती है :—

१. निशि वशि कीधो नारीये रे, मुरारी सुन्दर श्याम।
एणी परये फागण खेली रे, हैयानी तूरी हाम ॥[1]

यहाँ फाग को फागण ही कहा गया है, जो फाग और फागुन के अन्योन्याश्रय संबन्ध को प्रकट करता है।

२. फाग फागुणी गाऊ क्रिष्ण केरा, फल जोउ फोकट टलई फेरा।[2]
३ फागुण पवन हिलोहलई, फागु चवइ वर नारि, हे
सदेसडउ न पठ्यउ, वृंदावनह मझारि हे।[3]
४. फागुण फाग न मुगमइ, दमइति मदन शरीर।[4]
५ धण्नधन वसत तणी रति, धन-धन फागुण मास।[5]
६. विरहि वसंत सो आवीअ, फागण तरुणि गाइ।
राउ करूं रसीय घणु, सरसति तणइ पसाइ ॥[6]

इन अन्तःसाक्ष्यो के आधार पर यह स्पष्ट हो जाता है कि फागु का गायन फागुन मे होता था।[7] वसतागमन का उल्लास भी इसी मास मे मनाया जाता था और अब भी मनाया जाता है। इस नैकट्य का परिणाम हुआ कि फागु को फागुण का अभिधान प्राप्त हो गया। लेकिन छन्द सख्या २, ३, ४ से यह स्पष्ट हो जाता है कि दोनो का पृथक् पृथक् अस्तित्व था।

---

१. केशवदास कृत श्री कृष्णलीला काव्य, सर्ग १५, कडी २२।
२ चतुर्भुज, भ्रमरगीता, कडी ३।
३. अज्ञात कवि कृत, कान्हण बारहमास, कडी ९।
४. अज्ञात कवि कृत, नेमिनाथ फागु १६।
५. सोनीराम, वसंत विलास, ५०।
६. अज्ञात कवि कृत विरह देसाउरी फागु, कडी १६।
७. (अ) फाग गाइ सब गोरडी, जब आवइ मधुमास (जयवत सूरि कृत स्थूलिभद्र कोशा प्रेम विलास फाग, कडी ४४)
(आ) चैत्रिय पुनि मनि दिनि फाग रमि नरनाहू ए। (हीर कलश कृत सिंहासन बत्तीसी ह० प्र० पत्र ४०)

वसत ऋतु मे यह फागु गायन फाल्गुनी पूर्णिमा से चैत्रीय पूर्णिमा तक चला करता था। आगे चलकर यही नाम फगु से फाग हो गया। 'जम्बु स्वामी फाग', 'पुरुषोत्तम पाँच पाडव फाग', 'भारतेश्वर चक्रवर्ती फाग', 'रगसागर नेमि फाग', 'कीर्ति रत्न सूरि फाग', 'राणपूरमडन चतुर्मुख आदिनाथ फाग', 'वाहणनु फाग', 'स्थूलिभद्र-कोशाप्रेमविलास फाग', 'वासुपूज्य मनोरम फाग' और अध्यात्म फाग' आदि फागु शीर्षक इसके द्योतक है। फाग फब्द का प्रचलन १५ वी शती के पूर्वार्द्ध मे हुआ, क्योकि 'जम्बु स्वामी फाग', 'पुरुषोत्तम पाँच पाडव फाग' और 'भरतेश्वर चक्रवर्ती फाग' १५ वी शती के पूर्वार्द्ध और १४ वी शती के उत्तरार्द्ध की रचनायें हैं। समय के साथ फागु शब्द का अर्थ सकुचित हो गया। वसंत वर्णन और वसत क्रीडा से सम्बन्धित अर्थ अब शनैः शनै. फाल्गुनी पूर्णिमा को होने वाली फागुक्रीडा से सम्बन्धित काव्य को व्यवहृत होने लगा। श्री राणपुर मडल चतुर्मुख श्री आदिनाथ फाग के इस छन्द से यह स्पष्ट हो जाता है :—

वेणा वस वजावइए भावइं पचम राग,
रगभरि इक खेलइ गोलिइं जिणवर फाग।[1]

इसके बाद तो हिन्दी के अष्टछाप के कवियो ने फाग को पूर्णतया होली गीतो पर लागू कर दिया। फाग शब्द केवल होली गीतो के लिए प्रयुक्त नही हुआ, अपितु एक छन्द विशेष के लिए भी रूढ़ अर्थ के रूप मे व्यवहृत हुआ। वह छन्द था अन्तर्यमक वाला दोहा।

अविर्भाव :—

फागु काव्य की परम्परा सस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश मे उपलब्ध नही होती। हर्ष प्रणीत 'रत्नावली' नाटिका मे होली (फाग) खेलने का अवश्य उल्लेख है। तीसरी शती के कामसूत्र मे भी इस प्रकार का उल्लेख मिलता है, परन्तु यह उल्लेख होली का है न कि फागु काव्य का। इसका कारण यह था कि फागु काव्य लोक जीवन मे अपने लोक रूप के साथ प्रचलित था। संस्कृत काव्य सामतो काव्य था, तो प्राकृत और अपभ्रश पर प्रवुत्द जैन कवियो का रहा, जिन्होंने अपने धर्म, नीति दर्शन, तीर्थङ्करो के चरित्र, अलौकिक कार्यों, इन्द्रिय निग्रह और सयम श्री का वर्णन किया है। प्राचीन उल्लेखो से इतना अवश्य ज्ञात होता है कि वसत ऋतु मे राज परिवार, सामत वर्ग, एव सामान्य जनता आमोद प्रमोद के लिये उद्यानो मे जाती थी। उस समय जो गीत, लास्य, नाटक प्रभृति होने थे उसी से फागु काव्यो को प्रेरणा मिली। उस समय नाटको का प्रचलन भी व्यापक रूप से रहा होगा। महाकवि कालीदास का 'मालविकाग्निमित्रम्' नाटक और महाकवि हर्ष प्रणीत 'रत्नावली' नाटिका वसन्तोत्सव पर ही खेले गये थे। यह परम्परा शनैः

---

१. राणपुर मडन चतुर्भुज आदिनाथ फाग, कड़ी ७३।

शनै. विलुप्त हो गई। मुगल काल मे आकर इनमे गत्यावरोध सा आ गया, परन्तु आज भी इस अवसर पर स्वाग, नृत्य आदि प्रचलित हैं।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता हैं कि फागु, लोक जीवन से गृहीत होकर शिष्ट काव्य के रूप मे प्रयुक्त हुआ । नृत्यगीत और अभिनय का समावेश वसतोत्सव से हुआ। ऋतु परिवर्तन पर अभिनीत नाटको ने भी इसके विकास मे योग दिया।

वसत वर्णन, इस काव्य की प्रमुख विशेषता है। जिसका उद्भव सस्कृत के ऋतु काव्यो और सुभाषितो से एव प्राकृत के वसत वर्णन से हुआ। अपभ्रश का योग इसमे अधिक नही रहा है। अपभ्रश की अपेक्षा सस्कृत और प्राकृत का वसत वर्णन कही अधिक समृद्ध, मनोहर एव प्रभावोत्पादक है । दूसरे 'वसत विलास फागु' मे उद्धृत सस्कृत एव प्राकृत के सुभाषित इस बात के प्रतीक हैं कि फागु काव्यो का वसन्त वर्णन सस्कृत और प्राकृत के अधिक समीप एव ऋणी रहा है। यहा जैन फाग काव्यो के सम्बन्ध मे शंका उठाई जा सकती है । इसलिये उसके परिप्रेक्ष्य और परिवेश पर विचार करना सगत होगा।

जिस प्रकार परवर्त्ती सस्कृत कवियो ने व्यक्ति विशेष चाहे वह धीरोदात्त, धीर ललित अथवा धीर प्रशात नायक हो या गण्य-मान्य पुरुष हो, अथवा धर्म प्रवंत्तक हो, को लेकर चरित काव्य लिखना प्रारभ किया, उसी प्रकार प्राकृत मे भी इस परम्परा को ग्रहण किया गया। बाण भट्ट के 'हर्ष चरित्र' की तरह विमल सूरि ने 'पउम चरिय', वीरभद्र सूरि ने 'जम्बू चरिय', धनेश्वर ने 'सुरसुन्दरी चरिय', नेमिचन्द्र ने 'रयणचूड राय चरिय', गुण चन्द्र गणि ने 'पासणाह चरिय' और 'महावीर चरिय', देवेन्द्र सूरि ने 'सुदसणा चरिय' एव 'कण्ह चरिय' लिखे। यद्यपि प्राकृत काव्य मे विशुद्ध काव्य भी समान मात्रा मे लिखे गए थे। परन्तु अपभ्रश का तो अधिकाश काव्य चरित काव्य के रूप मे ही लिखा गया । केवल विद्यापति की रचनाये तथा अद्दहमाण (अब्दुल रहमान) कृत सदेशरासक' इसके अपवाद रहे है। इस प्रकार चरित काव्य का सस्कृत मे प्रयोग, प्राकृत मे विकास और अपभ्रश मे उसका चरम विकास रहा है।

अपभ्रश काव्य के विघटित होते ही जैन कवियो ने इस सम सामयिक नवीन सकुचनशील परिस्थिति मे नवमार्गान्वेषण किया। परिवर्तित एव विकसित होती हुई भाषा (विशिष्टतया प्राचीन गुजराती, प्राचीन राजस्थानी और पुरानी हिन्दी मे) कुछ चरित काव्य निबद्ध करने का प्रयास हुआ। बडे-बडे प्रबन्ध काव्य लिखने की क्षमता न होने से (इसमे विकसनशील भाषा बहुत कुछ उत्तरदायी है) अभेद्य क्षेत्रो मे जाने के लिए नए प्रयास हुए। इन अन्वेषणो मे उन्हे रास, फागु, चच्चंरी (चर्चरिका) और धमाल जैसे लोक काव्य रूप प्राप्त हुए और उनमें कवियो नवोन्मेषशालिनी प्रतिभा का परिचय दिया। जैसे जैसे शिष्ट काव्य मे इन लोक

काव्य रूपो को व्यवहृत किया गया, वैसे वैसे इनमे गरिमा और प्रयोग-सभूत अभिनवता आती गई। जैन और अजैन कवियो ने अपने-अपने अभिनव प्रयोग किये अजैन फागु काव्यो मे सामान्य नायक और नायिका भी काव्य विवेच्य बने। लेकिन कुछ समय पश्चात प्रयोग काल समाप्त हुआ और अभिव्यजना रूढि का विकास हुआ जो कि काव्य की चरम परिणति, अनुभूत सिद्ध देखी गई है।

फागु काव्य भी अपने मूल रूप मे लोक काव्य का एक रूप था जिसका मूल सबध वसंत वर्णन और वसत क्रीडा से था। संभवतया इस परम्परा के लौकिक फागु काव्य अधिक लिखे गए होगे। 'वसत विलास फागु' उसी समृद्ध परम्परा की एक कडी है। जैन फागुओ के सुरक्षित रहने का एक बहुत बडा कारण कट्टर धार्मिक भावना का होना रहा है। जैन कवियो ने उस परम्परा को धार्मिक मोड दिया और मुख्यतया चरित फागु लिखे।

जैन कवियो द्वारा अपने फागु काव्यो मे वसंत वर्णन गौण, तथा धार्मिक निरूपण और सयम श्री मे उसका पर्यवसान प्रमुख हो गया। परन्तु इन जैन कवियो ने उसकी मूल 'थीम' की रक्षा के लिये प्रेमगाथाओ, नारी सौन्दर्य, निरूपण, एव विरह व्यजना को अपना किंचित वर्ण्य विषय बनाया। नेमिनाथ-राजीमती और स्थूलिभद्र कोशा की कथाये इनकी उपजीव्य रही है।

अब तक लगभग १०० फागु काव्य उपलब्ध हो चुके है। इनमे से कुछ सम्पादित है। इनमे बाहुल्य जैन फागु काव्यो का ही है। फागुओ की रचना १४वी शताब्दी से लेकर १८वी शताब्दी तक अबाध रूप से होती रही है।

अब तक के प्राप्त फागुओ को निम्न प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है :—
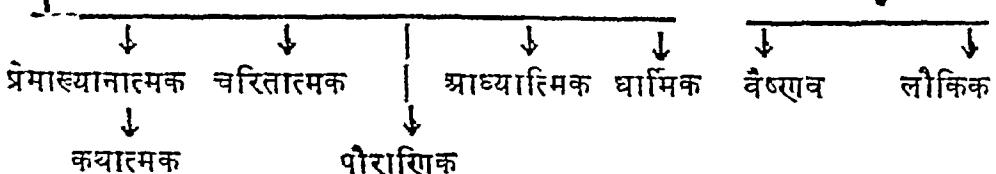
प्रवृत्तियाँ :—

यहां उन्ही प्रवृत्तियो का उल्लेख किया जा रहा है, जिनके प्रमाण अन्त. साक्ष्य, विशिष्टतया कवि निर्देश द्वारा प्राप्य है। ये प्रवृत्तियां वर्ण्य वस्तु से सम्बन्धित अधिक हैं, काव्यगत उपलब्धियो से कम। काव्य-उपलब्धियो पर बाद में विचार किया जायगा। इन वस्तुगत प्रवृत्तियों के आधार पर ही फागु काव्य के सामान्य रूप-रंग सम्बन्धी गठन को सहज समझा जा सकता है।

१. वसत वर्णन :—

फागु काव्य का वसन्त वर्णन से अन्योन्याश्रय का सम्बन्ध न होकर, वे एक दूसरे के विपर्यय हैं। अपने मूल मे फागु काव्य इसी विशिष्टता के साथ उद्भूत हुआ। शब्द की व्युत्पत्ति के प्रसग मे हम इसे देख चुके हैं। फागु काव्यो की परिभाषाएँ भी वसन्त वर्णन तत्व से समन्वित हैं[1]। कुछ फागु काव्य जैसे 'वसत विलास फागु' आदि का नामकरण वसन्त ऋतु के आधार पर किया गया है। कवियो के द्वारा निर्दिष्ट तथ्यो से यह धारणा पुष्ट हो जाती है।

१ गाइसु मास वसन्त हुऊँ मरहेसर नर विंदो।[2]

२. पहुतीय शिवरति समरति हव रितुतणीय वसन्त।[3]

३. फाग रमे प्रीय चाल्यो होलडी आवी नाह
पाए हो लागु बाल्हाताहरइ इणि रिति मेल्हेम जाई।[4]

४. माघ माधव रिति की मानि कत, रतिपति रमीइ राउ बसन्त।[5]

उपर्युक्त तथ्यो से स्पष्ट हो जाता है कि वसन्त वर्णन फागु काव्यो का अनिवार्य तत्व है। लेकिन यह कथन कतिपय जैन फागु काव्यो के साथ अपवाद की अपेक्षा रखता है। अधिकांश जैन फागु काव्यो मे, विशिष्टतया कृष्णर्षीय जयसिंह सूरि कृत प्रथम 'नेमिनाथ फागु', प्रसन्न चन्द्र सूरि कृत 'रावणि पार्श्वनाथ फागु', अज्ञात कवि कृत 'जम्बु स्वामी फागु' मे तथा अन्य फागुओ मे भी वसन्त वर्णन उपलब्ध होता है, लेकिन कुछ जैन फागु काव्य जैसे 'थूलि भद्द फागु' और राजशेखर सूरि कृत 'नेमिनाथ फागु' मे यह वसन्त वर्णन नही है। थूलिभद्द फागु मे तो वसन्त के स्थान पर वर्षा वर्णन है। परन्तु इस कतिपय काव्यो से वसन्त की सार्वभौमिकता पर कोई प्रभाव नही पडता, क्योकि इनसे पूर्ववर्ती एव सबसे प्राचीन जैन फागु काव्य मे वसन्त वर्णन किया गया है। इस दृष्टि से जिनपद्म सूरि और राजशेखर सूरि के प्रयास प्रयोग साध्य है।

---

1 (a) The Phagu is so called because it mainly deals with the joys and pleaseres of spring time which is at its best in the month of Phaguna. (Kantilal Vyas, Vasanta Vilas, 1942)
(b) A Phagu is a poem light and amorons in tone describing the beauties of spring and amours of youthful lovers (Introduction, Vasant Vilas Phagu–M.C Modi)

२. भरतेश्वर चक्रवर्त्ती फाग १।

३ वसत विलास फागु, २।

४. वसत विलास (सोनी राम), ६।

५. अज्ञात कवि कृत चुपई फागु, १६।

जैन फागु काव्यो मे वसन्त वर्णन किया अवश्य गया है, परन्तु वह उतना मादक, प्रभावोत्पादक, उद्दीपक, मोहक और स्फूर्तिजनक नही है, जितना कि अजैन फागु काव्यो मे। जैन धर्म के प्रवृत्यात्मक आयामो मे वह वर्णन मर्यादित और सयमित हो गया हो, ऐसी वात नही है, वस्तुतः वह वर्णन भावना शून्य होकर परम्परा निर्वाह के लिए किया गया है। नाम-परिगणना पद्यति और पुनरावृति का दोष इन फागुओ के वसन्त निरूपण मे दृष्टि-गोचर होता है। वस्तुतः वसत वर्णन मैनरिजम (अभिव्यना रुढि) का प्रतीक वन गया है क्योकि 'वर्णरत्नाकर' जैसे ग्रथो ने काव्य रूढ़ियाँ प्रचलित की थी। उन काव्य रूढियो से सृजन प्रक्रिया में गत्य-वरोध आ गया। यह सुनिश्चित है कि यह वसन्त वर्णन अनुभूत्यात्मक होने की अपेक्षा परम्परात्मक है, और जिसमे कवियो की सहृदयता, भावुकता और कल्पना की प्रखर मेधा-शक्ति कही भी परिलक्षित नही होती।

२. वसत क्रीडा—

फागुओ का दूसरी प्रवृति और वर्ण्य विषय वसन्त क्रीडा है। युग के अनुरूप वसन्त क्रीडा का रूप भी वैविध्य पूर्ण रहा है। फाग-क्रीडा भी इसका एक अंग वन गई थी। नायक नायिकाओ की वसत कालीन क्रीडाओ का वर्णन इन फागु काव्यो मे प्रचुर मात्रा मे मिलता है। कवियो के उल्लेखो से यह स्पष्ट हो जाता है:—

१. अहे वसन्त क्रीडातीह आतकरि, आणद मुनिनि पूरि,
मनरगि एम वोलि, श्रीगुण चन्द सूरि।[1]

२. हरि हलहरसउं नेमि पहु खेलइं मास वसन्तो,
हावि भावि भिज्जइ नही य भामिणि माहि भमंतो।[2]

३. वसत ऋतुराज खेलइ, गेलिइं गाती फागु।[3]

४. ए फागु उछरग रमइ जे माम वसन्ते,
तिणि मणिनाण पहाण कीत्ति महियल पसरते।[4]

५ फागुण रति वसन्त षेलीयरे हईडिहरप मंनमां नह।[5]

६. आज सखी मन कपए, तालावेलि करेई,
फागु खेलण दिन आवीउ, प्रिय देसांतर लेइ।[6]

---

१. गुणचद्रसूरी, वसत फागु, कडी, १६।
२. राजशेखर सूरि कृत नेमिनाथ फागु, कडी ४।
३. हेमरत्नसूरी फागु, १७।
४. कीतिरत्न सूरि फागु, कड़ी ३६।
५. अज्ञात कवि कृत नेमिनाथ फागु, कडी १६।
६ विहर देमाहरी फागु, १।

७, फगु वसंतिजि खेलइ, वेलइ सुगुन विधान,
विजयवत ते छाजइ, राजइ तिलक समान।[1]

इन सभी दृष्टान्तो से स्पष्ट हो जाता है कि काव्य की महत्वपूर्ण विशेषता वसन्त क्रीडा वर्णन ही है। जैन और जैनेतर कवियो ने कतिपय पूर्वोल्लिखित अपवादो को छोडकर, इस प्रवृत्ति को अपनाया है। जैन और जैनेतर फागु कवियों के वसत क्रीडा वर्णन मे उतनी दूरी है जितनी उनकी मान्यताओ एव परिवेश मे। धार्मिक कुण्ठा ने इन जैन फागु कवियो की सजग प्रतिभा को उभरने नही दिया।

वसत क्रीडा का आशय वसत मे होने वाले उल्लासो, नायक-नायिका के केलि विलास, रति-क्रीडा, जल-विहार, जन-विहार और उद्यान गमन से है। फागु कवियो ने अपने अपने दृष्टिकोणो से इन क्रीड़ाओ का वर्णन किया है।

३. गेय रूपक :—

फागु काव्यो की रचना मुख्यतया अभिनय नृत्य, और गायन के लिए हुई। प्रारम्भिक काल मे ये सामान्य जनता द्वारा गाये जाते रहे होगे। कथा प्रधान फागुओ मे तो अभिनय तत्व अवश्य रहा होगा। अभिनय और नृत्य सम्बन्धी उल्लेख इस प्रकार है:—

१. खरतरगच्छि जिण पदमसूरि किए फागु रमेवउ,
खेला नाचई चैत्र मासि रगिहि गावेवउ।[2]

२. तिणि पुरि पासह वर भुवणि, चालहु चहु दिसिनारे,
फाग छदि अम्हि खेलिसु मारु जुईहु संसारे[3]

३. अरे समुधरु भणइ, सोहावणउ फागु खेलउ विचार।[4]

४. पीण पयोहर अपच्छर गूजर धरतीय नारि,
फागु खेलइ ते फरि फरिनेमि जिणेसर वारि।[5]

५. फागु खेलइ मन रंगिहि हसगमणि मृगनयणि।[6]

६ जे खेलइ ते अर्हपद पामइ पूरी।[7]

---

१. अज्ञात कवि कृत जबुस्वामी फाग, कडी ५९।

२. जिन पद्मसूरि, स्थूलिभद्र फागु, २७।

३. प्रसन्न सूरि कृत रावणपार्श्वनाथ फागु, ६१।

४. समधुर, नेमिनाथ फागु २८।

५. पद्म, नेमिनाथ फागु, ५।

६ पद्म, नेमिनाथ फागु ९।

७. जयशेखर सूरि, प्रथम नेमिनाथ फागु ५७।

यहाँ फागु खेलइ का अर्थ अभिनय करने से है । गेय तत्व तो फागु काव्य का प्रमुख अ ग है । उसके साथ वाद्य यन्त्रो तथा ताली के माध्यम से लय दी जाती थी ।

१ वाजे झाझ पखाज ने सोहेली रमे फाग,
ताली देई तरुणी गाय नवला रे राग ।[1]

२. गाइ अभिनव फाग, साचवइ श्री राग ।[2]

३. फागुणी पावन हिलोहलइ, फागु चवइवर नारी है ।[3]

४. फाग फागुणी गाऊँ त्रिप्पण केरा, फलजोउ फोकट टलइ फेरा ।[4]

५. वेणा यन्त्र करइ अलि विणि, करइ गानि ते सविसुर रमणी,
मृदग सर मण्डल वाजत, भरर भाव भरा रमइ वसन्त ॥[5]

६. फाग गाइ सवि गोरडी जव आवइ मधुमास ।[6]

७. एह फाग जे गाइसिइ, तेह धरि मगल च्यार,
श्री जिन शासनि गाइसिउं लाभइ सुख अपार ।[7]

८. धनु-धनु ते गुणवंतु वसत विलासु जि गाइं ।[8]

उपर्युक्त उद्धरणो से स्पष्ट हो जाता है कि गेय तत्व जैन और जैनेतर फागु काव्यो का प्रमुख अ ग रहा है । वसत राग, श्री राग, मल्हार राग[9] आदि राग इनके गायन मे प्रयुक्त होते थे । जैन धर्म की दृष्टि से चरितात्मक फागु काव्य का गायन मगल सुख आदि को प्रदान करने वाला और पापो का विनाश करने वाला है ।[10]

---

१. प्रेमानन्द कृत 'भास', ८९-९ ।
२. नारायण, ४३ ।
३. अज्ञात कवि कृत कान्हण वारहमास, ९ ।
४. चतुर्भुज कृत भ्रमर गीता ।
५. अज्ञात कवि कृत चुपाई फागु, ३७ ।
६. जयवत सूरि, स्थूलिभद्र कोशा प्रेम विलास फाग, ४४ ।
७. वाहणनु फाग, १२ ।
८. वसत विलास फागु, ८६ ।
९. राजशेखर सूरि कृत नेमिनाथ फागु, २७ ।
१०. फागुरे सुणतह-सुणतह, पापू पणासइ दूरि ।
—कृष्णर्षीय जयसिंह सूरि कृत द्वितीय नेमिनाथ फागु ५४ ।

फागु काव्य विनोद के लिए लिखे जाते थे और विनोद के माध्यम थे—रूपक, नृत्य एव गायन। जय शेखर सूरि ने अपने फागु मे इसे स्पष्ट किया है—

कवितु विनोदिहि सिरिजय सेहर सूरि।[1]

४. काव्यात्मक प्रवृत्तिया :—

काव्यात्मकता ही फागु काव्यो की मूल प्रवृत्ति है। भाव-निरूपण, अलकार और छन्द सयोजना, प्रकृतिपरिवेश, सौन्दर्य के नये आयाम, मगलाचार का विधान, शृंगार- सयोजना, और उदात्तिकरण के समावेश से फागु, काव्य लोक काव्य के धरातल से उठकर शिष्ट काव्य की कोटि मे आते हैं। अन्य गौण काव्यात्मक प्रवृत्तियो की अपेक्षा उन्ही प्रवृत्तियो को यहां विवेच्य बनाया जा रहा है, जो प्रमुख हैं।

अ–विरह व्यजना :—

अधिकांश फागु काव्यो मे नायिका के वियोगजन्यावस्था के परिवेश को ही प्रस्तुत किया गया है। यह परिवेश, जैन और जैनेतर दोनो प्रकार की कृत्तियो मे पाया जाता है। जैनेतर फागु काव्यो मे जहाँ नायिका, गोपिका या राधा का विरह वर्णन है वहा जैन काव्यो मे राजीमती या राजूल का विरह-वर्णन किया गया है। प्रियतम के प्रवासगमनोपरान्त मधुमास आ जाता है ? विरहिणी की वेदना कोयल की मधुर आवाज सुनकर, आम्र मन्जरी, पारिजात, चम्पक, वकुल और पलाश को मुकुलित देखकर, उद्दीप्त हो जाती है। इस उद्दीप विभावान्तर्गत कवि ने विरहिणियो के उद्‌गारो की मार्मिक व्यजना की है। ऐसे परिवेश मे प्रिय वियोग अत्यन्त दुःखदायी प्रतीत होता है। विरहिणियां वायस को बुलाकर उमसे अनुनय विनय करती है :—

देसु कपूरची वामिरे वासि वली सउ एउ,
सोवन चाच निरूपम रूपम पांखुडी बेउ।[2]

कही कही तो नायिका की उक्तियां वडी ही तर्क पूर्ण और अनुभूति परक है—

चचला विण किमो चन्द्रणो मोती विण किमु जुहार
नगर किसो विण नाइका प्रीउ विण सेज शृंगार।

हंसलडा विण सर किसी कोइल विण किसुवन
वालभ विण किसी गोठणी जांणज्यो जगम्र जीवन॥[3]

---

१. जयशेखर सूरि, प्रथम नेमिनाथ फागु, कडी ५७।
२. वसंत विलास फागु ४८।
३. वसन्त विलास (सोनीराम), २०।

आ–परिवेश सज्जा:—

परिवेश चाहे प्रकृति का हो अथवा स्थल विशेष का उसको सज्जा देने में कवियो ने अपनी ओर से कोई कसर नही छोड़ी है। वासन्तीय परिवेश के बारे मे संकेत दिया जा चुका है। वर्षा वर्णन भी 'थूलिभद्द फागु' मे सुन्दर ढङ्ग से किया गया है—

झिरमिर झिरमिर ए मेहा वरिसन्ति।
खलहल खलहल ए वाहला वहन्ति ॥
झवझव झवझव झवझव ए वीजुलिए झवकइ,
थरहर थरहर थरहर ए, विरहिनि मन कंपइ ।[1]

'वसन्त विलास फागु' मे वनान्तर्गत कदली गृह और दीर्घ मण्डपमाल निर्मित परिवेश की सज्जा भी कम मोहक नही है:—

खेलनवावि सुखालीय जालीअ गुपि विश्राम,
मृगमदपूरि कपूरहि पूरिया जलि अभिराम।
रंगभूमी सजकारीअ झारीअ कुंकुम घोल,
सोवन सांकल साधीअ चम्पक डोलि ।[2]

इ–ध्वन्यात्मकता :—

लय और नाद का आकर्षण उत्पन्न करने के लिए और गायन में माधुर्य हेतु, इन कवियो ने अपने फागुओ मे नाद सौन्दर्य और ध्वन्यात्मकता को प्रमुखता दी है। इसके लिए इनका शब्द विन्यास और चयन जडिया जैसा है—

१. झिरमिर झिरमिर झिरमिर ए मेहा वरसन्ति (स्थूलिभद्र फागु)।
२. रिमझिम रिमझिम रिमझिम ए पयनेउर जुयली (नेमिनाथ फागु)।

–ई सौंदर्य बोध :—

फागुकारो का सौन्दर्य बोध अधिक सजग एवं चेतनाशील था। यह सौन्दर्य, विशिष्टतया नारी सौन्दर्य बोध परम्परागत न होकर इनकी मौलिक उद्भवनाओं द्वारा निःसृत था। 'थूलिभद्द फागु' मे कोशा के नखशिख का वर्णन कवि ने अलंकृत शैली मे किया है। यह शृंङ्गार निरूपण आलम्बन विभावान्तर्गत आता है।

मयण खग्ग जिम लहलहन्त जसु वेणी दण्डो,
सरलउ तरलउ श्यामलउ रोमावलि दण्डो

---

१. थूलि भद्द फागु, ६-७।
२. वसन्त विलास (फागु), ९-१०।

तुङ्ग पयोधर उल्लसइ सिंगार थपक्का,
कुसुम वाणि निय अमिय कुंभ किरथापाणि मुक्का ॥

इस सौन्दर्य बोध मे कवि की शैली ने भी अपना चमत्कार प्रदर्शित किया है कोशा की श्यामल वेणी, कामदेव के श्याम खड्ग सदृश लहलहा रही है। उसकी सरल तरल और श्यामल रोमावलि सुशोभित हो रही थी। उत्तुङ्ग पयोधर ऐसे प्रतीत हो रहे हैं जैसे शृंङ्गार रूपी पुष्प के स्तवक हो अथवा कामदेव ने अमृत कलशो को लाकर रख दिया हो।

५. धार्मिकता--

फागुकारो ने वैयक्तिक मान्यताओ के आधार पर विभिन्न मोड दिये है। यद्यपि वसन्त वर्णन फागुओ का प्रमुख विवेच्य विषय था, परन्तु शनैः शनः वसन्त वर्णन गौण होता गया। वह केवल रूढि के रूप मे प्रयुक्त किया जाने लगा। जैन फागुकारो ने फागुओ को धार्मिक मोड दिया। जिणस्तवन, प्रकृति श्री और सासारिक विभूति पर सयम श्री की विजय, इन्द्रिय निग्रह, अपरिग्रह, सांसारिक उपादानो से असपृक्त होने की वृत्ति का ही अधिक वर्णन किया। अपने फागुओं को सरस बनाने के लिए स्थूलिभद्र कोशा और नेमिनाथ राजुल की कथा को उपजीव्य बनाया गया। नेमिनाथ और राजीमती की कथा इतनी लोकप्रिय हुई कि लगभग दो दर्जन फागु काव्य इस कथा से सम्बन्धित लिखे गये। इनके अलावा जैन कवियो ने कुछ ऐसे फागु काव्य लिखे, जो आध्यात्मिक विषयो से सम्बन्ध होते थे अथवा किसी तीर्थ की महिमा-स्तवन से सम्बद्ध। विवेच्य विषयो का वैविध्य जैन फागुकारो मे बहुत अधिक पाया जाता है। लेकिन अन्त सभी का सयम श्री मे होता है।

वैष्णव फागुकारो ने कृष्ण-गोपिका और कृष्ण-रुक्मिणी को अपना विवेच्य बनाया। लौकिक फागु अवश्य ही अपनी परम्परा पर स्थिर रहे। ४०० वर्षों के दीर्घ अन्तराल मे फागु काव्यो की रचना होती रही, जिससे आभास होता है कि यह काव्य रूप यथेष्ट लोकप्रिय रहा होगा।। फागुओ का आकार कही लघु है, कही वृहत्। परन्तु यह सुनिश्चित है कि फागु काव्यो मे वह गहनता, व्यापक अनुभूति, भावोर्मियों का उद्वेलन नही आ पाया जो किसी काव्य-रूप मे अपेक्षित है।

आ

हिन्दी की आदिकालीन फागु कृत्तियां

फागु काव्यो की उपजीव्य लोक परम्परा और साहित्यिक परम्परा रही है, लेकिन जिन काव्य प्रक्रियाओ और सवेदनाओ को इस काव्य रूप मे स्थान मिला, वे उन्हे शिष्ट काव्य की कोटि मे वैठा देती हैं। सस्कृत, प्राकृत, और अपभ्र श काव्य मे फागु काव्य-रूप का किसी प्रकार का उल्लेख नही मिलता है। अपभ्र शोत्तर काल मे फागु, रास, चर्च्चरी और धमाल जैसे काव्य-रूपो का प्रचलन हुआ है। लोक परम्परा से अनुस्यूत होने के कारण ये काव्य-रूप अवश्य ही ऋद्ध एव लोक प्रिय रहे होगे।

वसन्तकालीन गेय रूपको मे फागु का स्थान प्रमुख रहा है। वसन्त वर्णन और वसन्त-क्रीडा-वर्णन ही फागु काव्य के प्रमुख कार्य विषय रहे, परन्तु जैन कवियो ने चारित्रिक सयम, इन्द्रिय निग्रह, ब्रह्मचर्य, चारित्रिक उदात्तिकरण, एवं तीर्थङ्करो और धार्मिक पुस्तको की महिमा-गान हेतु फागु काव्य को प्रयुक्त कर वर्ण्य-विषय का धार्मिकीकरण कर दिया, जवकि जैनेतर फागु काव्य जैसे 'वसन्त विलास फागु' मे इस परम्परा को मूल रूप मे अक्षुण्ण वनाये रखने का प्रयास किया गया। सामान्य रूप से फागु काव्य इन लक्षणो से युक्त होते हैं :—

१. इनमे वसन्त-निरूपण किया जाता है।
२. इनमे विप्रलंभ एवं सयोग, दोनो दृष्टियो से श्रृंगार-सयोजना होती है।
३. इनमे शैली-संव्यूहन अलंकृत पद्धति पर होता है।
४. गेय तत्व से युक्त होने के कारण इनमे लयात्मकता और ध्वन्यात्मकता, शब्द एवं नाद सौंदर्य का विशेष ध्यान रखा जाता है।
५. वाद्य नृत्य के साथ ही ये गेय भी होते हैं।

हिन्दी का आदिकाल इन फागु काव्यो का उत्प्रेरक एवं उपजीव्य रहा है। इस काल मे चार फागुओ का अस्तित्व मिलता है:

१. वसंत विलास
२. जिनचन्द्र सूरि फागु
३. जिनपदमसूरि कृत सिरी थूलिभद्द फागु
४. राजशेखर सूरि कृत नेमिनाथ फागु

१. वसत विलास :—

१. **कृति परिचय :** अपने समय में, परवर्त्ती युग मे, और आधुनिक काल मे भी 'वसत विलास' बहुत लोकप्रिय रहा है। १६ वी शती के अलावा विभिन्न समयो पर की गयी प्रतिलिपियाँ और १६ वी शती की प्रति के आधार पर बनाये गये चित्र, इसकी उत्तरोतर लोकप्रियता के प्रतीक हैं। इसकी चुम्बकीय शक्ति की नियति से इसे अनेक बार सम्पादित होने के लिए बाध्य होना पडा है।[1] चित्रकला की दृष्टि से भी समय-समय पर इस कृति पर विचार हुआ है।

२. फागुकार :—

अनेक व्यक्तियो द्वारा सम्पादित तथा विचारित होने के कारण कृतिकार सम्वन्धी अटकल-वैविध्य होना स्वाभाविक है। कृतिकार सम्वन्धी अब तक के दिये गये विचार है :—

१. साराभाई नवाव ने अपने एक आलेख मे यह स्थापना की है कि सचित्र वसत विलास का प्रतिलिपिकार आचार्य रत्नागर ही इस कृति का लेखक है।[2]

२. कन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शी ने स्थापना की है कि वसंत विलास फागु की रचना जैन साधु नतर्षि द्वारा हुई है।[3]

३. कान्तिलाल बलदेवराम व्यास ने सकेत दिवा है कि इस कृति के रचयिता गुणवत है।[4]

४. मुनि जिन विजय साधिकार कहते हैं कि इसके रचयिता मुज हैं।[5]

लेकिन ये सभी मत भ्रामक हैं। नवाव ने सम्वत् १५०८ की प्रतिलिपि को मूल प्रति समझ लिया। अन्य प्रतिलिपियो में इस प्रतिलिपिकार का रचयिता के रूप मे कोई उल्लेख नही हैं। पुनः वसत विलास १३–१४ वी शती की कृति है, न कि १६ वी शती की। श्री मुन्शी ने नतर्षि का अर्थ भी भ्रमपूर्ण लिया है, उसका सन्दर्भित अर्थ है जो ऋषियो द्वारा पूज्य है। दूसरे, सुभाषित मे आया यह छन्द

---

१. केशवलाल हर्षदराय ध्रुव द्वारा तीन बार, व्यास (कान्तिलालबलदेव राम) द्वारा तीन बार, मोदी (मधुसूदन चिमनलाल) ने एक बार, डा० नार्मन ब्राउन ने एक बार, और डा० माताप्रसाद गुप्त ने इसका सम्पादन एक बार किया है।

२. फार्वस गुजराती (त्रैमासिक), जनवरी–मार्च, १९३७।

३. फार्वस गुजराती (त्रैमासिक), जनवरी– मार्च, १९३७।

४. वसंत विलास (त्रिपाठी संस्करण), भूमिका, २९।

५. वसत विलास (व्यास द्वारा सम्पादित), प्राक्कथन।

सस्कृत का एक सुभाषित है, जिसमें नर्तषि, कृष्ण का विशेषण है, वसंत विलास के रचयिता ने सस्कृत सुभाषितो को उद्धृत भर किया है, वनाया नही। फिर नर्तषि नामक किसी कवि का कोई विवरण भी नही मिलता।

श्री व्यास ने 'गुणवत' नाम सुझाया है, वह भी भ्रामक है, क्योकि 'गुणवत' का अर्थ गुणवान व्यक्ति है। इस प्रकार का उल्लेख 'जम्बु स्वामी फाग' मे मिलता है, जिसमे 'विजयवत' शब्द आया है, जिसका अर्थ विजय का वरण करने वालो से है। फिर गुणवत कोई कवि नही हुआ है।

मुनि जिनविजय ने 'मुंज' नाम प्रस्तावित किया है, जो 'मुंजवयण' से गृहीत है। कही-कही सस्कृत के 'मंजु' को 'मुंज' लिख दिया गया है, यदि ऐसा प्रमाद सम्भावित है वो 'मुंजवयण' का आशय होगा, सुन्दर वचन। परन्तु जैसा कि डा० माताप्रसाद गुप्त का मत है 'मुंज', मुंज्ज' या 'मुज्झ' है, जिसका अर्थ है मेरे। अतः यह नाम भी अटकल का परिणाम है। फिर मुनि जिनविजय के पास अपने कथन का अन्तःसाक्ष्य तथा वाह्य साक्ष्य नही है, केवल अर्थ कल्पना का आधार उन्होने लिया है।

निष्कर्ष यह है, फागुकार अज्ञात है।

३. जैन अजैन विवाद :—

उक्त फागु का रचयिता जैन है अथवा अजैन, यह भी काफी विवादग्रस्त विषय रहा है। सर्व प्रथम श्री ध्रुव ने यह उल्लेख किया कि वसत विलास का रचयिता अजैन होना चाहिए, जिसने जीवन के आनन्दो का उपभोग किया हो। इसी तथ्य को तोड मरोड कर और भ्रामक तथ्यो का पुट देकर साराभाई नवाब ने निष्कर्ष निकाले :—

१. वसत विलास का रचयिता जैन था।
२. आचार्य रत्नागर इसके रचयिता हैं।

रचयिता के बारे मे पहले ही विचार किया जा चुका है। दूसरे, साराभाई की आधार भूमि पूर्णतया भ्रान्ति मूलक थी। ध्रुव ने एक सामान्य प्रवृत्ति को निर्दे शित किया था कि काव्य का परिवेश प्रेम परिधि से आवृत है। अतः इसका रचयिता वही हो सकता है जिसने जीवन के समग्र सुखो और केलि विलास की आनन्दानुभूति की हो।

वसन्त विलास इतना प्रसिद्ध हुआ कि वह जैन और अजैन सहृदयों पर छाया रहा। जैन भण्डारों मे वसन्त विलास को स्थान मिला। रत्नमन्दिर गणि ने इसको अपनी कृति मे उद्धृत किया। इसे जैन-कृति वनाने का व्यामोह भी इसकी लोक-प्रियता के कारण रहा है।

कृति जैनेतर ही है, क्योकि मङ्गलाचरण, काव्य के कथानक, यहाँ तक कि पुष्पिका मे किसी प्रकार का जैन प्रभाव नही है। जैन फागुओ की तरह वसत विलास मे किसी जैन तीर्थङ्कर या जैन पुराणों के किसी महापुरुष का वर्णन नही किया गया है, यहा तक कि मङ्गलाचरण मे जैन-सिद्धो या तीर्थङ्करों का वर्णन नही मिलता। इसके विपरीत अजैन-पद्धति के अनुसार सरस्वती एवं गणपति की अर्चना की गयी है।

इसके साथ ही वसन्तविलास मे उद्धृत सस्कृत सुभाषित 'नैषधचरित', 'शिशुपालवध', 'कुमारसम्भव', 'शाकुन्तल', और 'अमरूशतक' से लिये गये हैं, जो अजैन कृतियां हैं, जबकि किसी भी जैन कृति से एक भी उदाहरण नही लिया गया है।

निष्कर्प यह है रचनाकार के धर्म, जाति, निवास स्थान के बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता है। रचनाकार अपने बारे मे चुप रहा है। अन्तःसाक्ष्य के आधार पर ये तथ्य सामने आते हैं:—

(१) कृतिकार जैन न होकर, अजैन ही है।
(२) संस्कृत का वह प्रकाण्ड विद्वान और सुभाषितो का प्रेमी रहा है।
(३) वह प्रकृति मे भावप्रवण और जीवन के प्रति उल्लास से परिपूर्ण रहा है। सहृदयता, जीवन मूल्यो के प्रति आस्था, और जागरूकता, उसके चरित्र की विशेषताएं रही हैं।
(४) कवि और कृति पर्याप्त लोकप्रिय रहे हैं। चित्रकला से उसकी सज्जा, तथा अनेक प्रतिलिपियाँ होने से इस तथ्य की पुष्टि हो जाती है।

४. रचनाकाल :—

कुछ मत रचनाकाल सम्बन्धी प्रतिपादित कए गए हैं वे इस प्रकार हैं:—

(१) ध्रुव का मत है कि वसत विलास की रचना १५ वी शती के दूसरे चरण (१४५०) मे हुई, यह प्रमाण रत्नमन्दिर-गणी की उपदेश तरगिणी से प्राप्त होता है।[१]
(२) व्यास का मत है, इस कृति का रचना काल १५ वीं शती का प्रथम चरण है।[२]

---

१. Prachin Gurjar Kavya.

२. 'I, Therefore, assigned, Vasant Vilas to the first quarter of the fifteenth century v s.' (K.B. Vyas, Vasant Vilas Fagu, a further study).

(३) सांडेसरा का मत है— कृति का रचनाकाल सम्वत् १४०० से लेकर १४५० तक ठहरता हैं।

ध्रुव, व्यास, और साडेसरा का मत १५०८ की तिथि और 'उपदेशतरगिणी' के रचनाकाल से अनुप्रेरित है। श्री व्यास का भाषा-वैज्ञानिक विवेचन इस तिथि को १४०० के समीप खीच लाता है। कुछ समकालीन कृतियो की भाषा से तुलनात्मक अध्ययन के उपरान्त व्यास इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि रत्नमन्दिरगणि के समय (स० १५१७) तक कृति ने पर्याप्त लोकप्रियता प्राप्त करली थी। इससे यह परिणाम निकाला जा सकता है कि वसन्त विलास की रचना स० १४०० के आस-पास हुई थी।

ध्रुव का मत भी इसी आधार पर बना था। सांडेसरा के मत मे कोई मौलिकता नही थी। डॉ० माता प्रसाद गुप्त का मत है कि स० १५०८ की प्रति प्राचीनतम होने से रचना तिथि की एक सीमा है। यह पाठ प्रक्षेपपूर्ण हो सकता है, क्योकि यही सबसे बडा है और पाठान्तरो की दृष्टि से अनेक स्थलो पर उससे भिन्न प्रतियो के पाठ अधिक प्राचीन ज्ञात होते हैं, इसलिए रचना का समय सामान्यतः उससे पहले का होना चाहिये, यह स्पष्ट है।

इसी आधार पर डॉ० गुप्त ने कहा है—"पूरी रचना आमोद-प्रमोद और क्रीडापूर्ण नागरिक जीवन का ऐसा चित्र उपस्थित करती है जो मुख्य हिन्दी प्रदेश मे १२५० वि० की जयचन्द पर मुहम्मद गोरी की विजय के अनन्तर और गुजरात मे १३५६ वि० की अलाउद्दीन के सेनापति उलुगखा की विजय के अनन्तर इस्लामी शासन के स्थापित होने पर समाप्त हो गया था। इसलिए रचना अधिक से अधिक विक्रमीय १४ वी शती के मध्य ईसवी १३ वी शती की होनी चाहिए।'[२]............ 'सभव है उसकी भाषा का प्राप्त रूप इस परिणाम को स्वीकार करने मे बाधक हो। किन्तु भाषा प्रतिलिपि परम्परा मे घिसकर धीरे-धीरे अधिकाधिक आधुनिक होती जाती है, इसलिए भाषा का साक्ष्य प्राप्त-परिणाम को स्वीकार करने मे बाधक नही होना चाहिये।[३]

इस प्रकार डॉ गुप्त का विचार वसंत विलास' की रचना-तिथि को और भी पहले निर्धारित करने का है। डॉ० गुप्त की प्रस्तावित धारणा के सूत्र पहले वाले सूत्रो से कही अधिक पुष्ट हैं।

---

१. A review of Vasant Vilas, Budhi Prakash, July-Sept. 1843, P. 168.

२. भारतीय साहित्य, अप्रेल १९६४, वर्ष ९, अंक २, वसंत विलास, पृ० ७०–७१।

३. भारतीय साहित्य, अप्रेल १९६४, वर्ष, अक २, वसंत विलास, पृ० ७४।

५. विषय परिसर :— वसन्त विलास का प्रारम्भ मंगलाचरण के छन्द से किया गया है, जिसमे हसवाहिनी और वीणाधारणी सरस्वती की अर्चना की गयी है। इसके वाद वसन्त के उद्दीपन रूप को परिपार्श्वीय रूप मे प्रस्तुत किया गया है। इसी परिवेश मे वन के अन्दर कदलीगृह और दीर्घ मण्डप निर्मित किया गया है। यह परिवेश अत्यन्त मोहक एव विराट है :—

खेलन वावि सुखालीय जालीअ गुष विश्राम।
मृगमद पूरि कपूरिहि पूरीया जल अभिराम॥
रगभूमी सजकारीअ झारीअ कुंकुम घोल।
सोवन सांकल सांधीय बांधीअ चंपक दोल॥[१]

[उस वन मे भली भांति घुली हुई क्रीड़ा-वापी मे जाल-गवाक्ष तथा विश्राम (मच) है और वह कर्पूर स पूरित मृगमद (कस्तूरी) के अभिराम जल से पूरित की गयी हैं। रगभूमि (क्रीड भूमि) की सज्जा की गई है। कु कुम घोलकर उसमे छिडका गया है। स्वर्ण की श्रृ खला से चपको से सुसज्जित दोला को मजवूती से वाधा गया है]।

ऐसे परिवेश मे जितने कामीजन है, विलसते हैं। काम के समान अल-वेसरो (अल्प-वयसो) ने वेश धारण कर रखा है। इस स्थल पर कवि ने युवक युवतियो के अवाध विलास और आमोद-प्रमोद का विशद वर्णन किया है। इस वर्णन मे कवि का मन वहुत रमा है। उसकी सृजन-प्रक्रिया और सौंदर्य-बोध, विलास के विभिन्न कोणो मे रूपायित हुआ है। शृ गार का कोई भी कोना कवि की दृष्टि से अछूता नही रहा है। उम क्रीडा भूमि में कामदेव (नृप) का शासन है, जिसका कवि ने लम्वा रूपक वाधा है :—

कुसुम तणु करि वणुंहरे गुणह भमरला माल।
लख लाघवि नवि चूकइ मूंकई शर सुकुमाल॥
मयणु जी वयणु निरोपइ लोपइ कोइ न आण।
मानिनी जन मन हाकइ ताकइ किशल कृपाण॥[२]

(कुसुम उसके धनुष हैं, भ्रमरावलि प्रत्यञ्चा है। वह लाघव युक्त कामदेव अपने लक्ष्य मे कभी नही चूकता है। सुकुमारो को वाणो से वीध देता है। कामदेव के निरूपति वचनो को कोई उल्लघित नही करता। अपने किसलय रूपी कृपाण से वह माननियो के मन को परिचालित करता रहता हैं।)

वसत विलास मे पग-पग पर उल्लास, ऐश्वर्य और शृ गारजन्य लास्य है।

---

१. वसंत विलास (डा० गुप्त का सस्करण, ८-९)।
२. वसंत विलास (डा० गुप्त का संस्करण, १९-२०)।

क्रीड़ा विकास की थिरकन है। उसके ये तत्व तथा उसके भाव-बोध का सौंदर्य इस कृति को अनुपम बना देता है।

इसके पश्चात् कवि ने उन उपादानो का वर्णन किया है जो कामदेव के शस्त्र एवं उद्दीपन-विभाव के सहायक हैं। कोकिल, वकुल, चम्पा, पाटल, आम्र-मञ्जरी, किंशुक, और केतकी ऐसे ही शस्त्र हैं।

इसी उद्दीपन-विभागान्तर्गत कवि ने विरहिणियो के उद्गारो की मार्मिक अभिव्यञ्जना की है। ऐसे परिवेश मे प्रिय-वियोग अत्यन्त दु:खदायी प्रतीत होता है। विरहिणियाँ वायस को बुलाकर उससे अनुनय-विनय करती हैं।

देस कपूरची वासिरे वासि वली सर एउ।
सोवन चोच निरुपम रूपम पाखुडी वेउ ।।[1]

[हेवायस, तुझे मैं वायसिका कपूर से वासित कर दूंगी यदि तू यह स्वर (प्रिय आगमन का) सुना देगा। सोने से चोच मढा दूंगी। तेरा दोनो पखुडियो को चाँदी से मढा दूंगी]।

शकुन विचारने के बाद नायिका का पति लौट आता है। उसका मन हर्षित हो जाता है। रग मनाकर वह अपने प्रियतम का मन हर्षित और सरसित कर देती है। जी भर कर वह अपने पति से सुख प्राप्त करती है। प्रिय से नव समागम प्राप्त करके उसके अंग मनोहर हो जाते हैं। इस सयोग शृंगार के परिवेश मे कवि ने नारी सौंदर्य, प्रसाधन, सज्जा का वर्णन बडी तल्लीनता से कया है।

भमुहि कि मनमथ धणुहीअ गुण होयडइ वरहार।
वाण अि नयण कडास रे नाकुरची नली आर ।।[2]

(भ्रू ऐसे हैं, मानो कामदेव का धनुष हो। सुन्दर गात के वक्ष पर स्थित हार मानो उस धन्वा को प्रत्यञ्चा है। उनके नयन कटाक्ष हैं और उसकी नासिका नलिआर है वह नली जिसमे से वाण छोड़ा जाता है।

यह सौंदर्य-निरूपण और सौन्दर्य-बोध सयम की रस्सी को ढीली कर उद्दाम की ओर लरज जाता है। ऐसे स्थलो पर उसके वर्णन सौंदर्य-शाला नारी को भी निर्वसना कर देते है।

नामाग्गिनकरइं पयोधर योधरे सुरत संग्रामि।
कंचुक तोजइं सनाहु रे नाहु महाभडु पामि ।।[3]

---

१. वसत विलास (डॉ० गुप्त का संस्करण, ४७)।
२. वसत विलास (डॉ० गुप्त का संस्करण, ६१)।
३. वसत विलास (डॉ० गुप्त का सस्करण, ६४)।

(सुरत रूपी सग्राम मे उन युवतियो के पयोधर ऐसे योधा के समान हैं, जो पराजित नही हो रहा है। पति रूपी महाभट को देखकर मानो कचुक रूपी (सन्नाह) कवच को परित्यक्त कर रहे हो।

कवि ने ऐसे ही निर्वसन सौन्दर्य के परिवेश मे नायक-नायिकाओ की सयोग-क्रीडओ का चित्रण कर फागु की परिसमाप्ति की है। सौन्दर्य-बोध और प्रकृति-संवेदनाओ की मार्मिक व्यञ्जना मे कवि इतना सिद्धहस्त था कि उस काल मे इस ग्रन्थ को बहुत लोकप्रियता प्राप्त हुई।

२. जिनचन्द्र सूरि फागु—

जिनचन्द्र सूरि फागु की वर्ण्य वस्तु संयम श्री से सम्बन्धित है। कृति मे वसन्त और कामदेव के आक्रमण और शीलनरेन्द्र द्वारा उनके पराभाव का वर्णन किया है। इसी सन्दर्भ मे कवि ने वसन्त सौन्दर्य, नारी सौदर्य, एव नारी के अलकारो का वर्णन किया है।

अन्तःसाक्ष्य के आधार पर ज्ञात होता है कि फागुकार ने अपने गुरु और महागुरु, दोनो का ही आदर के साथ स्मरण किया है। जिणचन्द्र सूरि की गुरु-शिष्य परम्परा इस प्रकार रही थी।

जिण प्रबोध सूरि = जिणचन्द्र सूरि = जिणकुशल सूरि

अत. सम्भव है कि जिणकुशल सूरि ही 'जिणचन्द्र सूरि फागु' के रचयिता रहे हो। जिणकुशल सूरि ने जिणचन्द्र से सम्वन्धित 'जिणचन्द्र सूरि चतुःसप्ततिका' भी लिखी है। ये सभी खरतरगच्छीय आचार्य हुए हैं।

इस फागु की रचना पाटण नगर मे हुई, जबकि पद महोत्सव जावालपुर मे हुआ था। अतः इस फाग की रचना पद महोत्सव के समय नही हुई (डा० सांडेसरा का मत भ्रामक है)। इस फागु मे पाटण नगर की प्रशसा की गयी है।

गुजरात पाटण भल्लउं सयलह नयरह माहि।

परन्तु उक्त आपवान महोत्सव जावालपुर के वीर चैत्य में हुआ था, जबकि स्तवन पाटण के शान्तिनाथ चैत्य का है। अत इससे सिद्ध होता है कि फागु पदोत्सव से बाद मे लिखा गया। कितने समय बाद, यह तो नही कहा जा सकता है, पर इतना निश्चित है कि फागु काव्य की रचना स० १३७७ से पूर्व हो चुकी थी, क्योंकि स० १३७७ के ज्येष्ठ कृष्णा एकादशी को जिनकुशल सूरि (कुशल कीर्ति) का पद महोत्सव हो गया था। सम्भवतया १३५० के लगभग यह फागु लिखा गया। भाषा की दृष्टि से [इस ग्रन्थ की भाषा अपभ्रंश के कहीं अधिक समीप पुरानी हिन्दी है। कही-कही शौरसेनी अपभ्रंश के शब्द 'निसुणेविणु' जैसे प्रयुक्त हुए हैं।

ग्रन्थकार ने सर्वप्रथम संत वंदना, पुनः पार्वती और तत्पश्चात् अहिल्या-बाई पाटण के अलकार रूप तीर्थङ्कर श्री शान्तिनाथ की स्तुति की है।

इसमे कुल २४ छन्द थे। जैसलमेर से जो खडित प्रति मिली है उसमें प्रारम्भ के ५ छन्द और अन्त के ५ छन्द प्राप्त हुए हैं, शेष छन्द नष्ट हो चुके हैं। खण्डित प्रति के आधार पर ग्रन्थ के सम्पूर्ण काव्य-सौंदर्य का आस्वाद नही मिल पाता है। जितने भी छन्द उपलब्ध हैं उनसे ज्ञात होता है कि विवेच्य फागु का वसन्त एव नारी के सौंदर्य का वर्णन परम्परागत और नाम-परिगणनापरक हैं। उसमे किसी मौलिक उद्भावना अथवा नवीन भाव-बोध को कोई स्थान नही मिला है। कृति का महत्व उसके प्राचीन होने मे है, न कि उसके काव्यत्व मे।

३ थूलिभद्द फागु—

जिनपद्मसूरि कृत १७ पद्यो की यह कृति ७ भासो मे निबद्ध है। भास की व्युत्पति भाष्य से हुई है। भाष्य→भास्यउ→भासो→भास। भाष्य का तात्पर्य कथ्य से है। यह भास-निबद्धता केवल स्थूलिभद्र फागु तक ही सीमित रही है। परवर्ती फागु 'नेमिनाथ फागु' मे यह परम्परा नही मिलती। स्थूलिभद्र फागु की कथा सुप्रसिद्ध जैन कथा है। सोमप्रभाचार्य कृत 'कुमारपाल प्रतिबोध' की कथा के उत्तरार्द्ध को कवि ने वर्ण्य विषय के रूप मे चुना है। पूर्वार्द्ध की कथा अनुसार स्थूलिभद्र अत्यन्त स्वरूपवान, कामुक एव विलासी थे। एक बार वसन्त काल मे कोशा नामक वार-वनिता पर वे मुग्ध हो गये। बारह वर्षों तक उस वार-वनिता के साथ भोग विलास मे लिप्त रहे। बाद मे सचेत होने पर प्रबुद्ध हुए। सांसारिक भोग विलास से विरक्त होकर सन्यासी हो गये। उत्तरार्द्ध के अनुसार, एक बार कालान्तर मे वे चातुर्मास्य में कोशा के गृह पर आये। कोशा का अपरिमित सौंदर्य अपार सम्पत्ति, और गदराया यौवन भी स्थूलिभद्र को अपनी ओर आकर्षित नहीं कर सका इस बहाने कवि ने कोशा के शृंगार, नख-शिख वर्णन, प्रकृति-उद्दीपन के परिप्रेक्ष्य का वर्णन करने के लिए अवसर निकाल लिया है।

अनुपम सज्जा एवं अतीव रूपराशि के साथ कोशा स्थूलिभद्र के पास पहुचती है, उसे अभिभूत करने। पर स्थूलिभद्र प्रभावहीन और शान्त रहते हैं। कोशा खीजती है, उदासी व्याप जाती है। तब वह उपालम्भ का तीर छोडती है—

> बारह वरिसइ तणउ नेह किहि कारणि छडिउ।
> एवडु निठुरपणउ कांइ मूसिउ तुम्हि मडिउ ॥[1]

वह बारह वर्ष का नेह, रस-विभोर, मादक स्मृतियाँ, कैसे निष्ठुर बन कर

---

1. स्थूलिभद्र फागु, १९।

छोड़ दिया, यही व्यथा कोशा को सालती रहती है। लेकिन यह तीर भी इन्द्रियजयी की चारित्रिक दृढता के लोह-कवच से टकरा कर लौट आता है। उद्विग्न, उद्वेलित, एवं कामोन्मत्त कोशा को तब स्थूलिभद्र सीख देता है :—

चिंतामणि परिहरवि कवणु पत्थइ गिणहेइ ?
तिम संजमसिरि परिवएवि बहुधम्मसमुज्जल,
आलिंगइ तुह कोस कवणु पसरत महाबल ?[1]

चिंतामणि को परित्यक्त कर पत्थर ग्रहण करना जैसे मूढता है, वैसे ही संयम श्री का वरण कर के कोशा का आलिंगन करना भी मूढता का कार्य होगा। कवि का अभीष्ट इस संयम और चारित्रिक दृढ़ता का दिग्दर्शन कराना ही रहा है, जिसमे उसका ध्येय सफल होता है। कोशाजन्य शृंगार का उद्दाम वेग शनैः-शनैः स्थूलिभद्र के संयम और अपरिग्रह के शान्तरस मे पर्यवसित हो जाता है।

कृति काव्यात्मक कसौटी पर खरी उतरती है। उसका काव्यपक्ष सबल है।

१. प्रकृति परिवेशः—यद्यपि 'कुमारपाल प्रतिबोध' मे स्थूलिभद्र की पूर्वार्द्ध कथा मे परिपार्श्व के रूप मे वसन्त वर्णन हुआ है, जो उद्दीपन विभाव एवं व्यापक प्रसार की दृष्टि से उत्कृष्ट कोटि का है। स्थूलिभद्र फागु मे वासना के साथ वसन्त का परिहार है और संयम के साथ वर्षा ग्राह्य है। वर्षा वर्णन, उद्दीपन विभाव का परिप्रेक्ष्य तो प्रस्तुत करता ही है, साथ ही नाद व्यञ्जना की दृष्टि से भी सुन्दर प्रकृति चित्रण है।

निःसन्देह जिनपद्मसूरि का वर्षा वर्णन प्रकृति, मानवीय भाव एवं मानवीय क्रिया-व्यापारो के सूक्ष्म पर्यवेक्षण का द्योतक है:—

सीयल कोमल सुरहि वाय जिम जिम वायते,
माण मडफ्फर माणणिय तिम तिम नाचते,

जिम जिम जलभरिय मेह गयणंगणि मिलिया,
तिम तिम कामीतणा नयण नीरिहि झलहलिया।

मेहारव भर उलटि य जिम जिम नाचइ मोर,
तिम तिम माणिणि खलभलइ साहीता जिम चोर ॥[2]

शीतल, कोमल, सुरभित वायु जैसे-जैसे प्रवाहित हो रही है, जैसे-वैसे मान और गर्व माननियो को नचा रहा है। जिस प्रकार गगनांगण मे जलपूर्ण मेघ आकर घिर जाते हैं, वैसे ही विषयी के नेत्र अश्रु पूरित हो जाते हैं। मेघ गर्जना

१. स्थूलिभद्र फागु, २२।
२. स्थूलिभद्र फागु, ८-९।

सुनकर उल्लसित हुए मोर जिस प्रकार का नृत्य करते हैं और उस गर्जना के साथ-साथ माननियो की जैसी व्याकुलता बढ़ जाती है, वैसी ही व्याकुलता और उद्विग्नता पकड़े हुए चोर की होती है।

२. ध्वन्यात्मक एव नाद सौंदर्य—प्रकृति के परिवेश मे ध्वन्यात्मकता की भी चर्चा हो चुकी है। यह ध्वन्यात्मकता फागुओ की प्रमुख विशेषता है, क्योकि गेय तत्व फागुओ की एक प्रवृत्ति है। वर्षा वर्णन की ध्वन्यात्मकता देख ही चुके हैं, इसके अतिरिक्त कवि ने वार वनिता कोशा के शृ गारानुकूल आभरण धारण करने मे भी ध्वन्यात्मकता एव नाद-सौंदर्य का समावेश किया है।

३ सौंदर्य बोध:—कवि का सौदर्य वोध सचेत एवं प्रवुद्ध था। कोशा के नख-शिख का वर्णन कवि ने अलकृत शैली मे किया हैं। उसके उपमान, विम्व, एव प्रतीक अभिनव एव प्रयोग साध्य हैं। कामदेव के समान वेणी को उत्तुङ्ग पयोधरो को शृ गार रूपी पुष्प के स्तवक वताने मे नया ही सौदर्य है। इसमे कोई सन्देह नही कि कवि ने नारी सौदर्य का सूक्ष्म पर्यवेक्षण किया था, तभी उसका वर्णन मार्मिक है:—

कन्नजुयल जसु लहलहत किरमयण हिंडोला,
चचल चपल तरग चग जसु नयण कचोला,
सोहइ जासु कपोल पालि जणु गालिमसूरा,
कोमल विमलु सुकठु जासु वाजइ सँख तूरा,
लवणिभरसभर कूवडिय जसु नाहिय रेहइ,
मयणराय किर विजयखभजसु ऊरू सोहइ,
जसु नह पल्लव कामदेव अंकुस जिम राजइ,
रिमझिमि रिमझिमि ए पाय कमलि घाघरिय सुवाजइ।[1]

कवि ने दोनो कानो को दोलायमान मदन-हिडोले के समान वताया है। नयन कटोरे ऐसे है, मानो चंचल तरगें विलास कर रही हो। उसकी कपोल-पालि फूली हुई रूई के समान थी। कोमल, निर्मल और सुन्दर कण्ठ से नि सृत स्वर इस प्रकार प्रतीत होते थे जैसे शखनाद और तूर्यनाद हो रहा हो।

४. भाव-वोध—कोशा नयन कटाक्ष करती है। अभिनव शृंगार से युक्त भाव-भगिमाओ से भी मुनि-प्रवर का मन विंधता नहीं है। तव वेश्या कहती है—हे नाथ, आपका तपस्वी वेश देखकर मेरा हृदय दुखी हो रहा है। स्थूलिभद्र कहता है 'वेश्या, तुम खेद न करो, मेरा हृदय लोहगढ के समान हैं, जो तुम्हारे वचनो से विंध नहीं सकता। मैंने तो सिद्ध रूपी रमणी से परिणय किया है, हृदय

---

१. स्थूलिभद्र फागु, १४–१५ ।

संयम-श्री के साथ भोगायित हो रहा है। अतः मैं तुम्हारे अप्रतिम सौंदर्य से प्रभावित होने का नही।

इस हावभाव के दिग्दर्शित करने मे कवि ने अपने भाव-बोध का सुन्दर परिचय दिया है। कथोपकथनात्मक शैली मे यह बहुत ही मार्मिक बन पाया है।

५. रचनाकाल :—थूलिभद्र फागु का रचना काल राहुल सांस्कृत्यायन के अनुसार १२०० ई० (१२५७ वि० स०) के लगभग है[1] जबकि श्री अक्षयचन्द्र शर्मा के अनुसार इसका रचनाकाल १४ वी शताब्दी का उत्तरार्द्ध है।[2] फागुकर्त्ता जिनचन्द्र सूरि को आचार्य पद सम्वत् १३८९ मे प्राप्त हुआ और सम्वत् १४०० मे उनकी मृत्यु हो गयी, अत: यह सहज रूप से कल्पना की जा सकती है कि विवच्य कृति का रचनाकाल सम्वत् १३८९ से १४०० के बीच मे रहा होगा। अतः मध्य मे रचनाकाल मानने पर, कहा जा सकता है कि उक्त फागु की रचना १३९५ के लगभग हुई होगी।

४ राजशेखर सूरि कृत नेमिनाथ फागु—

जैन मतावलम्बी राजशेखसूरि ने नेमिनाथ फागु मे अपने उपास्य नेमिनाथ का चरित्र २७ पद्यो मे निबद्ध किया है। इस कृति मे धर्म निरूपण मात्र नही है, अपितु काव्य सौंदर्य की दृष्टि से भी यह उत्कृष्ट काव्य है। काव्य-शैली वर्णनानुकूल और लालित्यपूर्ण है। कृति का पूर्वार्द्ध राजमती के सौन्दर्य निरूपण और नख-शिख वर्णन से परिपूर्ण है। शृङ्गारिक वर्णन मे कवि विशेष दक्ष है। उसका शृङ्गार वर्णन उद्दाम न होकर मर्यादित हैं। यह शृङ्गार-निरूपण शात रस में पर्यवसित होकर धर्म-निरूपण मे सहयोग प्रदान करता है। चरित्रिक निष्ठा और इन्द्रिय दमन ही इस कृति मे काव्य के लक्ष्य हैं, और विवेच्च विन्दु हैं।

१ वर्ण्य वस्तु :— नेमीनाथ फागु की वर्ण्य वस्तु जैन तीर्थङ्कर नेमिनाथ और राजीमति अथवा राजुल से सम्बन्धित है। विवेच्य कृति के अनुसार नेमिनाथ यादव कुल उत्पन्न राजकुमार और समुद्रविजय तथा शिवादेवी के पुत्र थे। उनका सुललित मुख कागज के समान श्यामल, लावण्ययुक्त तथा कमल के समान सुन्दर था। वे शक्ति मे भीम के समान और रूप मे अपार थे। वे विवाह नही करना चाहते थे, परन्तु एक बार जब कृष्ण-बलराम के साथ वसत-क्रीडा मे रत थे, तो लग्न का आयोजन राजुलदेवी के साथ हो गया। माता-पिता और भाई-बन्धवो की प्रेरणा से किसी तरह विवाह के लिए प्रस्तुत हुए। इस स्थल पर कवि को श्रेष्ठ घोडे पर सवार नेमिनाथ के सौन्दर्य-वर्णन का अवसर मिल गया है।

---

१. राहुल सांकृत्यायन, काव्य धारा (हिन्दी), थूलिभद्द फागु।

२. अक्षयचन्द्र शर्मा, ना० प्र० पत्रिका, वर्ष ५९, अंक, १, स्थूलिभद्र फागु। डॉ० साडेसरा का भी यही मत है, देखिए कृति परिचय अने प्रति परिचय, पृ० २।

जैसे ही बारात उग्रसेन के घर (द्वारिका) पहुँचती है, वैसे ही वध्य पशुओं के समूह को देखकर नेमिनाथ का हृदय विरक्त हो जाता है। इसी स्थल पर कवि ने राजुल का विरह-वर्णन किया है। सांवत्सरि दान कर के और ससार त्याग कर नेमिनाथ उज्जवगिरि (धवलगिरि, गिरनार) पर्वत पर सयम की दीक्षा ग्रहण करके केवल ज्ञान को प्राप्ति करते हैं। राजुल भी पति का अनुसरण करके सिद्धि प्राप्त करती है।

२. सौंदर्य बोध :— राजशेखर सूरि का सौन्दर्य-बोध जागरूक था। राजुल का सौंदर्य-निरूपण इन शब्दो मे किया है।

किम किम राजलिदेवी तणउ सिणगरू भणेवउ,
चंपइ गोरी अधधोइ अङ्गि चदनुलेवउ,
खुपु भराविउ जाइकुसम कस्तूरी सारी,
सीमतइ, सिंदूर रेह मोतीसरि सारि।
नवरंगी कुकुमि तिलय किय रयण तिलउ तमु भाले,
मोती कुडल कन्निथिय बिंबोलिय करजाले ॥[1]

कवि कहता है राजुल के श्रृङ्गार का कैसे वर्णन करू, वह चम्पक-वर्णी अति उज्ज्वल और चदनलेपित अङ्गो वाली है। सीमन्त प्रदेश मे सिन्दूर रेखा शोभायमान है। कानो मे मोतियो के कुण्डल हैं। इस वर्णन मे मौलिकता का अभाव है। आगे कवि ने सौन्दर्य-निरूपण करते हुए कहा है।

अह निरतिय कज्जल रेह नयणि मुहकमलि तबोलो,
नागोदर कठलउ कंठि अनुहार विरोलो,
मरगद जादर कचुयउ फुड फुल्लइ माला;
करि ककण मणि-वलय-चूड खलकावइ बाला।
रुणुझणु ए रणुझणु ए रुणुझणु ए कडि घघरियालि,
रिमझिमि रिमझिमि रिमिझिमि ए पय नेउर जुयाली,
नहि आलत्तउ वलवलउ सेअंसुयकिमिसि,
अखडियाली राममए प्रिय जोअइ मनरसि ॥[2]

(उसने नेत्रो मे अञ्जन रेखा और मुख कमल मे तांबूल दे रखा है। उसके कण्ठ मे नागोदर हार सुशोभित हो रहा है। मरकती, जरीदार कंचुक तथा पुष्पमाल धारण किये हुए वह वाला, हाथ मे धारण किये हुए कंकण एवं मणियो से बलयित चूडियां खनखना रही है। उसकी कटि मे मेखला रुनझुन-रुनझुन की ध्वनि कर रही

१. नेमिनाथ फागु, १८–१९।
२. वही, २०–२१।

है तथा दोनो पैरों मे नुपुर झकृत हो रहे है। उसके नखो की श्वेत काति से युक्त लक्तक उद्‌भाषित हो रहा है। इस प्रकार साज-सज्जावेष्टित होकर राजीमती अनुरागपूर्वक अपने प्रियतम की प्रतीक्षा कर रही थी। उपास्य बुद्धि से सम्पृक्त होने के कारण कवि का सौंदर्य-बोध मर्यादा के परिवेश मे चक्कर काटता रहा है।

३. कृति का रचना काल — राजशेखर सूरि ने सम्वत् १४०५ मे 'प्रबन्ध-कोष' की रचना की है। अत. विवेच्य कृति का रचना काल सम्वत् १४०० के लगभग ठहरता है, इसकी पुष्टि 'स्थूलिभद्र फागु' और 'नेमिनाथ फागु' की सानुरूप वर्णन शैली से होती है। दोनो फागुओ मे अद्‌भुत साम्य है:—

(१) दोनो काव्यो मे छन्द विधान एक सा है। 'स्थूलिभद्र' फागु के समान 'नेमिनाथ फागु' भी २७ कडी और ७ भासो मे निबद्ध है। प्रत्येक भास मे एक और तत्पश्चात् एक रोला का सयोजन किया गया है।

(२) दोनो काव्य, नारी सौंदर्य और नख-शिख वर्णन से परिपूर्ण हैं। उनका शृङ्गार जैन कवियो के भावानुकूल है। यह शृङ्गार-निरूपण दोनो ही कृतियो मे, शान्त रस मे पर्यवसित होकर धर्म निरूपण से सहायक सिद्ध होता है। चारित्रिक निष्ठा, सयम-श्री का महत्व, इन्द्रि -दमन ही इन कवियो के विवेच्य-विन्दु है।

(३) दोनो ही कृतियो मे भाषा-साम्य है तथा शब्द-विन्यास और व्यन्यात्मकता मे सानुरूपता है। इससे ज्ञात होता है कि उक्त दोनो के रचनाकाल मे विशेष अन्तर नही रहा है। यदि 'स्थूलिभद्र फागु' की रचना सम्वत् १३९५ मे हुई तो नेमिनाथ फागु की रचना सम्वत् १४०० के लगभग हुई।

इन फागु काव्यो की एक विशेषता यह भी है कि इनमे व्यापक कथावस्तु को सक्षेप मे इस प्रकार सयोजित करके प्रस्तुत किया जाता है कि कथा-प्रवाह कहीं भी विशृङ्खलित नही हो पाता है। प्रबन्धात्मकता के साथ धार्मिक लक्ष्य, प्रकृति-परिवेश, और नख-शिख वर्णन का भी समायोजन हो जाता है। इस दृष्टि से फागु काव्य गेय, इति वृतात्मक-लघु खण्ड काव्य कहे जा सकते हैं।

वसन्त निरूपण और वसन्त-क्रीडा के भव्य परिवेश निर्माण की दृष्टि से 'वसत-विलास' इस युग का सर्वश्रेष्ठ फागु है। वसन्त विलास मे शृङ्गार रस के दोनों पक्षो, विशिष्टतया सयोगपक्षीय केलि-विलास, नायका के सौंदर्य-बोध, वासन्तिक उपादानों तथा विप्रलम्भ की दृष्टि से विरहिणी के मार्मिक भावों की सुन्दर व्यञ्जना हुई है।

स्थूलिभद्र फागु मे वसन्त की अपेक्षा वर्षा को महत्व मिला है, सम्भवतया चातुर्मास्य के कारण। कवि का वर्षा वर्णन, उसमे निहित ध्वन्यात्मकता, कोशा का सौंदर्य-वोध, उसका नख-शिख निरूपण अवश्य महत्वपूर्ण हैं। यही वर्णन-शैली और सौंदर्य वोध की परिपाटी राजशेखर कृत 'नेमिनाथ फागु' मे दिखलाई पडती है। राजुल का सौंदर्य-निरूपण इस काव्य का प्राण है, जो स्पन्दनशील और सवेदनात्मक है। वसत-निरूपण की दृष्टि से यह कृति अत्यन्त शिथिल है।

हिन्दी की फागु-कृतियों का काव्य-पक्ष

काव्य-पक्ष की दृष्टि से फागु-कृतियों के काव्यरूप की कुछ ही कृतियाँ विचारणीय हैं। यदि प्रकृत्यात्मक वर्गीकरण के आधार पर देखा जाय तो वैष्णव फागुओ मे 'हरिविलास फागु' लौकिक फागुओ मे 'वसत विलास', 'विरह देसाउरी फागु' और सोनीराम कृत 'वसत विलास' तथा आख्यानात्मक फागुओ मे जिन पद्मसूरि कृत प्रथम 'स्थूलिभद्र फागु', राजशेखर सूरि कृत 'नेमिनाथ फागु', जयशेखर सूरि कृत 'नेमिनाथ फागु', 'वसत शृङ्गार फागु', 'स्थूलिभद्र-कोशा प्रेम विलास फागु', 'नेमिनाथ नव रस फागु', और 'नेमिश्वर बाल लीला फागु', कुछ ऐसी कृतियाँ हैं, जिनको काव्यत्व की तुला पर आँका जा सकता है, अन्यथा शेष फागु-कृतियाँ, जिनकी सख्या ९० के आसपास है, फागुकारो द्वारा उपदेश, स्तुति, गुणगान, कीर्त्तन और भजन के रूप मे गाने के लिए श्रावको के लिए लिखी गई हैं।

व्यक्तिनिष्ठ फागुओ मे एक भी फागु ऐसा नहीं लिखा गया है जो काव्यत्व से परिपूर्ण हो। इसी प्रकार उपदेशात्मक फागु तथा तीर्थ महिमा-सम्बन्धी फागुओ की स्थिति है। इनमे या तो किसी तीर्थङ्कर, अथवा किसी धार्मिक पुरुष की अभ्यर्थना की गई है, अथवा नीरस उपदेशो की झडी लगा दी गई है, अथवा किसी तीर्थ का महिमा-गान किया गया है। इन अभिष्टो की पूर्ति मे फागुकार इतने तल्लीन हो गये हैं कि काव्य-पक्ष की अवहेलना की गई है। एक-सी शैली, एक-सी भाषा और एक-से वर्ण्य विषयो से समन्वित होने के कारण इन फागुओ से विरक्ति होने लगती है। एक रसात्मकता ने समूचे काव्य को आच्छादित कर रखा है। अतः ये समस्त फागु, फागुरूप मे निबद्ध अवश्य हैं, पर काव्य न होकर, पद्यबद्ध स्तुति-परक रचनाए मात्र हैं।

आख्यानात्मक फागुओ मे भी अभिव्यजना तथा रूढ़ि का चरम विकास दिखलाई पडता है। नेमिनाथ-राजुल और स्थूलिभद्र-कोशा की कथाओं पर आधारित फागुओ मे एक-से वर्ण्य विषय एक ही कथा, एक-सा प्रकृति-परिवेश, एक-सा नारी-सौन्दर्य-बोध और एक-सी ही चरम परिणिति एव पर्यवसान है। इन फागुओं मे

एक-दो स्थल ऐसे अवश्य आये हैं, जो काव्यत्व की दृष्टि से विचारणीय हैं, पर उनमें मौलिकता का पूर्णतया अभाव है।

वैष्णव फागुओ की स्थिति भी जैन फागुओ के समान दैन्यपूर्ण है। 'हरि विलास फागु' अवश्य सुन्दर कृति कही जा सकती है, परन्तु वह भी 'वसत विलास' के प्रभाव से अछूती नही है। शेष कृतियां काव्य दृष्टि से हेय हैं।

लौकिक फागुओ मे 'वसत-विलास' अवश्य ऐसी रचना है, जिसमे काव्यत्व अपने सम्पूर्ण सौन्दर्य के साथ प्रस्फुटित हुआ। विरह व्यञ्जना की दृष्टि से 'विरह देसाउरी फागु' तथा सनेनीराम कृत 'वसत-विलास' भी सुन्दर कृतियां हैं।

फागु काव्य का मूलतत्व वसन्त-वर्णन है। लगभग सभी कृतियो (स्थूलभद्र फागु को छोडकर) मे वसन्त वर्णन किया गया है, परन्तु वसन्त निरूपण निष्प्रभ अप्रतिम और विकर्षणशील है। नाम परिगणना पद्धति के आधार पर कतिपय उपादानो का उल्लेख करके इन कवियो ने अपनी इतिश्री समझ ली हैं। सस्कृत-प्राकृत के वसन्त-वर्णन से फागुओ के वसन्त-वर्णन की कोई समता नही की जा सकती है। अपभ्रंश काव्य मे जो नीरस, और स्थूलतापरक वर्णन-प्रणाली का प्रसार हुआ, उसी को फागु कृतियो मे अपना लिया गया। परिप्रेक्ष्य की समता मे फागु-कृतियो की वसन्त-निरूपण सम्बन्धी उक्तियां फीकी और आकर्षणहीन प्रतीत होती है। 'वसन्त-विलास' की एक दो उक्तियाँ अवश्य मार्मिक हैं। विरहणियो के समूह को अशोक वृक्ष काम पीडित कर रहा है, वह अशोक, विरहणियो को कामदेव रूपी योद्धा के आयुध के समान है। उसके किसलय खड्ग के समान दीप्तिवान प्रतीत हो रहे हैं :—

> वीर मुभट कुसुमायुध शाल अशोक
> किशल जिस्यां असि अवकइं झवकइं विरिहणी लोक[1]

आम्रवृक्ष मे मञ्जरी लग गई है। उसे देखकर भौंरो की पंक्ति सचेष्ट होकर घिर गई हैं। इस दृश्य को देख कर (कवि कहता है) ऐसा प्रतीत होता है मानो कामदेव ने विरहणियों के हृदय में धुआँ और कुहरा भर दिया हो :—

> आंवुलइ माजर लागीय जगीय मधुकर माल।
> मूकइ मारू कि विरहीय हिअइ सधूमविराल ॥[2]

एक-दो स्थलो पर कवि ने भौंरो को कामदेव का योद्धा बताया है और इनके गुञ्जार की तुलना शख फूंकने से की है।[3] दूसरे स्थल पर कवि ने वकुल पर लुब्ध

१. वसन्त विलास, ३५।
२. वसन्त विलास, ३३।
३. वसन्त विलास २९।

हुए भौंरो को कामदेव नृप का वन्दीजन वताया है ।[1] एक अन्य स्थल पर चम्पा की कली की उपमा दीपक से दी है,[2] परन्तु ये उपमाएं प्रायः परम्परागत हैं ।

'हरिविलास फागु' मे कवि ने पाटल पुष्प के मुख को पीडा देने वाले वस्त्र के समान माना है और ऐसा शर माना है, जिसके साधने से ही कलक लगने का आशका-बोध होने लगता है :—

मनमथ पीडि म पिडि म पाडल-तुण ।
नारि म तूं शर सोधीय आधीय लागसि खूण ॥[3]

फागु-कृतियो का वसन्त-वर्णन किसी भी दृष्टि से मार्मिक तथा प्रभावोत्पादक नही कहा जा सकता । 'स्थूलिभद्र फागु' मे वसन्त के स्थान पर जो वर्षा-वर्णन हुआ है, उसमे अनुसरण पर कवि ने अधिक बल दिया है :—

झिरिमिरि झिरिमिरि झिरिमिरि ए मेहा वरसति ।
खलहल खलहल ए बाहला वहति ॥[4]

यहाँ भी वर्षा वर्णन उद्दीपन-विभाव के अन्तर्गत हुआ है ।

फागुकारो ने नाद व्यञ्जना एवं सानुरूप ध्वनि-सयोजन मे बहुत कुशलता दिखलाई हैं । ऊपर के उद्धहरण मे ही मेह बरसने की झिरिमिरि ध्वनि, नाले की खलखल ध्वनि, झत्रझत्र करके विद्युत कौंधने की ध्वनि तथा थरहर-थरहर कांपने की ध्वनि से चित्र-योजना सजीव हो उठी है । विम्ब प्रस्तुत करने के लिए ध्वनि-संयोजन पर इन कवियो ने बहुत अधिक ध्यान दिया हैं ।

रस–व्यजना की दृष्टि से फागुकारो ने दो ही रसो– शृङ्गार और शाति– को प्रमुखता दी है । प्रत्येक फागु शृङ्गार से प्रारम्भ होकर अन्त मे सयम श्री, इन्द्रिय निग्रह के शान्त रस मे पर्यवसित होता है । जैन फागुकारो का अभीष्ट शांत रस रहा है, शृङ्गार उनके लिए माध्यम वन कर आया है । लौकिक फागुकारो ने शृङ्गार को प्रमुखता दी है । वैष्णव फागुकारो ने भी शृङ्गार रस को प्रधानता दी है । शृङ्गार रस की व्यञ्जना सयोग और वियोग दोनो पक्षो मे हुई है ।

संयोग पक्ष के अन्तर्गत कवियो ने नारी सौंदर्य निरूपण किया है । 'वसन्त-विलास' मे नारी सौन्दर्य-बोध अत्यन्त कुशलता से निरूपित हुआ है । यद्यपि कवि के उपमान परम्परागत हैं, परन्तु उसकी प्रस्तुति अलकृत आकर्षक एवं प्रभावोत्पादक

१. वसन्त विलास, ३० ।
२. वसन्त विलास, ३१ ।
३. हरिविलास फागु, ९० ।
४ स्थूलिभद्र फागु, ६–७ ।

है—रमणी की नासिका तिल के पुष्प के समान है। कटि इतनी पतली है कि उसे मुट्ठी मे लिया जा सकता है। हाथ, कोमल किसलय के समान हैं जो चोल के मंजीठ रंग के समान प्रतीत होते हैं :—

तिल कुसुमोपम नाकुरे लांकुरे लीजए मूठि।
किशलय कोमल पाणिरे जाणिरे चोल मजीठ ॥[1]

कवि ने उपमानो की लडी लगा दी है। जहां उसका अवयव सौन्दर्य-बोध प्रखर था, वहां उसने प्रसाधन सज्जा पर भी उतना ही ध्यान दिया है :—

सीइ यु सोदूर्गिहि पूरीउ पीरीउ मोत्तीन चग।
राखडी जडीय कि माणिक जाणि कि फणिमणि चग ॥[2]

उस युवती ने सीमात प्रदेश मे सिंदूर आपूरित किया है। उसमे सुन्दर मोती भरे हैं। सीमात प्रदेश मे राखडी धारण की है, जो कि माणिक्य से जुड़ी हुई है। ऐसा प्रतीत होता है जैसे सुन्दर फणि मणि हो।

अन्य फागुकार ने इन्ही उपमानो, और प्रतीको को अपनी कृतियो मे व्यवहृत किया है। केवल शब्दो को कुछ हेर-फेर उनके काव्य मे मिलता है। यह सौन्दर्य-बोध अभिव्यजना रुढि से इतना ग्रस्त हो चुका था कि इसमे किसी प्रकार की मौलिकता शेप नही रही थी। जैसे नागोदर हार धारण करने का उल्लेख प्राय. सभी कवियो ने किया है। 'वसन्त विलास' के उपर्युक्त छन्द से साम्य रखता हुआ पद्म कृत 'नेमिनाथ फागु' का एक छन्द है :—

गोरी कठि नगोदर, वीजल जिम झबकंति,
पति पकति हीराउली दीपति सहण न जाइ।
सिर सीदूरीय समथलउ, भमरमाला जिमि वीणि
फागु खेलउ मनरंगिहि हसगमणि मृग नयणि ॥[3]

'वसंत श्रृङ्गार फागु' की एक पक्ति है :—

कठि नगोदर दीपइ, ए जीपइ ए मृग पतिलंक ॥[4]

नारी सौन्दर्य-निरूपण ज्नि पद्मसूरि के 'स्थूलिभद्र फागु' और राजशेखर सूरि के 'नेमिनाथ फागु' मे भी विशद एव प्रभावोत्पादक ढंग से किया गया है।

---

१. वसत विलास, ६३।
२. वसत विलास, ५९।
३. वसत विलास, ६२।
४. वसत विलास, ५९।

जिन पद्मसूरि ने कोशा के नख-शिख का वर्णन अलकृत शैली मे किया है। यह शृङ्गार आलंबन विभागान्तर्गत आता है—

मयणखग्ग जिमलहलहत जसु वेणी देडो।
सरलउ तरलउ सामलउ रोमावलि दडो॥

तुग पयोहर उल्लसइ सिंगार थवक्का।
कुसुमबाणि निय अभिय कुभ किरथापणि मुक्का॥
कालज अंजिवि नयणजुय, सिर सथउ फाडेई।
वोरीयडि काचुलीय पुण ऊरमडलि ताडेई॥[1]

(कोशा की श्यामल वेणी, मदन के श्याम खड्ग सदृश लहलहा रही है। उसकी सरल तरल, श्यामल रोमावलि सुशोभित हो रही है। उसके उत्तुङ्ग पयोधर (उल्लासित होकर) ऐसे प्रतीत हो रहे हैं जैसे शृङ्गार रूपी पुष्प के स्तबक हो अथवा कामदेव ने दो अमृत कलशो को लाकर रख दिया हो। कोशा ने दोनो नेत्र कोरको मे आजन आज रखा है, सिर मे माग निकाल कर लिलार पर वोरिया (राखडी या वोगला) एव पट्टी देकर वक्षस्थल पर कचुकी धारण कर रखी है।)

इसी प्रकार का वर्णन राजशेखर सूरि ने नेमिनाथ फागु' मे राजुल या राजीमति का किया है। राजशेखर सूरि की रचनाओ मे उपमान कही परम्परागमुक्त हैं, तो कही-कही नूतन उद्भावनाएं भी हैं:—

अह सामल कोमल केशपास किरि मोर कलाउ,
अद्धचद सम भालु मयणु पोसइ भडवाउ,

वकुडियालीय मुहडियह भरि सुवणु भमाडइ,
लाडी लोयण लह कुडलइ सुर सग्गह पाडइ,

किरि ससिबिंब कपाल कन्त हिडोल फुरता
नासा वसा गरुड चचु दाडिम फल दता।

अहर पवाल तिरेह कठु राजलसर रुडउ,
जाणु वीणु रणरणइ जाणु कोइल टह कडलउ॥[2]

राजुल का श्यामल कोमल केश-पाश मोर-कलाप के समान है। भाल-अर्द्ध चन्द्र सम है। उसकी भौंह वकिम हैं। नेत्र-कटाक्ष स्वर्गोपम सुख-प्राप्ति के समान हैं। दोलयमान कर्ण कुण्डलो का कपोलो पर पड़ता हुआ बिम्ब, चन्द्र बिम्ब सदृश है।

---

१. स्थूलिभद्र फागु, १२–१३।
२. नेमिनाथ फागु, ८–९।

नारी निराश फागु मे सांगरूपक सहित कवि की परिकल्पना, काव्य-सौंदर्य परिचायक हैं :—

नरग नगरि मुख पोलि, कपोलि कपाट विचार,
ज्योति जलणमय कुंडल, कुंडलगार न सार ॥[1]

यहाँ कवि की कल्पना उर्वर है। कवि का भाव है— उस नारी का मुख नरकपुर के गोपुर के समान है। कलित कपोल कपाट के समान और कुण्डल वहिन् कुण्ड के समान हैं. फिर भला कामीजन कुण्डलो से क्यो न दग्ध हो ?

वियोग पक्ष के अन्तर्गत कही फागुकारो ने अभिलापहेतुक विप्रयोग उत्पीड़ित विप्रलब्धाओं की मार्मिक वेदना को व्यजित किया है तो कही प्रोषित पतिकाओ की वेदना को, तो कही कलहतारिताओ के करुण-क्रन्दन को। नायकाओं की उक्तियां बहुत ही मार्मिक; सवेदनशील और करुण है। कहीं चन्द्रमा और चन्दन इत्यादि के प्रति कही गई उक्तियो मे हृदय की मूर्च्छनाओ की आवाज है। तो कहीं वे उक्तियाँ अकाट्य एव अनुभूतिपरक हैं.—

चदला विण किसो चद्रणो मोती किसु ज हार
नगर किसो विण नाइका प्रीउ विण सेज शृंगार
हसखड़ा विण सर किसो कोइल विण किसु ज वन
वालभ विण किसी गोठणी जाणज्यो जगत्र जीवन[2]

सच ही है नायिका विना जिस प्रकार नगर सूना है, वैसे ही प्रियतम विना सेज का श‍ृङ्गार तथा गोरडी भी सूनी है। ऐसा ही भाव-विरह देसाउरी फागु मे दिया हुआ है:—

हंसला विण किसउं सरोवर, कोइलविण किसिउं रान,
वालभ विण किसी गोरड़ी, रहि रहि नाह अजाण ॥[3]

यहाँ नयिका तर्क करती है। अपने तर्क की पुष्टि के लिए दृष्टान्त भी प्रस्तुत करती है— हस विना सरोवर जैसे असुन्दर श्री हीन होता है, कोयल बिना वन भी वैसा ही श्री हीन, असुन्दर प्रतीत होता है, हे नाथ तुम अनजान रहे हो, अन्यथा इस सामान्य तथ्य से अवश्य परिचित होते कि पति के बिना नारी भी वैसी ही श्री हीन और असुन्दर हो जाती है।

'स्थूलिभद्र कोशा प्रेम विलास फागु' मे यही तर्क और भी प्रबल हो उठा है जो अनुत्तर है :—

---

१. नारी निराश फागु, २२।

२. सोनीराम कृत वसत विलास, २०।

३ विरह देसाउरी फागु, ७।

सूकइ सरोवर जल विना, हंसा किस्यूं रे करेसि,
जसघरि गमतीय गोरडी, तस किम गमइ रे विदेश ॥[1]

प्रवास हेतुक विप्रयोग की पूर्वावस्था का कवि ने यहां सुन्दर चित्र खीचा है। नायिका, नायक से कहती है– यदि जल बिना सरोवर सूख गया तो हंस क्या करेगा? इसी प्रकार गदराये यौवन को परित्यक्त कर प्रियतम ने प्रवासगमन किया तो उससे क्या लाभ होगा?

विरहिणि के उपालंभ में जहां अमर्ष है, वहां दुःख भी है। वेदना जैसे स्रवित हो रही है। उसकी उक्तिया सशक्त हैं। कभी उद्वेग के कारण व्याधि का अवस्था आ जाती है। दीर्घ विश्वासो और दौर्बल्य से विरहिणी जर्जर हो जाती है। कभी वह साजन को उपालम्भ देती हुई कहती है— हे साजन, तेरे कारण झूरती हुई हड्डियो का ढांचा मात्र रह गई हूं :—

झूरि झूरि पजर थई, साजन ताहरइ काजि,
नीद न समरू वीझडी न करइ मोरी सार ॥[2]

कभी विरहिणी को भूख, प्यास, लालसा, सुख, नीद, प्रसाधन, लज्जा आदि अरुचिकर प्रतीत होते हैं। उसकी देह पाडुर हो गई है। परन्तु वैद्य का कहना है कि यह पांडु रोग नही है। विरहिणी नायिका कहती है — हे साजन, तेरे विरह मे जो व्यथा मैंने सही और भोगी है, उसका कौन वर्णन कर सकता है?[3]

देह पांडुर भई वियोगिइ वईद कहइ एहनइं पिड रोग।
तुझ वियोगि जे वेदन मइं सही, मजनीया ते कुण मकइ कही॥

सच भी है, वे सवेदनाएं तो स्वानुभूत हैं, भोक्ता द्वारा आस्वादित हैं। विरह मे सयोगकालीन उपादान अत्यन्त दुःखदायी प्रतीत होते हैं, उनका भाव संप्रेषण विरहिणी की मनोदशा पर आधारित होता है, अतः विरह अवस्था में उक्त उपादानो का विषम प्रकृति वाले हो जाना स्वाभाविक ही लगता है। ऐसे ही मानसिक उद्वेग मे विरहिणी चन्द्रमा को उपालम्भ देती हुई कहती है— रे चन्द्र, तुम क्यो नही प्रयाण करते हो? किरण रूपी जलती हुई लकडियो के समूह से क्यो जला रहे हो? हे मलयानिल एक क्षण तुम्हारा है, तो एकक्षण मेरा भी है–

चंद रे तुं गम मूकि म मूं किम किरण डवाडु।
कोइल वोलि ममान सिउं मानसिउ ताहरउ पाडु।
मनकरि मधुकरि रुणिझुणि नीझणि रहण सुहाइ।
मलयानील क्षण माहरो याहरी क्षण छकु वाइ॥[4]

---

1. स्थूलिभद्र कोशा प्रेम विलास फागु, ८।
2. स्थूलिभद्र कोशा प्रेम विलास फागु, ३९।
3. स्थूलिभद्र कोशा प्रेम विलास फागु, ३३।
4. जयशेखर सूरि कृत प्रथम नेमिनाथ फागु, १०।

एक क्षण तुम्हारा है तो एक क्षण मेरा भी है—मे भाव-गांभीर्य हैं। विरह मे दुःख असीम होता है। विरहिणी को वस्त्र-सज्जा अपनी ओर आकर्षित नही कर पाती है। भोजन उसे उच्छिष्ट-सा प्रतीत होता है। जल का स्वाद भी मधुर प्रतीत नही होता।[1] हृदय पर अवस्थित हार, भार के समान प्रतीत होता है। सम्पूर्ण श्रृङ्गार अङ्गारवत् प्रतीत होता है। यहा तक की हृदय को हरने वाले चन्दन और चन्द्रमा भी मनोहर प्रतीत नही होते।[2] कभी वह भौंरे से कहती है—तू मेरा मार्ग छोड दे। मेरा शरीर तेरे कारण स्खलित होता जा रहा है। यह चन्द्रमा पहले से ही सन्ताप दे रहा है। अपने से तो कोई वैर नही है —

भमरला छाडिन पाखल्न माखल थया अम्ह सइर।
चांदुना सइर सतापण आपण तां नही वइर॥[3]

प्रियतम के न लौटने पर उसे इतनी झुंझलाहट आती है कि वह ज्योतिषी को तिक्त बातें कहती है, उसे वचना फैलाने वाला घोषित कर देती है।[4] कभी वायस को बुला कर दूध-भात का प्रलोभन देकर अपनी मनचाही बात कहने की याचना करती है।[5]

इस प्रकार विवेच्य फागुओ के विप्रलभ श्रृङ्गार की सश्लिष्ट एव विराट सयोजना मे शिल्प-चातुर्य और भाव-विदग्ध दोनो ही हैं। उनमे मार्मिक तथा करुण भावो की अभिव्यजना है। विरहिणी पर घटित सभी विरह अवस्थाओ का कवियो मे वर्णन किया है।

फागुओ के काव्यपूर्ण स्थल अलकारो से मडित हैं। अन्तर्यमक पर जैसा अधिकार इन फागुकारो को था, वैसा अन्यत्र दिखलाई नही पडता। वसन्त विलास फागु के प्रत्येक छद मे अलकार-संयोजना है। फागुकारो के प्रिय अलकार—यमक, उत्प्रेक्षा, मीलित, उपमा, रूपक, साँगरूपक, अनुप्रास, अप्रस्तुति आदि हैं। परन्तु अलकार सयोजना सभी फागुओ मे उपलब्ध नही होती। यह कथन कुछ ही फागुओ पर लागू होता है।

प्रकृति परिवेश की दृष्टि से फागुओ का वसन्त निरूपण निस्तेज है साथ ही निर्जीव भी। परन्तु नारी सौन्दर्य-बोध और विप्रलभ श्रृङ्गार को दृष्टि से कुछ फागु कृतियाँ अवश्य सुन्दर है। शेष कृतियाँ धर्म-पुराण हैं, अथवा धर्म-कथाएं हैं अथवा नीति-ग्रन्थ हैं, परन्तु काव्य नही। पद्य-बद्ध रचनाएं उन्हे अवश्य कहा जा सकता है।

---

१. वसन्त विलास, ४१।
२. वही ४०।
३. वही, ४३।
४. जयशेखर सूरि कृत प्रथम नेमिनाथ फागु, ५१।
५. जयशेखर सूरि कृत प्रथम नेमिनाथ फागु, ४७,४८, ४९।

फागु काव्य का छन्द-विधान

फागु कृतियां—जैसे फागु काव्य की विषय-निरूपण सम्बन्धी अपनी विशिष्टता है, वैसे ही छन्द-विधान सम्बन्धी भी अपनी विशिष्टता है, यों कहा जा सकता है कि उसके अपने विशिष्ट छन्द रहे हैं। छन्द-विधान की दृष्टि से फागु कृतियो को तीन वर्गों मे विभक्त किया जा सका है :—

(१) परम्परा या दोहाबद्ध फागु कृतियाँ,

(२) प्रयोग का अन्तर्यमक प्रधान दोहा निबद्ध फागु कृतियाँ,

(३) छन्द वैविध्य परक फागु कृतियाँ।

(अ) परम्परा या दोहाबद्ध फागु कृतियाँ :— अपेक्षाकृत प्राचीन फागुओ मे छन्द-विधान इस प्रकार मिलता है:— एक दोहा के बाद रोला का विधान किया गया है। कई रोला और एक दोहा मिलकर भास (भाष्य-भाषा-भास) का निर्माण करते हैं और समूचा फागु कई भासो मे निबद्ध होता है। भासो और रोलाओ की सख्या अनिश्चित है। जैसे पद्मसूरि कृत 'स्थूलिभद्र फागु' ७ भासो मे निबद्ध है तो प्रसन्नचन्द्र सूरि कृत 'रावणि पार्श्वनाथ फागु' ३ भासो मे, अज्ञात कवि कृत 'भरतेश्वर चक्रवर्ती फागु' ५ भासो मे और अज्ञात कवि कृत 'पुरुषोत्तम कृत पाँच पाण्डव फागु' आठ भासों मे निबद्ध है। इसी प्रकार राजशेखर सूरि कृत 'नेमिनाथ फागु' मे एक दूहा के बाद दो रोला हैं तो प्रसन्नचन्द्र सूरि कृत 'रावणि पार्श्वनाथ फागु' के प्रथम भास मे एक दूहा के आठ रोला आये हैं। 'भरतेश्वर चक्रवर्ती फागु' मे एक दोहे के बाद तीन रोला आये हैं। निम्नलिखित कृतियाँ रोला और दूहा छन्द मे निबद्ध है :— जिनपद्म सूरि कृत 'स्थूलि भद्र फागु', राजशेखर सूरि कृत 'नेमिनाथ फागु', कृष्णवर्षीय जयसिंह सूरि कृत प्रथम तथा द्वितीय 'नेमिनाथ फागु', जयसिंह सूरि का पहला 'नेमीनाथ फागु', प्रसन्नचन्द्र सूरि कृत 'रावणि 'पार्श्वनाथ फागु' अज्ञात कवि कृत 'पुरुषोत्तम पांच पाण्डव फागु', अज्ञात कवि कृत 'भरतेश्वर चक्रवर्ती फागु' और 'कीर्तिरत्न सूरि फागु'।

जैसा कि स्थूलिभद्र फागु से स्पष्ट है कि फागु गेय रूपक हैं। श्रावको और जनता के गाने तथा अध्ययन करने के लिए ही इन फागुओं की रचना हुई है, अतः इसमे भाषा छन्द रोला वेग के साथ पाठ करने योग्य छन्द है। भास के प्रारम्भ मे

साखी जैसा आया दोहा एक प्रकार से विराम की स्थिति उद्भूत करने के लिए प्रयुक्त किया गया है। रोला मे जहां प्रवाह, आरोह गति, लय का नैरन्तर्य है, वहां दोहा मे अवरोह, स्थिरता और विराम है। इसी हेतु सगीत की सुविधा के लिए इसका छन्द विधान सानुरूप किया गया।

१. सादा दोहा :— भास का दोहा सादा है। 'जिनचन्द्र सूरि फागु' सादे दूहें मे निबद्ध है। दोहा की व्युत्पत्ति 'द्विपथा', 'दोग्धक', द्विपथक' तथा 'द्विपदिक' आदि से मानी जा सकती है। इसका सबसे प्राचीन उदाहरण 'विक्रमोर्वशीय' नाटक के चतुर्थ अङ्क मे मिलता है जो कि अपभ्रंश भाषा मे निबद्ध है :—

मइ जानिअं मियलोयणी, णिसयरु कोइ हरेइ।
जाव णाण्व जलि सामल, धाराहरू वरसेइ॥

यह दोहा कालिदास कृत है, या प्रक्षिप्त, यदि इस विवाद मे न पडा जाये तो प्राकृत पेंगलम का साक्ष्य मान्य है, जिसमे दोहे के अनेक भेद, उपभेदों की चर्चा की गई है। शब्द योजना, उक्ति वैचित्र्य और भाव गुम्फन की दृष्टि से यह छन्द पूर्णतया उपयुक्त हैं। 'जिनचन्द्र सूरि फागु', समग, समुधर, और पद्म का 'नेमिनाथ फागु', 'गुणचन्द सूरि का 'वसत फागु' अज्ञात कवि कृत 'मोहिनी फागु', 'सालिभद्र फागु', 'रावण पार्श्वनाथ फागु', 'पार्श्वनाथ फागु', 'पुण्यरत्न सूरि फागु' मे सादा दूहा ही व्यवहृत हुआ है।

२. सादा दूहा मे समचरणो मे और विषम चरणों मे ११ मात्राओं का विधान है। जबकि रोला. मात्रिक समछन्द का एक भेद है। प्राकृत पैंगलम् के अनुसार इस छन्द के प्रत्येक चरण मे २४ मात्रायें और अन्त मे गुरु (S) रहता है।[1] भिखारीदास ने केवल २४ मात्रा के चरण का उल्लेख किया है और यति अनियमित बतलाई है।[2] प्रचलित परम्परा के अनुसार रोला में ११, १३ पर यति का विधान है।

परन्तु फागुओं मे ये बन्धन शिथिल रहे हैं। कही भी कठोरता के साथ उनके प्रयोग में या यति विधान मे दुराग्रह नही रहा है। दूहा छन्द का निर्वाह अवश्य ठीक हुआ है। वर्णन सौन्दर्य की दृष्टि से भी रोला छन्द उपयुक्त रहता है।

३. लटकणियां :— फागु काव्य गेय रूपक हैं, यह पहले भी दोहराया जा चुका है, इसकी प्रतीति फागुओ की छन्द रचना से भी होती है। दोहा अथवा रोला जैसे मात्रिक छन्दो के प्रारम्भ मे कुछ फागुओ मे 'अहे', 'आहे' अह' जैसे लटकणियों का प्रयोग है। यह सचेत ध्वनि है, गायन के प्रारम्भ में इसका प्रयोग

---

१. प्राकृत पैंगलम्, १।१९।

२. भिखारीदास, छन्दो० पृ० ३०।

सचेत करने के लिए किया जाता है। संभवतया आलाप भरने के लिए ये लटकणियां माध्यम रहे होगे। लठकणियाँ का प्रयोग 'जिनचन्द्र सूरि-फागु', राजशेखर, जयशेखर, समुधर और समर के 'नेमिनाथ फागु', 'पुरुषोत्तम पाँच पाण्डव फागु', गुणचन्द्र सूरि कृत 'वसत फागु', 'हेमरत्न सूरि फागु', 'वाहणानी फाग', 'अमर रत्न सूरि फाग', 'आदीश्वर फाग', इत्यादि मे हुआ है।

(आ) प्रयोग :—(अन्तर्यमक प्रधान दोहा निवद्ध फागु कृतियाँ)

शनैः शनैः फागु काव्य-रूप लोकप्रिय होता गया और शिष्ट काव्य मे स्थान पाता गया। विदग्ध भावो की अभिव्यक्ति के लिए यह छंद रचना सर्जनानुकूल थी, परन्तु अभिनवता के कारण छन्द-विधान मे नये प्रयोग किये गये। अन्तर्यमक वाला दोहा उसी प्रकार का प्रयोग है।

अन्तर्यमक प्रधान दोहा:— जितने भी प्राचीन फागु हैं उनमें अन्तर्यमक वाला दोहा न होकर सादा दोहा आया है। इससे यह आभास होता है कि अर्थाभिव्यंजना के सौंदर्य और चमत्कार प्रदर्शन के लिए इस छद का प्रयोग हुआ है। यद्यपि इस दोहा के प्रयुक्त करने वाले कवियो को भास विभाजन का अच्छा ज्ञान था, परन्तु अर्थ चमत्कार के लिए उन्हे अन्तर्यमक (Internals rhyme chain) का प्रयोग करना पडा है। वसन्त विलास मे इनका आभास भी मिलता है —

पहिलउ सरसति अरचिसु, रचिसु वसत विलासु,
फगु पयड पयवर्धिहिं सवियमक भल भास ।[1]

इससे ज्ञात होता है कि कवि को परम्परा का अच्छा ज्ञान था। यों यमक का चमत्कार कालिदास के 'रघुवश' मे भी मिलता है, जिसका प्रयोग काव्यगत सौंदर्य-बोध के लिए किया गया है। यमक अलकारद्वार अर्थ बोध बढ़ाने की प्रतीति इन फागुकारो को भी थी। सोमसुन्दर सूरि ने तभी लिखा है.—

श्री नेमेः परमेश्वरस्य यमकालकार सार मनः
स्मेरीकारकरगसागर महाफाग करिष्ये नवम् ॥[2]

'वसंत विलास' के इस छन्द के स्वरूप पर अब कुछ विचार कर लिया जाय। इस छन्द को हस्तलिखित प्रति मे 'हवई दुआलु' कहा गया है और दू०, जो कि दूहा का सक्षिप्तिकरण है, जो कुछ हस्तलिखित प्रतियो मे प्रत्येक छन्द के बाद प्रयुक्त किया गया है। इससे यह आशय निकलता है कि छन्द सरचना दोहा मे मिलती-जुलती होनी चाहिए। सामान्य स्थिति में सम चरणो १३ और विषम

---

१. वसन्त विलास, कडी १।
२. सोम सुन्दर सूरि कृत 'रग सागर नेमि फाग' प्रारम्भिक श्लोक।

चरणो मे ११ मात्राए दूहा या दूहा की सरचना करती है। परन्तु फागुओ मे अन्तर्यमक के विधान हेतु छन्द- विधान मे दोहा परिवर्तित किया गया है। यदि वसत विलास मे फागु की छन्द सरचना पर विचार किया जाय तो उसमे अन्तर्यमक के विधान हेतु छन्द-विधान मे दोहा परिवर्तित किया गया है। यदि वसन्त विलास मे फागु की छन्द सरचना पर विचार किया जाय तो उसमे अन्तर्यमक सहित १२+११ मात्राओ का विधान मिलता है। बीच में चार मात्राओ का अन्तर्यमक छन्द के प्रथम चरणान्त मे और ४ मात्राओ का अन्तर्यमक दूसरे चरण के प्रारम्भ मे आया है। १३ से १२ मात्राए होने का कारण यह है कि प्रथम चरण का अन्तिम अक्षर हमेशा लघु करके इस प्रकार का क्रम विधान किया जाता है कि गति मे तीव्रता उत्पन्न की जा सके और चरणो को सम किया जा सके।

लेकिन वसत विलास में कवि इस नियम के प्रति पूर्णतया प्रतिबद्ध नही रहा है। उसने स्थल-स्थल पर इस नियम को तोडा है। वसन्त विलास छन्द शास्त्रीय दूषण (Prosodic Contamination) से अधिक ग्रस्त है, यही कारण है उसका छन्द विधान रपटीला और लचीला है। १२ मात्राओ का सम चरण कही लम्बा हो गया हे तो कही ११ मात्राओं वाला विषम चरण, अधिक लम्बा, तथा अधिक मात्राओ वाला हो गया है। जैसे:—

अलि मकरदिहि मुहरिया सवि सहकार = १४+१२
मद सुरभि हिए लक्षण-दक्षण वाह समीर = १३+१२

इस प्रकार वसन्त विलास मे यह छन्द लचीला होकर आया है। इस लचीलेपन के कुछ कारणो पर श्री मोदी ने प्रकाश डालते हुए कहा है :—

(१) इस काव्य (वसन्त विलास) की रचना गाने के लिए हुई और यह लोकप्रिय रचना थी। अत: इसमें न केवल शब्द (Dictional) अपितु छद सबधी विसगतिया पाना स्वाभाविक है।

(२) कही-कही 'रे' ए, अहो जैसे लटकणियां (Music Partices) का प्रयोग होने से मात्रा-विधान असयत हो गया है।

(३) बहुत से छन्द, छन्द से निबद्ध होकर 'फागुनी चाल' मे लिखे गये हैं। जिससे वे फागु के समान गाये जा सके हैं। अतः छद और मात्रा की कठोरता बरतने का प्रयास नही हुआ है।

इसके अतिरिक्त श्री मोदी ने इसका संबन्ध ध्वनि विज्ञान से भी बैठाया है।[1]

मोदी के द्वारा निकाले गये निष्कर्ष, निश्चित रूप से सही हैं। वसत-विलास

---

१. M. C Modi, Vasant vilas, Introduction.

का छन्द-निर्धारण करते समय मोदी ने अपना यह मत दिया है कि वसंत विलास का छन्द विधान दुहानो चाल है, कठोर 'दुहा' (दोहा) नहीं है।[1]

श्री हरी वल्लभ चूनीलाल भायाणी का मत है कि यह छन्द उपदोहक है जिसमे १२+११ मात्राओ का विधान किया गया है। इसका असदिग्ध समर्थन जय सुन्दर सूरि के सस्कृत फागु 'महावीर स्तवन फागु बन्ध'[2] से मिलता है, जिसमे फागु कि नाम से अभिहित छन्द मे १२+११ मात्राए हैं।[3]

श्री रामनारायण पाठक इस छन्द मे रोला (२४ मात्राओं) का समावेश पाकर रोला का भ्रम उत्पन्न करते हैं।[4]

अन्तर्यमक प्रधान दोहे का प्रयोग अर्थ चमत्कार एवं गति को तीव्र बनाने तथा चरणों को गाने हेतु सम बनाने को हुआ है। इस दोहा का प्रयोग भी बहुलता से किया गया। १५ वी शती के प्रथम चरण से ही इस छन्द रूप का प्रयोग प्रारम्भ हो गया वसन्त विलास के अतिरिक्त जयसिंह सूरि कृत 'नेमिनाथ फागु', अज्ञात कवि कृत 'जम्बुस्वामी फागु', मेरुनन्दन कृत 'जीरापल्ली पार्श्वनाथ फागु', जयशेखर सूरि कृत प्रथम 'नेमिनाथ फागु', 'नारी निरास फाग' और 'हरिविलास', 'हेमरत्न फागु', 'अमर रत्न सरि फागु', जयशेखर सूरि कृत द्वितीय 'नेमिनाथ फागु' मे अन्तर्यमक वाले दोहे को प्रयुक्त किया है। लय का विधान और उसके सम के लिए आन्तरिक लय (Internal Rhyme chain) की व्यवस्था की गई है।

२. **फागु बनाम फाग** :—फागु काव्य के इतिहास मे विचित्र बात यह हुई कि अन्तर्यमक वाला दोहा ही न केवल इस काव्य रूप का प्रतिनिधित्व कर बैठा अपितु उस पर छा गया। उपरिगणित कृतियां इस छन्द मे निबद्ध होने के कारण, प्राचीन फागुओ की अपेक्षा काव्य के उत्तरोत्तर विकास को सूचक है। तत्पश्चात् अन्तर्यमक वाले दोहे का अर्थ विकास होता गया। इस छन्द की फागुओं मे इतनी

---

१. The Metrical from of V. V is only the दुहानीचाल and not a Strict दूहा. (M C. Modi, Vasant Vilas, Introduction)

२. K. B vays, महावीर स्तवन फागु बंध of Jay Sunder Suri, a rare Sanskrit Phagu poen, General of the University of Bombay, 802—1961, P. 129—180

३. 'वसन्त विलास' ना छदनु सविस्तर पृथक्करण करीने मे से विषम चरण मा बार मात्रा अने समचरणमां अगियार मात्रा धरावतो उप- दोहक छंद (१२+११ मापना प्रसिद्ध दोहानो एक प्रकार) होवान वशी- वेलु।' (हरि विलास एक मध्यकालीन जैनेतर फागु काव्य, स्वाध्याय, अङ्क ३, अक्षय तृतीया।

४. रामनारायण पाठक, प्राचीन गुजराती छन्दो, १९४८, १५६–१६०।

अन्तर्भुक्ति हुई और इस काव्य से इतना सम्बद्ध हो गया कि इस छन्द का नाम ही फागु पड गया। यह सत्राति जयशेखर सूरि के प्रथम 'नेमिनाथ फागु' से ही परिलक्षित होती है। इस फागु मे प्रारम्भिक २४ कडियां अन्तर्यमक वाले दोहे मे रचित हैं। बाकी का काव्य 'भास' मे निबद्ध है, जिसमे प्राचीन फागुओ का छन्द व्यवहृत हुआ है। एक दोहे के बाद कभी तीन तथा कभी चार रोला का विधान हुआ है।

परवर्ती फागुओ मे जितने भी फागु छन्द-वैविध्य परक लिखे गये, उनमें फागु अवश्य ही एक छन्द होता है तथा जिसमे अन्तर्यमक का ही प्रयोग मिलता है।

फागु छन्द का विघटन वसत विलास मे ही नही हुआ है, अपितु अन्य कृतियो मे भी यह परिलक्षित होता है। जैसे जयशेखर सुरि के 'नेमिनाथ फागु' मे १२+१२ मात्राओ का विधान किया जा चुका है। यहाँ सम चरणो मे कवि अन्तिम वर्ण को लम्बा कर गया है, यद्यपि वह सचेत रहा है, कि लघु वर्ण देकर ११ मात्राओ का आभास करा सके। इसके सम्पादक का तो यह दावा है 'The present फागु poem is written by a poet who was also a sanskrit poet of distinction and naturally the purity of metrical from a more preserved in this फागु than in वसत विलास।'[1]

मेरुनन्दन कृत 'जीराउलीपार्श्वनाथ फागु' मे छन्द-विधान १२+१२ मात्राओं का रखा गया है।

यद्यपि अन्तर्यमक छन्द या फागु की सरचना १२+११ की रखी गई, पर इस नियम को लचीला बनाया, इसके गेय तत्व ने। गाना जितना अधिक लोकप्रिय होगा, उतना ही छन्द-विलास लचीला होगा, साथ ही लिपिबद्ध करने पर उसमे उतना ही 'प्रोजेडिक कटेमोनेशन' (छन्द शास्त्रीय दोष) होगा।

इस छन्द के लिए 'फागु', 'फागनी देशी', 'फागनी ढ़ाल' आदि शब्दो का भी प्रयोग हुआ है। कई स्थलो पर फागुबन्ध होने का उल्लेख हुआ है।

(१) थूलिभद्द मुणिवह भणिमु, फागु बन्धि गुण केवी (सिरिथूलिभद्द फागु)
(२) फागु बधि पहु नेमि जिणु गुण गाएसउ केवी (नेमिनाथ फागु)
(३) फागबधिए गुरु विनती, भाव भगति भोलिग सजुना (देवरत्न सूरि फागु)

इ—छन्द वैविध्य परक फागु कृतियां :— प्रयोगो मे अन्तिम तथा व्यापक प्रयोग छन्द वैविध्य परक परम्परा का है। परवर्ती फागुओ मे अधिकाश फागु छन्द वैविध्य परम्परा के अन्तर्गत लिखे गये हैं, इन फागुओ मे अनेक छन्दो का प्रयोग

१. गुर्जर रासावली, पृ० १३।

किया गया है जिससे यह अनुभव होता है कि फागु काव्य न केवल गेय रहे अपितु पाठ्य हो गये और फागुओ का स्वरूप शिष्ट काव्य के रूप मे निखरता गया। 'नारायण फागु' की रचना रास, अन्दोला, फागु (अन्तर्यमक प्रधान दोहा), अढैया से हुई है। माणक्य सुन्दर सूरि कृत 'नेमिश्वर चरित फागु काव्य-बंध' मे इसी पद्धति को अपनाया गया है। ८८ कडियों का यह काव्य छन्द-वैविध्यता से आपूरित है। प्रारम्भ मे सस्कृत श्लोक, पीछे रास, अढैया, फिर फागु या सामान्य क्रम है। पर किसी खण्ड मे फागु नही है (खण्ड ४, ६, ९,) किसी मे अढैया (खण्ड ५, १०) का अभाव है, खड ७ मे फागु कई बार आया है, १३ मे श्लोक और रास है। सस्कृत श्लोको मे भी विविध छन्द हैं। 'रास' शीर्षक वाली कडियां भी एक निश्चित ढाल मे नही हैं, वैविध्यपूर्ण देशी ढालो मे है।

सोम सुन्दर सूरि कृत 'रंग सागर नेमि फाग' तीन खण्डो मे निवद्ध कृति है। प्रत्येक खण्ड के प्रारम्भ मे सस्कृत के प्राकृत श्लोक अथवा प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी के वृत्त वद्ध श्लोक, रासक, अन्दोला, फाग आये है, यही सामान्य परम्परा रही है। कही-कही बीच मे एकाध सस्कृत का छन्द आ जाता है, अथवा सामान्य उपक्रम मे थोडा उलट-फेर हो जाता। पहले खण्ड के ३१ वें छन्द मे, दूसरे के २७ और ३१ वें छन्द मे, तीसरे के पहले और आठवें छन्द मे तथा इसी के १८ और १९ वें छन्द में गुजराती का शार्दूल-विक्रिडित छन्द आया है। इससे प्राचीन गुजराती की वृत्त रचना पर प्रकाश पडता है।

'देवरत्न सूरि फाग' ६५ छन्दो मे निवद्ध काव्य है, जिसमे एक सस्कृत श्लोक, पीछे रास (देशी) अढ़ैया, फिर फाग, यही प्रमाणक्रम है। ५७ छन्दो मे ग्रथित 'हेमविमल सूरि फाग' भी तीन खण्डो मे विभक्त, फाग और अन्दोला छन्द मे लिखा ग या है।

इस प्रकार भिन्न छन्द वाले प्रयोग जो खुल निकले तो चलते रहे। इस प्रयोग को स्वीकारा और ग्राह्य वनाया गया धनदेव गणि कृत 'सुरगामिध नेमि फाग', आगम माणिक्य कृत 'जिनहंस गुरु नवरंग फाग', अज्ञात कवि कृत 'राणपुर मडन चतुर्मुख आदिनाथ फाग', कमल शेखर कृत धर्ममूर्ति गुरु फाग', 'सुमति सुन्दर फाग', धर्म सुन्दर कृत 'नेमिश्वर वाल लीला फाग', विद्याभूषण कृत 'नेमीश्वर फाग', 'पार्श्वनाथ वसंत विलास फागु', 'हेमविमल सूरि फाग' (द्वितीय) आदि मे।

इनमे अधिकांश कृतियां सस्कृत के श्लोको से मुक्त है, परन्तु 'वसत विलास' और 'हरिविलास' की तरह वे उद्धृत न होकर कवियो द्वारा स्वरचित हैं। इनमें काव्य, श्लोक, आर्या आदि छन्दों का प्रयोग हुआ है। दूसरे, वैविध्यपूर्ण छन्द विधान का अपना कोई क्रम विधान नही है। कोई छन्द किसी कृति में पहले आया है, तो दूसरी कृति मे वाद मे। इनके अतिरिक्त शार्दूल विक्रीडित, मालिनी, गीतिका आदि सस्कृत वृत भी आये हैं।

प्रमुख छन्द इस प्रकार हैं :—

(१) फाग :—अन्तर्यमक प्रधान दूहा है।

(२) अढ़ैया :— १६+१३ मात्राएँ। पहला चरण चरणानुकूल, दूसरा चरण दोहा का उत्तरार्द्ध+२ मात्राओ का गीत वर्णन (Song syllable)। इस प्रकार का छन्द-विधान अढैया मे पाया जाता है।

(३) अन्दोला :– दूहा की ११ मात्राएँ सम चरण मे तथा विषम मे भी ११ मात्राओ के योग से अन्दोला का पूरा चरण बनता है। दूसरा चरण १०+१० मात्राओ का (८ मात्राएँ+२ मात्राएँ गीत वर्ण) होता है। दूसरे चरण की लय, पहले चरण से भिन्न पडती हैं।

(४) रास :— यह तीन चरण वाला छन्द है। पहला चरण तथा दूसरा चरण १६+१६ मात्राओ का। तीसरा चरण १३ मात्राओ वाले दोहे का उत्तरार्द्ध है। दूसरे चरण का अन्तिम शब्द तीसरे चरण के पहले शब्द के साथ यमक-सम्बन्ध से मुक्त हैं।

अन्य छन्दो मे कनक सोम कृत 'मंगल कलश फाग' का अधिकाश भाग दोहा, चौपाई और देशी ढाल मे है। इस फागु मे त्रोटक छन्द भी आया है। जयवंत सूरि कृत 'स्थूलिभद्र कोशा प्रेम विलास फाग' फागुनी ढाल मे निबद्ध है।

इस प्रकार इस काव्य रूप मे छन्द विधान सबधी उत्तरोत्तर परिवर्तन आते गये हैं।

हरि विलास

रचना काल– १५ वीं शती का पूर्वार्द्ध

[फाग]

पूजीय चपकि भारती आरती करीय कपूरि ।
गोविंद-ना गुण गाइसिउँ थाइ सिउँ पातक दूरि ।। १

पणमीय गुण-तणु नायक दायक श्रेय अनन्त ।
गाइसिउ चीति आराहीय राहीय-रुपणि-कंत ।। २

श्लोक:

ततोऽखिल-जगत्-पद्म-बोधायाच्युत-भानुना ।
देवकी-पूर्वसन्ध्यायामाविर्भूतं महात्मना ।। ३ [१] (वि. पु. ५, ३, २)

[फाग]

जेह-नि उदरि वे अवतर्या अवतर्या (?) ईशना अंश
उर्वीय भार ऊतारवा तारवा यादव वंश ।।४

बालपणूँ मनि रोपीय गोपीय रूप अनन्त
अवनीय भार उथापिवा थापिवा मारगि सत ।। ५

जनमिउ चतुर्भुज-देव की देवकी-सारिसि बाल (?)
वसुदेव गोति-थिउ छूटउ खूटउ कंस-नु काल ।। ६

श्लोक:

सा विमुक्त-महारावा विच्छिन्न-स्नायु बन्धना ।
पपात पूतना भूमौ म्रियमाणाऽतिभीषणा ।। ७ [२] (वि. पु. ५, ५, १०)

[फाग]

जोइन-परिक्रम-पूतना (?) पूतना कीधी अचेत ।
अवतरिउ कोईय मानव दानव-वंश-नु केत ।। ८

श्लोक:

ततः कटकटा शब्द-समाकर्णन-तत्परः ।
आजगाम व्रज-जनो ददृशे च महाद्रुमौ ।। ९ [३] (वि. पु. ५, ६, १८)

कृति की भाषा परिमार्जित, संशोधित, निथरी हुई और साहित्यिक है। काल-निर्धारण की दृष्टि से यह भाषा १५ वीं शती के पूर्वार्द्ध की है। इसका रचना वैभव 'वसंत विलास,' 'रंग सागर फागु' तथा 'रंग तरंग फागु' के अधिक समीप है। इसमे सविस्तार कथानक के सन्दर्भ मे वर्णन करने की शैली 'वसन्त विलास' जैसी ही अपनाई गई है, अतः इसका रचनाकाल सम्वत् १४०० के लगभग माना जा सकता है।

हरि विलास फागु

वैष्णव फागुओं में यह सबसे सुन्दर, काव्य बोध और सौंदर्य-बोध से आप्लावित फागु है। कृष्ण और गोपिकाओं की वास्तविक-क्रीडा और विशिष्टतया रास-क्रीडा इसकी वर्ण्य वस्तु है, परन्तु कवि ने कृष्ण द्वारा किये गये सभी लोकहित से सम्बन्ध कार्यों का वर्णन किया है। कृतिकार वैष्णव है, इसमे कोई सशय नहीं, क्योंकि कृष्ण की लीलाओ के साथ फागुकार ने कृष्ण के लोकरक्षक और लोकरंजक दोनो ही रूपो को प्रस्तुत किया है। दूसरे, कवि ने जितने भी श्लोक दिये है, वे सभी 'विष्णुपुराण' से उद्धृत हैं। केवल छद 'विष्णु पुराण' का नही है, परन्तु वह भी वैष्णव ग्रथ विल्वमगल कृत 'कृष्ण लीलामृत रासाष्टक' का है। एक अज्ञात ग्रन्थ का है।

इस कृति मे मगलाचरण के उपरान्त कवि ने कृष्ण के जन्म लेने का वर्णन (३-६), पूतना-वध (७-८) यमलार्जुन भजन (९-१०) यशोदा को विश्व-दर्शन (११-१२) गोपाल कृष्ण (१३), केशिवध १४-१५), गोवर्द्धन धारण (१६-१७), कालियदमन (१८-१९), प्रलंबवध (२०-२१), वृषासुर वध (२२-२३), दान लीला (२४-३१), रास लीला (३२), रासलीला मे शरद वर्णन (३२-३३), कृष्ण रूप वर्णन (३४-३७), वेणुवादन (३७-३८), गोपी-उत्कंठा और शृङ्गार वर्णन (३९-५६ कृष्ण की अन्तर्ध्यान लीला (५७-५९), गोपी विरह वर्णन (६०-७६) पुनर्मिलन (७७-८२), वसत वर्णन (८३-८६), विरहिणी वर्णन एव भ्रमरोन्योक्ति (९०-१००), रास लीला वर्णन (१०१-१११), गोपी रूप वर्णन (११२-१३२) किया है। इस प्रकार फागु वर्ण्य-वस्तु से ही नही अपितु काव्य-बोध से भी अत्यन्त समृद्ध एवं सशक्त है।

हरिविलाल फागु का आधार ग्रन्थ विष्णु पुराण रहा है, विशिष्टतया उसके पाँचवें अंश के अध्याय ३ का १३ वाँ प्रसंग ही उक्त फागु का उपजीव्य है। कृति अपूर्ण है। किस कारण से अपूर्ण रही, यह अज्ञेय है। कृष्ण के पूर्वार्द्ध जीवन की समूची झलकियां देकर ही कवि चुप हो गया है। इसीलिए फागुकार का कोई सकेत नही मिलता। सम्भवतया रचयिता का नाम वेद नारायण रहा हो क्योंकि एक छन्द मे आया है:—

> लिहरी-नाम तू वयणि रे नयण म मीचि गुलामि।
> वामिसु विरह-नी वेदना वेद-नारायण नामि॥

[फाग]

रीखतइँ नग-युग मोडीय ओडीय दूखल पास ।
सुरकलइँ दत दिखाडीय भाडीय पूरी आस ॥ १०

श्लोकः

मन्थानमुज्झ मथितुं दधि न क्षमस्त्वं ।
बालोऽसि वत्स विरमे'ति यशोदयोक्तः ॥
क्षीराब्धि-मन्थन-कृति-स्मृति-जात-हासो ।
वाञ्छास्पदं दिशतु नो वसुदेव-सूनुः ॥ ११ [८]

[फाग]

'जांण नँही तु विरोलीय गोलीय मेल्हि कुमार' ।
मुरकिउ 'सुमुद्र मइँ सोधीय सो घीय लीधु सार' ॥ १२
गाइ वृन्दावनि चारीय तारीय जमरण-नि वीरि ।
वावि वांसली वातु वातु गोकलि तीरि ॥ १३

श्लोकः

द्विपाठ- पृष्ठ-पुच्छार्ध-श्रवणैकाक्षि-नासिके ।
केशिनस्ते द्विधाभूते शकले द्वे विरेजतुः ॥ १४ [५] (वि. पु. ५, १६, १५)
आविउ तेखतु देखतु वेग तुरंग धरीय ।
केशीय कांन्हि विभाडिउँ फाडीउँ वदनि धरीय ॥ १५

श्लोकः

गोपांश्चाह जगन्नाथः समुत्पाटित-भूधरः ।
विशध्वमत्र त्वरिता कृत वर्ष-निवारणम् ॥ १६ [६] (वि. पु. ५, ११, १७)

फाग

कर-तलि परवत तोलीय रोलीय प्रलय-नु मेह ।
गोपियाँ गोधन गोपीय रोपीय परवत-गेह ॥ १७

[श्लोक]

आनम्य चापि हस्ताभ्यामुभाभ्या मध्यमं फणम् ।
आरुह्य भुग्न-शिरसो विननर्तोरु विक्रमः ॥ १८ (वि. पु. ५, ७, ४४)

[फाग]

जमण-नूं नीर निहालीय कालीय काढिउ नाग ।
नाथीय निश्चल वीधु दीधु फणि-शरि पाग ॥ १९

श्लोकः

मुष्टिना चाहनन्मूर्ध्नि कोपोऽप्यन्तो जनार्दने ।
तेनैवास्य प्रहारेण वहिर्याते विलोचने ॥ २० [८] (वि. पु. ५, ९, ३५)

[फाग]

मारता तीहुँ प्रलवन विलब न हूउ राम ।
माथइ मूंठि-निमोचनि लोचनि छाडिउ ठाम ।। २१

श्लोक:

उत्पाटयमे (?) कशृङ्ग तु तेनैवाताडयत्ततः ।
ममार सहसा दैत्यो मुखाच्छोणितमुद्गमन् ।। २२ [९ (वि पु. ५, १४, १३)

[फाग]

आविउ वृषासुर ताडतु पाडतु गोकुलि त्रास ।
कीधउ शृंग उपाडीय पाडीय प्राण-नु नाश ।। २३

माथइ महीय-नी गोलीय चोलीय पहिरी नारि ।
मधुरां ते वीकिवा चालीय झालीय देव मुरारि ।। २४

माटली मेल्हि न माहव आ हव थाइ असूर ।
लागसि खांपण आपण आ पण ऊगि सूर ।। २५

माधव मेल्हि कलाईय लाई लागइ वार ।
सुजडित चूडि विछूटसि वूटसि नव-सर हार ।। २६

मेल्हि रे कांवली कांवली कां बली आबु गमार ।
चूकिसु साथ रे सहीय-नु महीय-नु माथइ भार ।। २७

मेल्हि पटुलीय पल्लव वल्लभ देखइ गोप ।
अवसरि नही हरि आज रे लाज किस्यूं हिवइ लोप ।। २८

मांखण-कारणि भूंबि म हु विमणु दिउ कान्ह ।
ढोलि म गोली माहरी ताहरी जोइ न सांन ।। २९

कान्ह नवु करि रोपि म लोपि राउली आण ।
वाते लोक-नी लागि म मागि म महीय-नू दाण ।। ३०

वीकती महीय महीयारीय वारीय सिउं कहि कान्ह ।
महीय-नू दाण न होइ रे जो अम्ह दिइ तुं मान ।। ३१

श्लोक:

कृष्णास्तु विमल व्योम शरच्चन्द्रस्य चन्द्रिकाम् ।
तथा कुमुदिनी फुल्लामामोदित-दिगन्तराम् ।।३२ [१०] (वि.पु. ५ १३,१४)

[फाग]

कैरविणी जलि बहिकइ लहइकइ निशि मुकुरंद ।
हरिखिउ कान्ह विशारद शारद देखी चन्द ।। ३३

सजल कि जलहर नीलउ पीअलु पहिरणि चीर ।
वर सिरि सोहइ अलसीय अलसीय वानि सरीर ॥ ३४

झलकि मरकत कुण्डल मण्डल रवि-शशि बेह ।
चिहु भुजे झवकि केउर नेउर श्रीवत्स जेह ॥ ३५

सोहि खूप कृपालु कालु कान्ह युवान ।
वल्लव-वेख म लेखउ देखउ मगति-निधान ॥ ३६

सांभली हरि-वंश वाजतु गाजतु सजल कि मेह ।
हरि-विण प्रीति न मांडइ छांडइ गोपीय गेह ॥ ३७

'वेणु तइ सिऊ तप कीधउं य मीधूं य ताहरुं काज ।
हरि-अधरामृत पीवूं सीधूं य सरवस आज ॥ ३८

श्लोक:

निवार्यमाणाः पतिभिः पितृभिर्भ्रातृभिस्तथा ।

× × × ×

आत्मस्वरूप-रूपोऽसौ व्यापी वायुरिवास्थितः ॥ ३९ [११]

(वि. पु. ५, १३, पद्य; ५९, ५, १३, ६१ गद्य)

[फाग]

सांभली महूयरि मधुरीय वल्लवी धाइ ।
पितृ अनइ मातृ निषेधीय वेधीय माधव जाइ ॥ ४०

आवि रे आलि ऊतावली आवली वाजइ वंश ।
उर निरि मयण-ने ताडीय माडीय ऊडीय हंस ॥ ४१

केलि किसिउं करि गहिलीय वहिलीय पहिर न चीर ।
जेणइ त्रिभुवनि राचइं नाचइं ते वनि वीर ॥ ४२

मेल्हीय माणिक मोतीय प्रोतीय हार अमूल ।
चालीय श्रीरंग सांभरी तां भरी वर सिरि फूल ॥ ४३

परतीय करि कसतूरीय पूरीय सीस कपूरि ।
चालीय पूछती माग रे माग भरियां सिंदूरि ॥ ४४

चालीय एक निरंजन अंजनि रेखीय नेत्र ।
मयण-पयोधिक लहरीय पहिरीय नीलुं नेत्र ॥ ४५

पहिरीय रणकतां नूपुर रूप रची कर अंगी ।
चाली जगावती कांम रे कांम धरोय श्रीरंगि ॥४६

पहिरी अमूलिक अंशुक किंशुक-निवा शरीर ।
चालि गज-गति लहकति वहिकती अगरि आहिरि ॥ ४७

पहिरीय कालीय फालीय पालीय चाली नारि ।
रही मनि आप ऊवेरवी देखी गुरुजन बारि ॥ ४८

श्लोक:

काचिदावसथस्यान्तः स्थित दृष्ट्वा बहिर्गुरुम् ।
तन्मयत्वेन गोविन्द दध्यौ मीलित-लोचना ॥४९ [१२]
(वि. पु. ५, १३, २०)

[फाग]

सुणइ वयण न परिमल निरमल नामिउं(?) नीर ।
गासी यादव निरजन अन्जन-वानि शरीर । ५०

दोहतीय मेल्हि रे काजल काजल आँखि-नइ आलि ।
दरपण आपु मांजीय आंजीय नयण निहालि ॥ ५१

मेल्हि रे नूंजडी मूंजडी हु जडी मन्मथ-वाँणि ।
वयरीय विरहीय मारतु मार तु न करि काँणि ॥५२

ऊगिउ देखि निशष्कर शा कर बहिनि असूर ।
भेटि रे वनि मनि हरि धरी करि धरी फडस कपूर ॥५३

देखीय वाउलि लहिकती वहिकती नलिनीय नीरि ।
चाली रूप निशा भरा साँभरी काँन्ह आहीरि ॥ ५४

रूप भरी शरि मालति आलती करतीय कठि ।
चालीय ऊतर जोडीय छोडीय माँन-नी गंठि ॥ ५५

सिउं करु पचम राग रे राग धरीय श्रीरगि ।
जोइ न लोचन मीटीय वीटाय नाग सारंगि ॥७६

श्लोक:

गप्यश्च वृन्दतः कृष्ण-चेष्टा-स्वायत्त-मूर्त्तयः ।
अन्यदेश-गते कृष्णे चेरुर्वृन्दावनान्तरम् ॥५७ [१३] (वि.पु ५, १३, २४)

ता निवृत्तास्ततो गोप्यो निराशाः कृष्ण-दर्शने ।
यमुना तीरमागत्य जेगुस्तच्चरित मुदा ॥ ५८ [१४] (वि.पु. ५, १३, ४३)

[फाग]

गोपीय सविहुं देखतां दे खतां गिउ वन-माँहि ।
जाइवा-गति नही (?) गहिन रे वहिन रे वहिन रे नहीं अम्ह आहि ॥५९

गिउ हरि उलवी उलवी जवि लागी नारि ।
चालइ जलपति काँननि आननि देव मुरारि ॥६०

म करि अगरि अति आदर जादर चीर म ठोठी ।
साकर सा कर वाणीय वाणी करि हरि गोठी ॥६१

चूकीय देह-नु वांन रे कान्ह नही सखि गोठि ।
हरिविण परजली आँखडी आ खडी ऊडीय होठि ॥६२

आँग अनोपम वेपथ रे पथ आलि निहालि ।
मेल्हीय मन तणउ आमलु सामलु श्रीरंग भालि ॥६३

लि ह, र-नाम तूं वयणि रे नयण म मींचि गुलामि
वामिसु विरह नी वेदना वेद-नारायण नामि ॥६४

हरि गिउ हाथ विछोडीय छोडीय नव-नव नेह ।
सिउं करुं हरि हरि हरि जलपीय [जल पीय] छांडउं देह ॥६५

हरि-विण हूं करमाणीय पाणीय-विण जिम पांन ।
वयरी शशि जलइ रयणि रे नयणे न देखूं कान्ह ॥६६

एकली किम वनि भूलीय फूलीय पूछि न वेलि ।
वांहडी साहीय राहीय वाहीय गिउ हरि हेलि ॥६७

न रुचई चंदन चंदन चदु नही अभिराम ।
मनमथ-ताप न सहीय सही ए लिए हरि-नाम ॥६८

आलि रे मनमथ-आकुली आ कुली गमि न जाइ ।
आंणि रे कमल-नी पांखडी आंखडी टाढिक थाइ ॥६९

जिम जिम शशिहर सहीए हीए दहि अनगि ।
तिम तलि तपइ तलाईय लाईय चंदन अंगि ॥७०

भूलीय भमइ चद्रावलि वाउली थिई वन-मांहि ।
विलपति कान्ह गदाधर आ धरणीधर वाहि ॥७१

उगटि अगरि किसा कर सागर आगर थाइ ।
हरि-विण मनमथि आकुली आ गला ककण जाइ ॥७२

विरहणी रयणि न जातीय गातीय गीत निशंक ।
मेल्हिउं जंत्र निहालीय वालीय गयणि मयक ॥७३

हूं विरहानिल-अहि-गली सही गली ग्यां सवि अंग ।
लोचन अ जन म धरि रे अवरि रे ऊडिउ रग ॥७४

नखी मनि आधि समावि जवाधि न जंप न होइ ।
मेन्हि यशोमइ-नदन नदन-त्रिभुवन कोइ ॥७५

उरि विरहानलि फूँकीय मूँकीय गिउ हरि हाथ ।
गिउ रस देह-नु सूकीय चूकीय प्राण-नु नाथ ॥७६

श्लोक:

ततो ददृशुरायान्त विकास-मुख-पङ्कजम् ।
गोप्यस्त्रिलोक गोप्तार कृष्णमक्लिष्ट-मानसम् ॥७७ [१५]

(वि. पु. ५, १३, ४३)

काचिदालोक्य गोविन्द निमीलित-विलोचना ।
तस्यैव रूपं ध्यायन्ती योगारूढेव लक्ष्यते ॥७८ [१६] (वि. पु. ५. १३ ४६)

काचिद् भ्रू-भङ्गुर कृत्वा ललाट-फलकं हरिम् ।
विलोक्य नेत्र भृङ्गाभ्या पपौ तन्मुख-पङ्कजम् ॥ ७९ [१७]

(वि. पु. ५. १३. ४५)

[फाग]

गोपी इम मनि कलपतां जलपतां यादव-चन्द ।
दुख सवे हिवि नीठउँ दीठउ राय मुकुन्द ॥८०

आवति ते हरि हरिखीय निरखीय निरूपम-रूप ।
ध्यातीय ते मनि आणिउँ जाणिउँ ब्रह्म-सरूप ॥८१

भमहडी निलइ निरोपीय गोपीय कोपीय अंगि ।
वयण-कमल मन वीधूँय पीधूँय लोचन-भृङ्ग ॥८२

श्लोक:

आविउ वसत भूय-मडलि स्वर्ग छाँडी ।
तु पाँनि फूलि पहिलु वनराइ माँडी ॥

मुर्या अछि चिहुँ दशे सहइकार-वृक्ष ।
बइठा तिहाँ भ्रमर कोकिल कोटि लक्ष ॥८३

[फाग]

आविउ वसत विशेख तु पेखतु कान्ह-विलास ।
गोपीय-सिउँ मन भेलतु श्रीरंग रास ॥८४

कुसुम-पराग ऊडाडतु पाडतु विरहीयाँ त्रास ।
कामी-नाँ मन हरतु करतु शरद-नु नाश ॥८५

कोइल काननि कूजइ धूजइँ पथीयाँ-प्राँण ।
स्मर शर वेधक जाणीय ताणीय मूँकियाँ बाँण ॥

केसूय-कुसुम प्रकासिउँ भासिउँ वनह विशेखि ।
मानिनी-मान-निवारण वारुण अंकुश पेखि ॥८७

इलोकः

तु वेलि वउलसिरि केतकि रायचाँपा ।
देखी फिर्यां भमर जोइ किसाँ जि लाँपा ॥

हावया (?) ति मलयानल वेलि धाई ।
नाठा सवे कमल-मन्दिर-माँहि जाई ॥८८

[फाग]

चाँपलइ चंपक बहिकइँ विरहीयाँ साथ ।
परिमल केवड-केवडइ के वडइ ऊभीय हाथि ॥८९

मनमथ पीडि म पीडि म भीडि म पाडल-तूण ।
मारि म तू शर साँधीय आधीय लागसि खूण ॥९०

पच हुताशन मुनि-जन निज-नि प्रजालीय देह ।
देखीय फलीय ते नारिँग नारि गयाँ मन तेह ॥९१

इलोक

नीसाँसडा विरह-दुर्बल नारि मेल्हइ ।
सयोगि वा तरुण-लोक वसत खेलइ ॥

(जोगिंद एक पुण नेमिकुमार जोइ ।
शृङ्गार-हास्य-रस-माँहि पडइ न मोहि) ॥९२

[फाग]

देखीय कावीय फइरीय वइरीय भ्रमर म चूँबि ।
भोगवी करम-विपाकीय पाकीय केलि-नी लूँबी ॥९३

अलि नलिनी नवि वीधउ पारधि-कोम ।
सखि गुणि रूपि न लीजइ दीजइ कहि हिवइ दोस ॥९४

वेउल वेलि सवेलीय बेलीय विलसइ वीर ।
वहिनि कहि नि किम कीजइ दीजइ कहि हव हत्र मीर ॥९५

नवलु नित दित अलीयल अलीयल जंपी जाइ ।
नव-मदि मातीय मालती माल तीणइँ मिउँ थाइ ॥९६

परिवरि कटकि केवडी वेवडी मनि म-न वेढि ।
भोगवि भमर भलेरीय हेरीय कोमल केढि ॥९७

करमदी करहि विटालीय टालीय भमरला म मेल्हि ।
अनुपम थई नव-जोगण पोइणि पाय म ठेलि ॥९८

रस-भरि म-न करि कमलिनि मलिन मधुर सिउं नेह।
षहिसीय वेउल-नी कुली नीकली जाइसि एह ॥९९

इक युद करमदी किसिमिसि विमिम सि घरतीय राग।
माणि म मूरख इ खडी आँखडी सिउं वेउ भ ग ॥१००

श्लोकः

ताभिः प्रसन्नचित्ताभिर्गोपीभि' सह सादरम्।
रराम रास-गोष्ठिभिरुदास्चरितो हरिः ॥१०१ [१८]

रास-मण्डल-वन्धोऽपि कृष्ण-पार्श्वमनुस्थितः।
गोपी-जनेन नैवाभूदेक-स्थान-स्थिरात्मना ॥१०२ [१९]

हस्ते प्रगृह्य चैकैका गोपिकां रास-मण्डले।
चकार तत्कर-स्पर्श-निमीलित-दृश हरि ॥१०३ [२०]

ततश्च प्रवृत्तो (?) रासश्चलद्वलयनिःस्वनः।
अनुयात -शरतकाव्य-गोपी-गीतिरनुक्रमात् ॥१०४ [२१]

(वि पु ५, १३,४८–५१)

फाग]

पाखलि मांडलि रोपीय गोपीय खेलइ रास।
गाइ ते सामीय-यादव माधव माधव-मास ॥१०५

परवरिउ मृग जिम हरिणीय करिणीय यूथि गयद।
आलवइ कठ निहालीय आलीय-माँहि मुकुंद ॥१०६

श्रीरग अ तरि अ गना अ गे-ना विलरइ भेदि।
परिरभ दि गोपी तेह-नि जेह-नि न फलइ वेद ॥१०७

श्लोक

अङ्गनामङ्गनामन्तरे माधवो।
माधवं माधय चान्तरेणाङ्गना॥

इत्थमाकल्पिते मण्डले मध्यगः।
सजगौ वेणुना देवकी-नन्दनः ॥१०८ [२२]

(विल्वमगलकृत, कृष्णामृत, रासाष्टक,)

[फाग]

निशि-भरि नाचइ गोपीय लोपीय लाज-नी रेख।
दह दिसि दिसवि भमरीय समरीय माधव-वेख ॥१०९

नचइ नितु नवूं नारीय चारीय श्रीरग-साथि।
राग वसंत ते आलवि चालवि वल्लकी हाथि ॥११०

मांन वरइ एक तालीय तालीय कर-तलि नारि ।
थापिउँ जीणइ द्रूपदि द्रूपदि गाइँ मुरारि ॥१११

नाचइ गोप-किसोरीय गोरीय चपक वानि ।
हाथि रे सोहई हाथल साथल रंभ-समान ॥११२

कानि रे नागला हींचई सींचई रस सिणगार ।
कटि-तटि मेखल खलकि झलकि उरवरि हार ॥ १३

खेलइ वेणि ढलकती झलकती झालि कपोलि ।
रेखीय अंजन नयणि रे वयणि रे भरीय तंबोल ॥११४।

नयणे जीतु लाएणु रे वेणु हराविउ कठि ।
कांचू-कसण कि त्रूटइ छूटइ मान-नी गंठि ॥११५

अधर कि बिंब प्रवालीय वालीय दशनि सुरंग ।
नाकि अमूलिक मोतीय जोतीय जाणइ कुरग ॥११६

बांहडी झलकि केउर नेउर झमकि पाय ।
नाचतां नीरज-नयणीय रयणी क्षण इक थाइ ॥११७

खेलइ तेवड-तेवडी केवडी-रूंप-सो वान ।
दीस सवि सुरपुर-वसी उरवसी-रंभ-समान ॥११८

कीधु अधर भुयगमि सगमि निशि डसी खड ।
देखीय झबकी आफणी आ फणी वेणीय दड ॥ १९

मृगमद-तिलक निहालि रे भालि रे भालि अनंग ।
आठमि-केरु चंद कि मंद कि मांहि कुरंग ॥१२०

नयणि निवेशीय अंजन खजन जाणि विलास
जीतु शशिहर वयणि रे गयणि रे गिउ विमासि ॥१२१

देखीय मोतीय नाक कि झाक करइ तिल-फूल ।
कानि कि झबकि झालि रे लालि नहीं ते-मूल ॥१२२

कघर कि जगत्र-वदीतुँ जीतुँ य बिंब-प्रवाल ।
इक वनि तप करि सायरि कायरि कीधु काल ॥१२३

कंठि सदा वसइ वाणीय जांणी कुंब त्रिरेख ।
वीणा-वेणु-नु जय करी मय-करी काढीय लेख ॥१२४

हार एकाउलि गग तुङ्ग कि कुच नग-शृंग
पामिवा कलीय कि चपकि झंप करि वहु भृङ्ग ॥१२५

नील नदी कि रोमालीय वालीय त्रिवलि तुरंग ।
झीलइ मनमथ-कांमीय पामीय रति रत रग ॥१२६

नाभि रसातलि परिहरी फरहरी नव रोम-राइ ।
कय-कलसामीय राखिया चाखिया उरई कि जाइ ॥१२७

मांडिउ मनमथि मडल मंडल-कटि-तट जेह ।
मुनि-जन-नां मन मारीय धारीय काम क देह ॥१२८

सांभली रणकतां हंसक हंस गयां वि न मासि ।
ऊपम उदर-सिउं करतु डरतु गिउ हरि नासि ॥१२९

कांमिनी काम-तरगिणी त रगिणी सुरत-विलासि ।
वांहडी वेउ मृणालीय वालीय कटि-तटि पाशि ॥१३०

युवन-जन-दुख-विमोचन लोचन चंचल मीन ।
अहिनिशि मिलइ अशोक कि कोक कि कुच-युग पीन ॥१३१

अरुण चरण कर-कमल कि अमल कि अमल कि पुलिन नितंब ।
दीसइ ए मुख-चंद्र कि चद्र-तणु प्रतिबिंब ॥१३२

वसंत विलास

[परिचय के लिए भूमिका के अन्तर्गत
'हिन्दी की आदिकालीन फागु कृत्तिया' देखे]

(१)

पहिलउं सरसति अरचिसु रचिसु वसत विलासु ।
फागु पयड पय बांधिहिं सधि यमक भल भास ॥

(२)

पहुतिय सिवरति सम रति हव रितु तणीय वसंत ।
दह दिसि पसरइ परिमल निरमल थ्या दिसि अ त ॥

(३)

वसंत तणा गुण गहगह्या महमह्या सवि सहकार ।
त्रिभुवनि जयजयकार पिकारव करइं अपार ॥

(४)

पदमिनी परिमल वहिकइं लहकइं मलय समीर ।
मयणु जिहा परिपथीअ पथीय धाइं अधीर ॥

(५)

मानिनि जन मन क्षोभ न शोभन वाउला वाइं ।
निधुवन केलि वलामीअ कामीअ अंगि सुहाइं ॥

(६)

मुनि जन नां मन भेदइ छेदइ मानिनि मान ।
कामीअ मन आनदइ कदइ पथिक पराण ॥

(७)

घनि विरच्यां कदलीहर दीहर नंडल माल ।
तलीआ तोरण सुन्दर चदरवालि विशाल ॥

(८)

खेलन वावि सुखालीय जालीअ गुष विश्राम ।
मृगमद पूरि कपूरिहिं पूरिया जल अभिराम ॥

(९)

रंगभूमी सजकारीअ झारीअ कुंकुम घोल ।
सावन साकल साधीअ बाधीअ चपक डोलि ॥

(१०)

तिहां विलसइं सवि कामुक जामुक हृदय चइ रगि ।
काम जिसा अलवेसर वेस रचइं वर अ गि ॥

(११)

अभिनव परि शिणगारीअ नारीअ मिलइं त्रिसेसि ।
चदनि भरइं कचोलीअ चोलीअ मण्डन रेसि ॥

(१२)

चन्दन वन अवगाहीय नाहीय सरोवर नीरि ।
तीण वनि दोधु प्रदक्षण दक्षण तणउ समीरि ॥

(१३)

नयर निरो पीअ ती वनु जीवनु तणउ युवान ।
वास भुवनि तिहा विलसइ जलसइं अक्ति अल आण ॥

(१४)

नव यौवन अभिराम ति रामति करइं सुरंगि ।
स्वर्गि जिस्या सुर भासुर रासु रामइं मन रगि ॥

(१५)

कामुक जन मन जीवनु ती वनु नयन सुरगु ।
राजु करइ नव भगिहि रगिहि राउ अनगु ॥

(१६)

अनिजई वसइं अनत रे वसत तिहां परधानु ।
तरूवर वास निकेतन केतन किशल संतानि ॥

(१७)

वनि विलसइ श्रीअ नदनु चदन चंद चु मीतु ।
रति अनइ प्रीति सिउं सोहए मोहए त्रिभुवन चीतु ॥

(१८)

गरूड मदन महीपति दीपति सहिणु न जाइ ।
फरइ नवी परि जुगति रे जगति प्रतापु न माइ ॥

चन्दन नन्दन गध, भोगिए भोगि सम्बन्ध,
भविकुल रणभरणाइ ए कामी कुणकुणइं ॥२४॥

रासक

धणवरि आदिय प्रभु वीनविउ, नविदसइ दिसरि रे,
माधव माधव भेटण आविन देव मुरारि रे ॥२८॥

धात सुणी प्रभु मणि अति हरखिए, निरखिय गृह परिवार रे,
निज परिवारिड जदव पहुतु वनह मभारि रे ॥२९॥

धण भरि नमती तरुणी करुणी, वरुणी चरण संचारि रे;
चालइ चमकत भमकत नेउर, केउर कटक विशाल रे ॥३०॥

× × ×

वेणिय वयणि भिपंतरि, भितरी रहिउ सिरि नाग,
अधर रग परवालिय, चालिय नावइ भाग ॥३३॥

× × ×

अढैयु

गजवड़ि पहिरइ जाल, सिरिवरि मौतिय जल,
कर्राजत कमलू ए, अति नख विमलू ए ॥३७॥

× ×

फागु

उठइ उसरवरि घाटडी, वाटडी जइ रमंत,
कंठि मनोहर किन्नरी पय पणमत ॥४०॥

आंदोला

नाजइ गोपियवृंद, वाइ मधुर मृदंग,
मोडइ भंग सुरंग, सांरग धर वाइन महुयरि ए,
कुलवण महुवर ए ॥४१॥

× ×

गाइ अभिनव फाग सांचवइं श्री राग,
नवगति मूकई पाग, सारंगधर ॥४३॥

कर लिइ पकज नाल, सिरिवारि फेरइ वाल,
छंदि हि वाजइं ताल, सारगधर ॥४४॥

× ×

तारा माहि जिम चन्द, गोपिय माहि मुकुन्द,
पणमई सुर नर ईंद, सारंग वर० ॥४८॥

रास

गोपिय लोपिय ठाण निरोपिय, वनिवनि भमई मुकुन्द रे,
वस्त्र पीचारी किहिं संचारी ? वोलित कुल नभ चन्द रे ॥५१॥

घाट घाट सवि वांवइ साहियर, अहियर तव कुण रंग रे,
अह्म मूकी तु मिमि हिव चालई ? पालइ गोपिय वृन्द रे ॥५२॥

× ×

फागु

गोपिय गोपति क्रीडत, हींडत वनह मझारि,
मारुत प्र रित व्रनभर, वन भर नमईं मुरारी ॥५७॥

× ×

निर्मल जमुनरि खेलत, हेलत हेल प्रवाह,
वातई चालइ छाहडी, वांहडी, प्रिय उत्साह ॥६०॥

अढैयु

क्रीडा करी गोविंद, विनमत सकल नारिंद,
पुहुता निज पुरीए, सहित अन्ते उरीए ॥६१॥

× ×

देव तणउ ए फाग, पढई गुणई अणुराग,
नवनिधि ते लहई ए, जे पणि सभलई ए ॥६४॥

नारायण फागु

इस कृति में वसन्तागमन पर कृष्ण के सपरिवार रास-क्रीडा करने का वर्णन किया गया है। इसमे सस्कृत का एक श्लोक आया है:—

पौराणैः कीर्तितो देव त्वामेव भुवनाधिपः ।
नतर्षि श्री जगदव द्यो ज्ञानी ध्यानी गुणी कविः ॥

'नतर्षि' शब्द के आधार पर मणिलाल बकोर भाई व्यास ने उक्त फागु को नतर्षि कृत माना है। लेकिन नतर्षि सज्ञा न होकर कृष्ण के लिए विशेषण प्रतीत होता है, जिसका अर्थ है—ऋषिगण जिसको नमन करते है। रचयिता सम्बन्धी दूसरी सम्भावना मणिलाल बकोर भाई व्यास ने प्रस्तावित की थी कि रचना, विषय और वर्णन कौशल की दृष्टि से नारायण फागु 'वसन्त विलास' जैसा ही फागु है। वर्णन साम्य है। अतः इनका रचयिता एक ही कवि यानी नतर्षि हो सकता है।[1]

'नतर्षि' शब्द के बारे मे पहले ही कहा जा चुका है। जहां तक 'नारायण फागु' और 'वसत विलास' के साम्य का प्रश्न है—वहा वैषम्य ही अधिक है। 'वसत विलास' मे सामान्य नायक-नायिका के विलास का वर्णन है तो 'नारायण फागु' मे कृष्ण और रानियो के विलास का। 'वसत विलास' का शृङ्गार उद्दाम है तो 'नारामण फागु' का मर्यादित। 'वसन्त विलास' मे अन्तर्यमक वाला दोहा आया है तो नारायण फागु छन्द वैविध्य परक परम्परा मे निबद्ध है। अतः दोनो रचनाएँ एक कवि की नही हो सकती हैं।

कृति मे पहले सोरठ तथा पीछे द्वारिका का वर्णन किया है। इसके बाद कृष्ण के पराक्रम और वैभव का यहाँ गान हुआ है। अन्त मे कृष्ण की सहस्र पट-रानियो और परिवार सहित की गई वन-क्रीड़ा का वर्णन हुआ है।

कृति साक्ष्य से इसकी रचना सम्वत् १४९७ मे हुई थी।

१. नरसिंह युगना कविओ, भाग २ सं० क० मा० मु०।

नारायण फागु

रचना काल–सवत् १४६७ से पूर्व

वन्निसु फागि नारायण, रायणमइं जसु पाइ,
तस गुण अणुदिण खेलत, हेल तजइ अपाइ ।।२।।

जबुय दीविंई भणिए, सुणिय ए सोरठ देस,
पवरग आगर गरुड़, वरुउ नहि सन्निवेस ।।३।।

× × ×

राज करई श्री रग , धरणी जस श्री रग,
यादव नायकु ए, वांद्दित दायकु ए ।।८।।

जरासिधु बल लोडिय, मोडिय नरपति लाख,
रणभरि कुणांव ऊगारिय, तारिय जद्दवसाख ।।९।।

× ×

उत्तर दक्षिण देस, पूरव लिई सविशेष,
पश्चिम राजुउ ए, नहि पराजु ए ।।१५।।

गोपिय सहस अठार, विहु ऊणु परिवार,
रूविहि रतीवतीए, गृह गुण गणवती ए ।।१६।।

फागु

आविय मास वसंतक, संत करइ उत्साह,
मलयानिल महि वायउ, आयउ कामगिदाह ।।१७।।

× ×

अढैयु

सोहइ फलि सहकार, कोइलि करई टहकार,
पचम रागू ए, जण सुह भागू ए ।।२१।।

× ×

नारिय तनना रंग, अभिनव कुल नारंग,
सिरि भरि सुरतरु ए, मोहई सुरनरु ए ।।२३।।

(१९)

कुसुम तणुं करि घणुह रे गुणह भमरला माल ।
लख लाघवि नवि चूकइ मूकइ शर सुकुमाल ।।

(२०)

मयणु जी वयणु निरापइ लोपइ कोइ न आण ।
मानिनी जन मन हाकइ ताकइ किशल कृपाण ।।

(२१)

इम देषी रिधि काम नी कामिनी किंनर कंठि ।
नेह गहेलीअ मानिनी मान नी मूंकइ गंठि ।।

(२२)

कोइलि आंबुला डालि हिं आलिहिं करइ निनादु ।
काम तणउ करि आइसु आयज पाडइ सादु ।।

(२३)

थभण थिय न पयोहर मोहु रचु म एमारि ।
मान रचउ किसा कारणि तारूण दीह विच्यारि ।।

(२४)

नाहु म छीछि रि गामटि सामटि माणु अयाणि ।
मयणु महाभडु क सहीअ सही इ हियइ हणइ वाणि ।।

(२५)

इणि परि कोइलि कूजइ पूजइं युवति मणोर ।
विधुर वियोगिनी धूजइं कूजइ मयण किसोर ।।

(२६)

जिम जिय विहसइ वणसइ विणसइ मानिनी मानु ।
यौवन मदिहिं ऊदप नी दंपती थाइ युवान ।।

(२७)

घूमइं मधुप सकेसर के सर कुसुमि असंख ।
चालतइ रतिपति सूरइं पूरइं सुभट कि सख ।।

(२८)

बुलि (त्रउलि) विलूढल महूअर रचइं झणकार ।
मयण रहइं करइं अगु दिण वदिण जयजयकार ।।

(२९)

चांपुला तरुवर नी कली नीकली सोवन वानि ।
मार मारग उदीपक दीपक कलिय समान ।।

(३०)

वांधइ काम निकरकसु तरकसु पाडल फूल ।
माहि रच्या किरि केसर बे सर निकर निमूल ॥

(३१)

आवुलइ मांजरि लागीय जागीय मधुकर माल ।
मूंकइ मारु कि विरहिअ हीअइ स धूम वराल ॥

(३२)

केसूअ कलिय ति वांकुडी आंकुडी मयरा ची जारिए ,
विरहिय ना इरिए कालि जु कालिजु काढइ तारिए ॥

(३३)

वीर सुभट कुसुमायुध आयुध शाल अशोक ।
किशल जिसा असि झलकइं झवकइं बिरहिरिए लोक ॥

(३४)

पथिक भयंकर केतु कि केतुकि दल सुकुमारि ।
अवर ति विरह विदारण दारुण करवत वार ॥

(३५)

इम देषीअ वन सपइ कपइ विरहिणी साथ ।
आंसू ए नयण निशां भरइ सांभरइं जिए जिम नाथ ॥

(३६)

विरह करालीअ वालीअ फालीअ चोलीय चंग ।
विषय गिणइ तृण तोलइ बोलइ ते बहु भंगि ॥

(३७)

रहि रहि तोरीअ जोइलि कोइलि स्यउं बहु बास ।
नाहलउ भजीअ न आवइ भावइ मू न विलास ॥

(३८)

उर वरि हारु ति भारु मू सयरि सिंगारु अंगारु ।
चीतु हरइ नवि चन्दन चदु नही मुझ सारु ॥

(३९)

हल सखि दुखु दूनीठउ डीठउ गमइ न चीरु ।
भोजनु आजु वीवठउ मीठउ स्वदइ न नीरु ॥

(४०)

सकल कला तूं निशाकर स्या करइ सयरि संतापु ।
अबल म मारि कलंकिअ शंकीअ थ्यां हवि पाप ॥

(४१)

भमरला छांडि न पाषल पाषल श्यां अम्ह सयर ।
षादुला चीत सतापरण आपरण तां नही वइरु ।।

(४२)

वहिन्न ए रहइ न मनमथ मन मथतउ दीह राति ।
अंगु अनोपम शोषइ पोषइ वयरु अराति ।।

(४३)

कहि सखि मुझ प्रिय वातडी रातडी किमइ न जाइ ।
दोहिलउ मकर निकेतनु चेतु नही मुझ थाइ ।।

(४४)

सखि मुझ फुरकइ जांघडी नां घडी विहुं लगइ आजु ।
दूख सवे हिव वानिसु पामिसु प्रिय तणूं राजु ।।

(४५)

विरहु सहू तिह भागलउ कागलउ कुरलतउ पेषि ।
वायस ना गुण करणइ अरण इ तिहजि विशेषि ।।

(४६)

घनु घनु वायस तुव सरु हुँ सरवसु तुय देसु ।
भोजनि कूरु करंवुल उ आवुल उ जरि हु लहेसु ।।

(४७)

देसु कपूर ची वासि रे वासि वली सर एउ ।
सोवन चांच निरूपम रूपम पाषुडी वेउ ।।

(४८)

सकुन विचारि संभाविय आविय तिह वालंभ ।
रस भरि निज प्रिउ निरषीअ हरषीअ पेइ परिरंभ ।।

(४९)

रगि रमइं भनि हरखीअइं सरसीअं निज भरतार ।
दीसइं ते गय गमणीअ नयणीअ कुच भर भारि ।।

(५०)

कामिनी पामइ जे सुख ते मुख कहिणूं न जाइं ।
पामीअ नइ प्रिय सगमु अ ग मनोहर थाइ ।।

(५१)

पूंप भरी सिरि के तुकि सेत कीआ सिणगार ।
कच भर जलद निरोपम ऊपम वगलीय सार ।।

(५२)

सहजि सलील मदालस आलसीआं तहिं अंगि ।
रास रमइं अबला बनि लावनि सयरि सुरगि ॥

(५३)

कानि कि झबकउ बीज नउ बीज नउ चदु की मालि ।
गल्ल हसइं सकलक भयकह बिंबु विशाल ॥

(५४)

मुख आगलि तूं मलिन रे नलिन जई जलि नाहि ।
दतह बीज दिषाडि म दाडिम तू जि तमाहि ॥

(५५)

मणिमय कुंडल कानि रे वानि हसइं हरीआल ।
पंचम आलवइ कठि रे कठि मुत्राउलि माल ॥

(५६)

वीणि भणू कि भुजगम जगम अनग कृपाण ।
करि विषमायुध प्रगटीअ भृगुटीअ धणुइ समाण ॥

(५७)

ओढणी रेटइ पहुलीअ कुली अडागर पान ।
तिल कुसुमोपम नासिक वासि कपूर समान ॥

(५८)

रोमाउली उतरतीय निरतीय काजल वानि ।
जीपए उदरि पचानन आन नही उपमान ॥

(५९)

सीथइं सीदूरिहिं पूरिअ पूरिअ मोतीअ चग ।
रावडी जडीअ कि माणिकि जाणि कि फणिमणि चंग ॥

(६०)

तीह मुखि मुनि मन चालइं चालए रथु कि अनग ।
सूर समान कि कुंडल मण्डल कि आं वि रथंग ॥

(६१)

भमुहि कि मनमथ धनुहीअ गुण हीयडइ वर हार ।
वाण कि नयण कडांसरे नाकु रची नली आर ॥

(६२)

हरिण हरावइ जोतीअ मोतीअ ना सिरि जाल ।
रंगु निरूपम अधर रे अधर कि यां परवाल ॥

(६३)

अनिय कलश कुच तापणि थोपणि तणीअ अनग ।
हीह तउ रापणहार रे हार कि धवल भुजग ॥

(६४)

नमणि न करइं पयोधर योध रे सुरत संग्रामि ।
कञ्चुक तीजइ सनाहु रे नाहु महाभडु पामि ॥

(६५)

उन्नत कुच किरि हिमगिरि शिषरि ते मध वईठं ।
हार नीझरण प्रवाह रे नाहु मइं झीलतु दीठ ॥

(६६)

नाभि गभीर सरोवर उदरि रे त्रिवलि तरग ।
जधन समेखल पीअर चीवर पहिरणि चंग ॥

(६७)

निषधि पणइ विघाता घडी जांघडी कहणु न जाइ ।
करि कंकण पइ नेउर केउर वांहडी आइं ॥

(६८)

अलविहिं लोचन मींचइं हीचड दोलिहिं एकि ।
एकि हणइं प्रियु कमलिरे रमलि करइं जालि एकि ॥

(६९)

एकि दिइं सहि लालीय तालीय छदंि रास ।
एकि दिइं उपालंभ रे वालभ रहि सविलास ॥

(७०)

मुर कलइं मुखु मचकोडइं मोडइं ललवल अंग ।
वानि सोन्नन वपोडइं लोडइं मधुवन रगु ॥

(७१)

प्रिय रहइं दिइ लल सलतीय वलतीय ऊतरवाणि ।
वचन कि किरण निशाकर साकर परतइ जाणि ॥

(७२)

कटक संकटि एवडइ केवडइ पइसीअ भृंग ।
दृइ लपणइ गुण माणइ जाणइ परिमल रंगु ॥

(७३)

पाडल कली दृइ अति कूवली तूं अलीअक मधघोलि ।
तू गुण चीधु ति साचउ काचउ महीय म विरोलि ॥

(७४)

मउलसिरि मद भींभली ई भलपणु अलिराज ।
घपति विण सुकुमीज तीं मालती वीसरी प्राजु ॥

(७५)

छाजइ नेह परायण जाण भलउ सखि भृंगु ।
अलग थकउ गुण विमणए दमणए लिइ रस रंग ॥

(७६)

बालइ विलसि वा विवरु न भमर निहालइ मा ।
आचरियां इणि निय गुण निगुण स्यउं तूय लागु ॥

(७७)

केसअ गरबु म तूं धरि मू सिरि भसलु बईठ ।
भालई विरह वहू विहइ हू अवह भणीअ पईठ ॥

(७८)

सखि अलि चरणि न चांपइ चांपइ लेइ न गंध ।
रूडइ दोहगु लागइ आगइ इसइ निबन्धु ॥

(७९)

नितु नितु चरीअ नइ मरूउओ मरूउओ गंध कुरगि ।
भमरू भमी भमी रीणओ लीणओ तस रस रंगि ॥

(८०)

भमर भमतउ गुणाकर अगरु ज कोरीउ कोइ ।
अज वि रे तीणइं वरांसइ वांस विणासइ सोइ ॥

(८१)

पूरब प्रेमि सुहातीअ जातीअ गई म चीति ।
विहसीअ नव नीमालीअ वालीअ मडि न प्रीति ॥

(८२)

इक थुडि करुणी नइ वेउल बेउ लता नवि भेउ ।
भमर विचालि किसा गर पामर विलसि न बेउ ॥

(८३)

भमर पलास करावला आंवला माविली छांडि ।
कुच भरि फलित कि तरुणीअ करुणीअ स्युं रात मांडि ॥

(८४)

इणि परि नाह ति रीझवी सीझवी आणइ ठाइ ।
धन धन ते गुणवत वसत विलासु जे गाइ ॥

॥ दुहा ॥ हावभाव भांमनी अति हि वोल्या माहवउ माननी मेल्हि चाल्या ।
सवण जोई प्रीअडउ पथि जव पडी हिव कामनी मुरछागति हुई पड़ी ॥९॥
हई २ वालभ ग्रांसयो एहवउ कीवउ रे कत
दिवस गमु कह उ एकली पहतउ राइ वसंत ।
अजीय न फाटइ रे हीयडला एहवउ कठण कठोर
प्रीत पीउरासु लेपवी चितरी ग्या रे चोर ॥१०॥
॥ दुहा ॥ मम कत मूढ मूराउ रे वाई विरहची वेदना आगि लाई ।
वलि वलि वीनवइ आवि हो कतह विरह नउ वांनग आवउ सतह ॥११॥
श्रावलडा सहू मोरीया मउरी सहुँ वनराई
वनस्पति वन लहलही महमही पाडलजाई ।
चंपला चिहुँ दिसि फुलीया सदल सरूप सूगंध
पारजातिक परिमल करइ वेलसरी मुचकुन्द ॥१२॥
॥ दुहा ॥ मचकद मोगरो वेलथालउ सपीए सेवत्री अति मुहालउ ।
सीस पहिरंतउ हुइ भारी स्वामि विना सेज पुत्तइ अपारी ॥१३
अढार भार रलिआमणा रूवडी दीसइ सुचग
कमल कमोदन केतकी करणी रे वेलि सुरभ
वनसपती जोवन चडी वनि वनि वनि महकार
भमरला गुंजारव करइ केसूयडे कुच नारि ॥ ४॥
॥ दुहा ॥ जिम २ वसंतनउ वाउ वाजइ तिम तिम भयणनउ माण गाजइ ।
जिम २ अ वला अ गि पीयडइ तिम तिम सभरइ श्रीरांम हीयडइ ॥१५
भमरला जाउं वलिहारडइ कत होवइ जिण देसि
एक सदेसो रे हु कहुँ तु म्हारा प्रियनइ कहेमि ।
हेम गमीयो मइ एकली तो विणि मुरष कंत
नथीय पमानु रे प्रीयडला वलिय विसेषे वसंत ॥१६॥
॥ दुहा ॥ भमरला भजि ले दुष एह कहु सदेसउ जइ कहि तेह।
वेगि रे वीठला करिजो सारि नर विना नारी सूनो संसार ॥१७॥
इणि रिति रसकस नीपजइ दवदाध्या दल होई
इणि रिति सूकां रे पाल्हवै रास रमइ सहु कोइ ।
इणि रति तन मस्तक वल करे जोवन अंगि न माइ
इणि रिति छूटी पाडीयै तूरणी कुं रहणो जाइ ॥१८॥
॥ दुहा ॥ जीवतव्यो माहरो सहूय प्रमांण रति कंत आवज्यो वनह प्रमांण ।
जोवन जाये नइ जरा आवै जे विणजय ते वलीय न आवै ॥१९॥
चदला विण किमो चद्रणो मोती विण किसु ज हार
नगर किसो विण नाइका प्राउ विण सेजश्रृंगार ।

हु-लडा विण सर किसो कोइल विण किसु ज वन
वालंभ विण किसी गोठणी जांणज्यो जगत्रजीवन ॥२०॥

॥ दुहा ॥ वीछडी वेलि जिम नागरपांन तां लगे जीवज्यो प्रीयनो मांन ।
जल विना नलणी जो वनजोरी तुम्ह विना त्रीकमा हूं नारि तोरी ॥२१॥
दइव न सीरजी रे पंषडी उडि उडि मिलती रे जाहि
वीसरीया नवि विसरे जै वसीया मनमांहि ।
चित राष्ये मन नावि रहइ रोइ रोइ सेज भराहि ॥२२॥

॥ दुहा ॥ मन राष्ये सुणो नवि राहवे मदनविलास मो अङ्ग दाहवे
कृष्ण कथा जव श्रवणे थाइ षिण एक सषी म्हारो ताइ उल्हाइ ॥२३॥
वालभ काइं विमारीया मेल्हीया मनहि उतार
विण अपराध मेल्ही गयो ते किम जीवे हो नारि ।
नारि विना नर नवि रहे सांभलि सारग प्राणि
दवइ न सिरजे तु एकला वलि सीरजे पाषाण ॥२४॥

॥ दुहा ॥ कुल देव्या पुजीनइ पाइ लागुं स्वामिनी एतलो मान मांगु ।
वनि विधना सिरजे थोहर मोढी विण कत म सिरज्यो राजवटी ॥२५॥
कंचु रे कांकण वाल्हा ढहि पड्या उड्या उड्या लोही रे मांस
लोचनडा वेउ तिगतिगै अस्त चरमने हस ।
वेह मलेज्यो रे नाहला नथीय षमातो रे कत ।
पायतणी प्रीउ पानही तेह उपरि किसो दत ॥२६॥

॥ दुहा ॥ द्राषजभीरी जोवन वाली विणमेइ वाडी वनह माली ।
स्त्री रसाइण जोवन वेस माणीं ते अस्त्रीने पुरुष लोप जाणी ॥२७॥
जल विण झूरे रे माछनी फन विण नागरवेलि
वन विण झूरे रे काइली हिरणलामृग वनि मेल्हि ।
निस भरि झूरइ रे चकवी, चकवो पेलो हो तीर
हरि विण झूरे रूषमणी आसू ढालइ हो नीर ॥२८॥

॥ दुहा ॥ निसदिन झूरता किमे न जाइ अधघडी कत मो वरस थाइ ।
जिम-जिम चितव्यो मनमांहि तिम-तिम आतमा अवसि थाइ । ॥२९॥
सोलकला ससि अम्रात रयाणि मो तपे रे अपार
तो नही इषण चन्दला लछण तोरे विकार ।
सीतलकारण हे सषी चदन चरच्यो मइ अंग
ते चन्दन किम गुण करई जेहने सगि भूयगि ॥३०॥

॥ दुहा ॥ चदला लाइसक सीतल विराज अम्हसुं तप करे केणि काजे ।
वावना चन्दन सो अंग दाझै कृष्ण भेटया विण सन न भाजे ॥३१॥

वसंत विलास (सोनीराम)

इस कृति मे फागु काव्य होने का अन्तःसाक्ष्य तो नही है किन्तु रचना पद्धति, वर्ण्य विषय और प्रतिपादित सामग्री के आधार पर यह कहा जा सकता है कि इस कृति की सृजना फागु-काव्य-पद्धति पर हुई है। फागु काव्य की सम्पूर्ण प्रवृत्तियाँ, यहाँ तक कि वासन्तिक उपादानो की अभिव्यञ्जना-रूढि और काव्यगत-संवेदनाएँ भी फागु-प्रतिमानो से साम्य रखती हैं। इसका रचनाकाल १६ वी शती रहा है।

कृति मे मगलाचरण के उपरान्त वसन्तागमन पर नायिका की मनुहार और प्रियतम को प्रवास-गमन से रोकने के लिए किए गये उपायो का वर्णन किया गया है। किन्तु पाषाण हृदय नायक नहीं रुकता। फलतः प्रवास हेतुक विप्रलम्भ शृङ्गार का भरपूर वर्णन किया गया है। अब तक के साधारण नायक-नायिका कृष्ण और रुकमणी बन जाते हैं :—

जल विण झूरे रे माछली फल विण नागरवेलि
वन विण झूरे रे कोइली हिरणला मृग वन मेल्हि।

निस भरि झूरइ रे चकवी, चकवो पैलो हो तीर
हरि विण झूरे रुकमणो, आंसू ढालइ हो नीर ॥२८॥

बाद मे उसे प्रिय-समागम के स्वप्न भी आते हैं। प्रियतम आ भी जाता है। वह उस दिवस, रात्रि और सेज को शुभाशीष देती है।[1]

इस संयोग शृङ्गार के परिप्रेक्ष्य मे कवि ने नारी-सौंदर्य को निरूपित किया है। लेकिन उसका सौंदर्य-बोध बाह्य परिवेश और सज्जा तक सीमित रहा है। अतः वह उतना प्रभावोत्पादक नही बन पाया है। कवि का वियोग वर्णन जितना सशक्त है, उतना संयोग वर्णन नही।

---

१. धन-धन आजणा दीहडा धन-धन आजूणी राति।
धन-धन आजूडी सेजडी रमस्यउं हो वालिम साथि ॥

(वसत विलास, ४२)

सोनोराम कृत वसंत विलास

रचनाकाल-१६ वी शति

।। दुहा ।। प्रथम गणपति नमस्तुभ्य सरवीणा विघनांतकं ।
गजमुष गवरिनन्दन सर्वोसिद्धि करोम्यहं ।।१।।
सुरग सिंदुरि चंदन घन घोलीय सार
राल भणइ पहिलो पूजिसुं मनवद्दितदातार ।
मांगिसु मिध बुधिरिद्धिवद्धि गुणनिधि गणपतिराई
वसतविलास प्रगासयुं आणयो अक्षर ठाई ।।२।।

।। दुहा ।। नमो २ गवरीनन्द राय नमो २ त्रिभुवनी कमदनीय ।
नमो २ अभिमत फलदाताय विघनविनासाय नमो नम ।।३।।
कासमीर मुखमडणी वीणा रे पुस्तकपांणि
राम भणई रसणे वसुं ऊचरू अविरल वांण ।
वय लहुडी धीय लहुअडीय सार को अम्ह मा
स्मत पुराण सुण्या नही नि सुणी सास्त्रनी वात ।। ४।।

।। दुहा ।। वांहणि हसला वेगपुरी आवि हो मान (त ?) तुं व्रमकुयरी ।
षटरावभाष्य नवनवा भेदा आवि हो अंगि ते मांडि षेद ।।५।।
आज सुणउ सषी वातडी वालभ चालणहार
इणि रिति नाह न चालियइ विनति करइ इंम नारि ।
फाग रमे प्रिय चालज्यो होलडी आवी नाह
पाए हो लागुं वाल्हा ताहरइ इणि रिति मेल्हे म जाई ।।६।।

।। दुहा ।। कामनी कंत जे पाए लागइ चीर घरी मांननी मांग मांगइ ।
सांभलउ स्वामि हो वात मोरी हिवइ म चालिज्यो हुँ दासी तोरी ।।७।।
कर जोडी कोमण रही अवला वोलइ अपार
कइ मो सरसी ले प्रीयडा कइ मो चालज्यो मारि ।
इम करतां वैरी चालीयउ वनिता मी (ती ?) उभी मेल्हि
पुठि जोइ धरणी (ढली) गोरी नइं चेतवेत ।।८।।

चदला वेरी रे वादलउ वादल वाइरी रे वाउ
भमरला वइरी रे नासिका वेधलो पकज माहि ।
गोरीनो वइरी रे विरइलो जोवन वालो रे वेस
जोवनवइरी नाहलो कहउ सषी कदी मिलेस ॥३२॥

॥ दुहा ॥ विरसि वल्हाग्र सीधी जीवतव्व तम्ह थइ सेथी ।
राजन देषू दरसण तम्हारो वार-वार तुम्हने हु वारू ॥३३॥
घरि २ फाग ज षेलीये अवलाहो दे रगिरास
घोवा नइ चन्दन छाटणा माहो माहि भोग विलास ।
कत रमाडे रे कामिनी सुंदरि ले सिणगार
दीन थकी दिन निगमुं जो नही घरि भरतार ॥३४॥

॥ दुहा ॥ एक हरि चदन घसी वाढइ एक जो माहोमाहि छांटइ ।
एक सुरग अवीर उमारी ते सहू तिज्या विण कत नारी ॥३५॥
पूछो रे जोसी जोतषी कदि घर आवइ से कत
लगनभाव उतावलो दिन दोइ माहि मिलति ।
घनि-घनि जोसीनी जीभडी लुण करू वहूवार
आलूं रे भोजन फलहूलि जो मिलसी भरतार ॥३६॥

॥ दुहा ॥ हरषी हीयडलै विप्रवाणी मांनवी वात ते मनह सुहाणी ।
मन धरी भाव भोजन आलीयो विप्र वेगि घरमणी चालीयो ॥३७॥
आज ते अग फरूकइ रे जइ पणि जांणे रे देह
धाम रे लोचन फरकीया फरकिया अहर त बेहु ।
बाह फरूकइ रे आकरी डरि कंचुवइ न माइ
नाभि मडल फरूका करइ मिलस्यो मो जादवराइ ॥ ३८॥

॥ दुहा ॥ सषी ए निसभारि सुपन दीठउ जाणे प्रीयडलो सेज बेयठउ ।
रितिदान भगवान मुझू दीधउ आलगन देइ अंगि लीधउ ॥३९॥
इसुरे चित मानि चीतवी धन जागी परभाति
तोरण वाइस डोलवइ करइ अनोपम वात ।
पथ निहालइ रे पदमनी सुदरि ले सिणगार
पहिरो रे कंचु वेसतो उपरि नवसर हार ॥४०॥

॥ दुहा ॥ सज करि सिणगार सहेली वाट जोवइ प्रीयनइ वहली ।
नयण कुंज काजल सारी सषीए आज मिलस्यइ मोरारी ॥४१॥
इम करतां प्रीयडउ आवियउ अंगि आलिगन देइ
प्रेम पूरि म्हांरउ नाहलउ अबला ते आधी लेइ ।

धन-धन आजरणा दीहडा धन-धन आजूणी राति
धन-धन आजूणी सेजडी रमस्यउं हो वालिभ साथि ॥४२॥

॥ दुहा ॥ हसि-हसि करस्युं वाल्ही वातडी कतचे कोट रे बाह थाली ।
प्रीउडइ अधुरवधुर बदरस झाली प्रीऊडइ रयणि रगि माल्हि ॥४३॥
सर्व सिणगार मइ पहिरीआ चन्दन चरच्यउ मइ अंगि
पहिरण लाल पटोलडी ऊढणि दक्षिण चीरि ।
कठ निगोदर कठली रावि तपइ राषडियाइ
भाव करइ भला सेजडी नचावह मषडीयाइं ॥४४॥

॥ दुहा ॥ हरषवदनी हरषी मृगनयणी अधिरवंध जसी भोयग वेणी ।
चदलासुं मुष हसगयणी सहिआली जिसी लक झीणी ॥४५॥
च्यारि पुहर प्रीयडा विसता वयणी मो थई रे लगार
जे मुन्हि किम्हे न जावती जातां न लागी हो वार ।
सूर तवुं ससिहर तनु रयणी वधारे हो राजि
वालम विण जे मइ दुष सह्या ते दुष काटु आज ॥४६॥

॥ दुहा ॥ ससिहर स्तुति करूं अहनिसि एती रयणी वधारे आस पुहुती ।
हरि चढये कि मन मेल्हइ हाथ वहुदिनां भेटया प्राणनाथ ॥४७॥
वाह ऊसेसइ रे अपणी वालवनइ सुषदेइ
अंग तलाई पाथरी साथरो कुंभ भरेह ।
हार तणी परि हीयडलइ प्रीयडला कठि रहेसि
रयण मण सातउ मातउ लउ रीतडी रग करेसि ॥४८॥

॥ दुहा ॥ हरप अंग मुक अंगि अंगि चन्दन वोटायो जाणे भूयंग ।
कृष्ण तरुअर अम वेल वाधी वीठला विलवता जनम कोडि सांधी ॥४९॥
धन-धन वसततणी रति धन-धन फागुण मास
सारग सागमइ प्रामीआ पात्रा मीआ वेदनश्रास ।
माहवइ मनोरथ पूरीया चुरीआ विरहइ विरांम
रामा हो रगि विलगीय पुरव प्रीतिज साभि ॥५०॥

॥ दुहा ॥ माहवइ मनोरथ पूरया दीनदयालु सह दुप षरया ।
कृष्णजी इम चिंता किधी म्हारी तिम मिलिज्यो सहुय नर नारी ॥५१॥
गायो रे वसंत विलास कांमनी मन पुगी रे आस
हीयो रे हरप मन उलसइ अन्तरिकमल विकाम ।
सभलतां श्रवण सुष करइ लीला रे मिलि रे कंत
गायो रे जेहवउ तेहवउ सोनी राम वसंत ॥५२॥

इति श्री वसंतविलासः ।

मोहनी फागु

'मोहिनी फागु' एक शृङ्गारिक फागु है। यौन भावनाओ और विकृत-कुण्ठाओ का विवर्तन करने वाले ऐसे फागु कम लिखे गये थे। केवल 'गणपति फागु' इसी से भाव-साम्य रखता हुआ फागु है। सम्भवतया 'मोहिनी फागु' का उपजीव्य कोई ग्राम-गीत रहा है। इस फागु के रचियता का नाम अज्ञात है। लिपि के आधार पर इस फागु की रचना १६ वी शती मे हुई, मानी जा सकती है।

'मोहिनी फागु' की नायिका मोहिनी है, जो चम्पा नगर के एक व्यापारी की पत्नी है। वह यौवन मद से मतवाली, गुणवान, सलोनी, स्वभाव से छिनाल, और सौंदर्य मे अपूर्व है। यहाँ कवि ने उसके सौन्दर्य का अतिशयोक्ति पूर्ण वर्णन किया है। उसका पति परदेश गया हुआ है। तभी चम्पा नगर मे वसन्त का प्रवेश होता है। विरह ने उसके हृदय को पहले ही दग्ध कर रखा था अब काम ने आकर उसे लज्जाहीन बना दिया। विरहानल से दग्ध मोहिनी अचेत हो गई। वह काम-पीडित नारी सचेत होने पर कहती है— इस नगर मे क्या कोई छैला नही है। तुरन्त उसकी चार सखियाँ दौड पडती हैं और अपने साथ चार छैलाओ को लेकर लोटती है। मोहिनी के सौंदर्य को देख कर उनमे उसे भोगने की प्रतिस्पर्धा उठ खडी होती है। इस पर मोहिनी ने उनसे कहा कि तुम पहर-पहर के लिए मुझे भोग सकते हो। इस बीच नये-नये कुहुक हुए। अधर-रस-पान हुए। तभी मोहिनी का का पति लौट आया। चारो प्रणयी कांप गये किन्तु मोहिनी ने उपाय खोज लिया और नेत्रो से अश्रु प्रवाहित करते हुए पति से कहा— जब आप परदेश चले गये तो मैंने खाना पीना छोड़ दिया। रात्री को दु.स्वप्न देखा तो गोत्रज को बुला लिया। उसने विचार करके कहा कि ६ मास पश्चात तुम्हारे पति की मृत्यु हो जायेगी, अतः इसे दूर करने के लिए तुम चार तरुणो को बुला कर उनके साथ एकांतवास करो। क्योंकि—

> प्रीति भली परि भोजनु, करिवउ एकहि थालि,
> मइ तुझ कारणि कीधउ ए इस्यउ नाहु निहालि ॥५०॥

मोहिनी के ऐसे बोल सुनकर व्यापारी का क्रोध शान्त हो गया।

यह अपने ढंग का अनूठा फागु है जिसमें मोहिनी के पति-छल और छिनाल-पन का वर्णन किया गया है।

अज्ञात कवि कृत मोहिनी फागु

रचनाकाल— १६ वीं शती

पूरब दक्षिण अंतरि, चम्पकनयरु प्रसिद्ध,
सुललितु लोक विचक्षणु, निवसइ अतिहि समृद्ध । १

तीणि अछइ वणजारडी, एक अपूरब नारि,
नामि सुणीजइ मोहिणी, अतिहि खरी सुविचारि । २

लावणि मदि अति मातीय, मयण निहाण निहालि,
सगुण सलूणिय सुणिजइ, सहजि सभावि छिनालि । ३

चतुरिम चालइ चमकति, काम तणी रसवेलि,
रूपि सयलु जग मोहइ, मोहणि मोहणवेलि । ४

भयडिहि भुयणु भमाडइ, भामरभोली तोइ,
नयणि अवीसरु वीवइ, छूटइ तरुणु न कोइ । ५

मोहिणिनइ मुहि जीतउ, पूरउ पूनिमचंदु,
दाडिम हूलै होठडे, अमिउ झरइ रसबिंदु । ६

सरल तरल अति कोमल, गोरिय चम्पकवानि,
दंति वइरागरु दीपइ, झाल झलावइ कानि । ७

हियडइ हसमस करता, प्रकट थिया थण तेउ,
सोवन कलस कि पूरिया, कामि अमीरसु लेउ । ८

कइलिए लाकु ग्रहीजइ, कडियडि लहकइ वीणि,
नाभि मयणरस वपिय, डरिए थीवलि तीणि । ९

जांघडी कुंकुमवानीय, केलि तणा दुइ थाभ,
जोनि रे नव रग दीमइ,...... अतिहि सुचगु । १०

केसर कुंकुम वानउ, दरसणि दूलभु देहु,
पूरब जनमचई सुकृति, रे भेहुण लाभइ तेहु । ११

हीडती हंस हरावइ, नेडर झमकइ पाइ,
अति सोहग गुणि आगली, भुवणि निरुपम तोइ । १२

इसी छयली वणजारडी, निवसइ तीणइ देसि,
वालभु वणिजिहि चालियउ, मूकिय जोवन वेसि । १३

* इसइ अति ऊलहि, पहुतउरितु तणउ राउ,
परिमलि दिसि सवि पूरिय, वाइउ दक्षिणु वाउ । १४

प्रेम वसन्त स्यउ धरतिय, विहासिय सवि वणराइ,
कुसुम तणइ रासि ऊवसो, परिमलु कहणु न जाइ । १५

कोइल कलिरवि वासइ, मजरिया सहकार,
कुसुम तणइ रासि लवधुना भमर करइं झणकार । १६

मानिनि मानु गली श्यइ, फूलिउ देसि पलासु,
कमकमिया मन कामिनी, विरहिणि ऊडिउ हासु । १७

दमणउ परिमलि वहकइ, मरुअउ हुअउ अबाहु,
वालउ वउलु निहालिउ, विरहिणि हुउ मनि दाहु । १८

षडल तणइ मनि मातुला, अभिनव दीसइ भृंग,
हरपि हूया सवि हरणुला, करइ ति हरिणिय सग । १९

त्रिभूवननइ जउ विरचइ मनमधु मोहनवाणि,
मानिनि मानु मुकविय, मुणिवर जीतला प्राणि । २०

मासु वसन्तु निहालिय, चम्पकनयरि प्रवेसि,
मोहिणि मनमधु मोहिउ, पहिलउ विरह प्रवेसि । २१

विरह हियउ अति परजलइ, कामु लीपावइ लाज,
सयरु भयउ सखि परवसि, किसउ नही मुभुकाजु । २२

सहिय समाणिय सवि मिली, करइ भली परि सार,
वणजारी परवसि भई विरहि विणु भरतार । २३

पूजन पाग तलासइ, वीजन वीजइ वाउ,
चापल चापइ सीसुरे प्रीति तणउ मन भाउ । २४

साजिणि मासर मूकहि मरसउ पायइ नीरु,
विरहानलु अति परजलइ, भयउ अचेतु सरीरु । २५

---

*आ चरणमांनो अक्षरो पडी गायेला छे ।

रगि सही सहियर रही, हियइ रचइ विचारु,
दैव सजोगिहि मोहिणि भागउ मोहविकारु । २६

इसउ वचनु तव बोलइ, कामगहिल्लिय नारि,
छयलु छरालउ छावउ, छइ कोई नयर मझारिं ? २७

चारइ च्यहु दिसि चाहिस्यउ, आणउ वेगिहि जारु,
विरहि सरीरू प्रजालइ, काहु करउं भरतरु । २८

एकु अणाविउ जारु रे, मोहिणि हियइ विचारि,
सागणु बीजलु तीकमु, चाहडइ्गउं थिया चारि । २६

मोहिणि रुपु निहालिय, च्यारउ चमक्या वीर,
करइ आपार विमासण, हियइ धरइ नवि धीर । ३०

आपणमाहि विरोधिया, हियइ धर रचइ प्रपंचु,
वणिजारीय विचक्षण उलषियउ तिह सञ्चु । ३१

वणिजारी इम बोलइ, कीजइ काइ विवादु,
पहरि पहरि तुम्हि ·· ····, मनि मन धरहु विषादु । ३२

पहिलइ पहरि पदावइ, सागणु ता गुणजाणु,
बीजइ बीकमु इम कहइ, करइ अनेक वषाणु । ३३

त्रीजइ तीकमु तअइ, जिम सुखनी वहु जाति,
चउथइ चाहड ·······, तिमइ विहाणी राति ३४

ईणि परि ·······, चउरासि परवंधि,
काम गइ मदि मातिय, पाग चडावइ कधि । ३५

कुहक करइ तह नवनवा, होठ तणइ रस द्रेठि,
चापडी·········मोहिणि, जारु घलावइ हेठि । ३६

विणउ करइ वणजारडी, ऊपरि वइठीय षाट,
च्यारइ मीत जिमाडइ, सारिय एक जि त्राटि ।३७

वणिजारी निह रातीय, अवरु गमइ नवि कोइ,
राति दिवसि·······, त्रिपति न मानइ तोइ । ३८

सूकडि सयरि लगाडइ, आपइ फून तवोलु,
घुंबडिया रसि रंजवइ, वोलइ वहु विध वोल । ३६

तीणि समइ वणजारडी, आंगणि अविउ नाहु,
तेह तणउ सरू साभली, कापिय वीर प्रवाहु । ४०

सागणु सयरि प्रसीजइ, तीकमु थ्यउ विपरीतु,
वीजल कोल न वीसरइ, चाहइ थ्यउ चलचित्तु । ४१

सीत तिहा सवि धीखइ, कांपइ कांइ सरीरि,
ए इसा ऊतर देइवा, हउ अछउ बावनवीरि । ४२

चिंतइ चित्ति विचारिय, वणिजारी गुणजाणि,
बुद्धि तणइ परपंचिहिं, वचिउ नाहु विनाणि ।४३

आगणि देषि गुमाइउ , साइउ दीधउ आंगि,
नयणुले नीरु झरती, वोलइ नव नव भगि । ४४

सामिय तू चालिउ, मू मूकिउ परदेसि,
धानुपानु मइ नीमिउ , प्राण प्रिया रज रेसि । ४५

जां निसि सूतिय देषउ, नीभर नीद्र मझारि,
गोत्रज सुमिणइ आविया, वोलिया वोल विचारि । ४६

तोरउ नाहु मरसइ, जीवितु अछइ छ माम,
हउ तव रोवण लागिय, हियडुलउ भयउ निरासु । ४७

मइ वली गोत्रज वीनवी, सामिणि करि न पसाउ,
नाहु होइ अजरामरु, चीतिवि सोइ उपाउ । ४८

तूठिय गोत्रज बोलिउ, मोहिणि मनि कार भ्राति,
च्यारइ तरुण वोलाविय, वइसउ तुम्हि एकति । ४९

प्रति भलि परि भोजनु, करिवउ एक हि थालि,
मइ तुझ कारणि कीधउ, ए इस्यउ नाहु निहालि । ५०

मोहिणि वोलु सुणी करी, कोपु गयउ मनि दूरि,
चारह चहु वणिजारह, वीडउ देइ कपूरि । ५१

इस्यउ सुणी मूरषु रह्यउ, हरषु हुयउ अप्पारु,
मोहिणिनइ सुहि मोहिउ गहगहियउ भरतारु । ५२

सकिहि चित्तिहि सांभलइ, ए इस्यउ फागु रसालु,
रंग ते रववइ कामिणी, नीपजइ छयलु छिनालु । ५३

विरह देसाउरी फागु

विप्रलम्भ शृङ्गार से परिपूर्ण 'विरह देशाउरी फागु', वसन्त विलास की परम्परा मे लिखा गया एक लौकिक फागु है। इस कृति का प्रारम्भ, नायिका के इस कथन से किया गया है— हे सखी ! फागु खेलने के दिन आ गये है, मेरा प्रियतम परदेश-गमन की तैयारी कर रहा है, जिससे आज मेरा मन कांप रहा हैं। तालावेलि कर रहा है। फागु का अधिकाश भाग इसी विरह-सयोजना और वर्णन से अनुप्रेरित है। विरह-व्यञ्जना की दृष्टि से 'विरह देशाउरी फागु' निस्सदेह सफल कृति है। विरह की दसो अवस्थाओ का सुन्दर निरूपण हुआ है। विरहिणी की वेदना निरंतर बढती जाती है। सेज तपने लगती है। विरह दहकाता है। हृदय पर अवस्थित हार भी खटकता है। एक बालम बिना सारा ससार सूना लग रहा है :—

सेज तपइ विरहु दहइ, है अडलइ खटकइ हार,
एक ज वालम पाखइ सुंनउ सघलउ समार ॥२६॥

कवि की काव्यगत सवेदनाएं और अनुभूतियां अत्यन्त सचेतन हैं। विरहिणी ने ज्योत्सना को माध्यम बनाकर जो सन्देश सम्प्रेषित किए हैं, वे भी हृदयग्राही हैं।

अन्त मे मिलन की घडी आती है। कामिनी अपना शृङ्गार प्रारम्भ कर देती है। विरह के दीर्घ अन्तराल मे भोगा घनीभूत दुःख विस्मृत हो जाता है। अगर और कपूर से अपने शरीर को आलोपित और सुवासित करती है। हाथो मे ककण और पैरो मे नूपुर धारण करती है। फिर दोनो रस के अन्वेषी हो जाते हैं क्योकि कवि ने कहा भी है— जिस प्रकार भ्रमर घूम-घूम कर रस की उपलब्धि करता है, वैसे ही रसिक पुरुष रस मे निमग्न रहता है; जो रसास्वादन करना नही जानता, वह पुरुष जीता क्यो है ?

रसीया रसि वेध्या रहि, भमर भमी रस लेउ,
रसक सवेंध न जाणतां, ते नर जीवइं काइ ? ॥५५॥

अन्य लौकिक फागुओ की तरह 'विरह देशाउरी फागु' का शृङ्गार विप्रलम्भ से प्रारम्भ होकर सयोग मे पर्यवसित हो जाता है। धार्मिक-कुण्ठा का परिहार होने से फागु की श्रृङ्गार-सयोजना परिष्कृत एवं सुथरी है।

'विरह देशाउरी फागु' की रचना पाटन मे हुई थी। कवि ने पाटन की प्रशंसा करते हुए कहा है :—

अणहिलवाडी पुर पाटणि, वसइ ति वेधीया लोक।

इस फागु की खण्डित एवं अस्पष्ट प्रतियाँ प्राप्त होने से इसका निश्चित स्वरूप तो निर्धारित नही हो पाया है। अशुद्ध शब्दों एव वाक्यो, उडे हुए अक्षरो से रस-निस्पत्ति मे तो बाधा पहुँचती ही है, साथ ही रचना का सम्यक् सौंदर्य-बोध उभर नही पाता है।

विरह देसाउरी फागु

रचनाकाल— १६ वी शती

आज सखी मन कपए, तालावेलि करेइ,
फागु-खेलण-दिन आवीड, प्रियदेसांतर लेइ। १

राखीउ सखी ! न रहइए, अणरस नाह अजांण
दुगो (?) अंगिन भेदीइं, यौवन धरइ परांण। २

श्लोक

प्राणेशं प्रथमं प्रयाणसमये वह्व्याकुला प्रेयसी
नीत्वा स्वव सुधाक्षतं दुर्लभकणान दातुं सरस्यागतान्।
आस्फुर्जित विप्रयोग दहन प्राणेशन यौवन
स्वेदाद् भक्तमभूत कृतमवती नीराज्जना लज्जनां॥ ३

आहि दहिले अ वाजए दपि दासइ सखिरेउ (?)
दासि तुहारी अ कंतरे रहि रहि किसी अ परेइ। ४

कि मुझ मारि कटारडी, कइ प्रिय गमण निवरि,
मोरउं हैअडलउं हरिलयउं, वइरी अ विरह म मारि। ५

मुं पथि जाता मन बोलि हासउं,
सखी सखी मारि हुसिइ त्रिषासउं,

देखीं न दे नास्ति कवी सहू ए (?)
कोठी वडे काज सरइ कहूए। ६

हासला विण किसिउ सरोवर कोइलि विण किसिउं रान,
वालभ विण किसी गोरडी, रहि रहि नाह अजाण। ७

इण रति कोइ न नसिरइ, मूरख तुं भरतार,
राउ पहुतु रिति तणउ, योवन पहिलउ भार। ८

वाउलउ अति मनोहर वायउ, चन्दलउ रयणि ऊपरि आयु,
कंत कायर मत जाइसि घर छांडी, तइ जीवतइं हउतइ हूं जिरांदी। ९

अहे मास वसन्त रुलीआमणउं, कामिनीनुं मन जाणि,
पूरि हरष धरि रहीनइ बालापण रस माणि । १०

कोइल करइ टडकडा, वइठडी आंवला डालि,
फागुणि घरि प्रीय मेल्हए, यौवन पहिलई अंगालि । ११

म लवि कोइलि जोइलि ताहरी, ताहरीनरापिन दाषितमहरी,
अधरलइ नखदइ मननीरली, हिव किहा विरह्या मिलिउ वली । १२

अहे वुलसिरि वनि महिकए वहिकए करणी अंछाह,
कामिनी वेसनवा करइ, रुपि रे फागुण माहि । १३

केसुअडा रूलीआमणा, भमरला रणभणकार,
चापला चिहु दिशि फलीया वनि वहिकइ सहकार । १४

चांपा तणे कुशमि मस्तकं थिउं अगाही,
साही पयोधर घरी क्षण एक वाही,

विनाणगार मुझ गिउ विनाणी,
सिउ पूछीइ परघरि पीउ वाणी ? १५

केसूअडा सलीआमणा, वूलीया गुहिर गम्भीर,
इण रति काइ न नीसरइं तुं मान जाणि आहीर । १६

वीलि वीजउरि अ मुरिय, भमरला रणभणकार,
वालम्भ रहि नमुक, यौवन पहिलउ भार । १७

विरहिणी वशत पावस उलसइ, किहि कहुँ सखीए कुण दिसि वसई ?
दिवस जाइ नविसाई रातडी कहि कहु साख ! ए कुण वातडो । १८

जिम जिम फाग्रु गाइइ, तिम तिम प्रीअनि घाइ,
किसिउं करुं वहु वहिनुंए, मान दुख हैइ न समाइ । १९

आठ पहुर निशि आवटउं, न सुणउं फागु नइरास,
देखी सखी ! मोर हैथडउ रे, लोहविलइ न मांस । २०

माइ मोर वनमाहि कीगाइं, कन कत वली वलो मनि थाइं,
दु.ख सागरि पड्या दिन जाई, राति वयरणि किमइ विहाइं । २१

विरह सतावए पापीउ दाझए माझि शरीर
तन मन यौवन विलसए नयणि न सूकइ नीर । २२

जिम वालापणि पहिरणउं कति वीसारिय तेय,
च्यारि पहुर विशि आवटउं, चकवा चकवी जेय । २३

काम घाडि निसि माझिम थाई चदलइं क्षुरत ढ़ंद भिवाई,
स्यउ भणी घग्घरणी घरि डीनी वनिवइ मजन लाडगहेली । २४

नयणे न देखउं ए नाहलु, हैम्रडइं न सामरइ हुग,
म्रासूम्रडा न ऊगाइम्रा, राइ रोइ भीनी म्र सेज । २५

सेज तपइ विरहु दहइ, हैम्रड लइ खटकइ हार,
एक ज वालभ पाखइ सुनउ सघलउ ससार । २६

तपइ तलाइ खटकइ कलाइ, नसकु सही सूकडि म्रंगि लाइ,
विनाणगारु मुझ गिउ विनाणी, सिउं पूछीइ माधव देवि म्राणी । २७

देव दोहिला दिन नीगमउ, फाटि रे हैम्रडा ! कठोर,
माझिम राति मुकइ, कांपए काजल कोर । २८

प्रीय सदेसउ पावीउ, ऊभीय खडकीय बारि,
पाउल परिमल वहिकइ, भमरुला रणझणकार । २९

जलदनइ जच जांबूम्रडां गलइ, घर भणी संधि पंथीम्रडा पुलइं,
इमजइ कहिउ वक्ति मोरडा, जल भितरि छइं पाथर कोरडा । ३०

एक मनु घरि म्रावि रे, मेल्हि हैम्रानु मयल,
स्मीरस जीणि न मागीउ, पुरुष नही ते बयल । ३१

चांदला करि चाद्रिणउं मोरुं वयणु सुणे जि,
एक सदेसु माहरु, वालभ रेसि कहे जि । ३२

ऊनया जल नदी जिम जोउ, 'नाहु नाहु' भणती निशिरोउं,
एउ दुख सखी ! ए कहु कहि म्रागइ ? प्राणनाथ मुझ मैथुन मागइ । ३३

जहि वयणि प्रीय दूहविड, ते मनि परहा वीसारि ।
इसउ सदेसु तुं तहि झूरइ घरनी नारि । ३४

चाद्र कन्हेलोया चाद्रिणी, वहिन पणउं किरिमाइ,
रसउ ससिउ तुं कहे, हुँ तस लागी म्र पाइ । ३५

रे चांदला रुम्रणि (?) कृपा करि तुं जिमोरी,
रे पापीम्रा प्रगट थाइ मदासि तोरी,
जु भेटिसि हरि वदन नीक खेरी (?)
भूनी भमउ प्रीरम्यु मुझे चित चोरी । ३६

सुणउ रे सही म्र समाणी, म्र, समीणडउं निसिभरि दठि,
हसोय हसी प्रीय रीझवुं, प्रीय सेजडी म्र वहठ । ३७

वाहण जइ मुझ प्रीय म्राविड नइ गलि छालीय वाह,
ऊठीय प्रीय प्रीय करती, न प्रीय न गलि वांह । ३८

अहनिसि गुणगाउं, चांदला मांड लाउं,
विमरि पडहु वाउं (?), कान्ह वजिउ न चाहुं,
सखि क्षनएक न सूती, प्रीयसिउं हउं विगूती,
मनरसि खूती, एकलहि विगूती । ३९
हव पूछउ पडित जोसीय, किस्या ग्रह किसी छह रासि ?
घूलहडी दिन पूंनिम होलीय फागुण मासि । ४०
इसइ समइ प्रीय आवसि, हैयडलइ जय जय कार,
गोरीय वचन सांभली करी, कांमिनी करइं श्रृंगार । ४१
काली भली ओढणि अंगिरेटइ,
आवी रही कुंतुरणी त्रिभेटइ
हुँ हेल देतां पडी जि खेटइ,
जाणउं विदेसी मुझ कन्त भेटइ । ४२
अहे हरखि कामिनी अ निहालए, नाहु कि आवणहार,
अंगि सुरगु कांचूउ अनइ अमूलिक हार । ४३
अगर कपूरहि अरचिउ रचिउं देह शरीर,
करयिलि ककण खलकइं, झलकइं पाइ मजरि । ४४
कडिउ लगावि मेघवनी जि पट्ठली,
लइ कपूर करि पानतणी जि कुली,
इसि सेइ सुकडि लेइ कणरि (?),
सु भेटिसि मदनमूरति तुं म मारि । ४५
माणि भरइ सरि मावही मस्तकि भरीयां खुप,
भमहडीए भमरा भमइं, चांद्र यसउं मुख रूप । ४६
आंखडीए रस कजल करइ नवेरु मार,
कांनि मोतीलग खीटली, कण्ठि नगोदर हार ।४७
होठ सिउं हठ करइं परवाली वेगिलइ लहिकह जिय पाली,
मुख यसुं पूनिम चांदलु, मत्रि कान्ह मेलवि कालु । ४८
चंदन भरीय कचोलयि मुंकीय सेज विच्छाहि,
इसइ प्रीय आवीउ हाडलइ हुअउ अच्छाह ।४९
हसी हसी पूछउं वातडी, प्रीय से जडी वइठ,
सर्वं सु अंति समो सम्यउं, वीसरिउं दक्ख ऊबठि । ५०
कांचूतना कमण ग्यां अट कइं जि त्रूटी,
थापा पडया वीणि थिका विछूटी,

दीइ घणु हरउ हूउ ति वारइ
सेज मिलि प्रेतम जिणि वारइ । ५१

सोल कला ससि चांदलु, रोहिणि हूँ वर जाणि,
क्षणि एकरइणि विहाणि, [चदला] मकरि विहांण । ५२

रे कूकडा ! वासि म इणि राविइ, स्त्री जागि तिथि करि रे कांइ ताति ?
सुरा वियोग धिर मुंजरथि राणु, लेइस मुजर देसर वाणउ (?) ५३

अधर तम्बोली रंगीया, मरुअ सोहावा कंत,
सहीयर माहि रमेतीए, रंगिहि भीनला दंत । ५४

रसिया रसि वेध्या रहि; भमर भमीं रसलेउ,
रसक सवेध न जांणतां, ते नर जीवइं काइ ? ५५

दिने दिने गच्छति नाथ ! यौवनन यभस्व नित्य यदि शक्तिरस्तिते
मृताय कोदास्यति पिण्ड सन्निधौ तिलोदकैः साधमिलो मशं भगम् । ५६

गोरी अ वे रमइं, करइं नवेरा भोग,
अणहिलवाडो पुर पाटणि, वसइं वेध्रीया लोक । ५७

विरहि वसन्त सो आविड फागुणि तरुणि गाइं,
राज करू रसीय घणु, सरसति तणइ पसाइ । ५८

॥ इति विरह देसाउरी फाग वसन्त समाप्त ॥

मूर्ख फाग

मूर्ख फाग की स्तुति से ज्ञात होता है कि यह फागु जैनेतर है। प्रारम्भ मे गणेश-वन्दना की गई है। कृति केवल नाम की फागु है। फागु-लक्षणों का इसमें निर्वाह नही हो पाया है। कथ्य इस प्रकार है— एक अत्यन्त स्वरूपवती, चतुर रमणी के लिए कुरूप और मूर्ख पति मिल गया। उन दोनो के सयोग का प्रतिफल यह हुआ—

> चंदन घालू रे चूलडि, संघ सीयाला ने साथी।
> काग कपूर सुजाणे रे, अन्ध अरिसा नी भाति ॥५॥

जैसे काग कपूर के महत्व से और अन्धा दर्पण के महत्व से अनजाना है, वैसे ही मूर्ख पति भी इस स्वरूपवती और चतुर युवती के महत्व से अनचीन्हा है।

पूरे फागु में वह युवती झूरती है, विसूरती है:—

> कलजुग माहे कजोडला, ते दीठे महा दुख थाय।
> मूरत ने घर मोहनी, ते दुख केहि पर जाय ॥६॥

वह युवती रात्री भर दीर्घ निःश्वास लेती है। तभी गर्जना करता हुआ माधव मास आ जाता है। उसके आते ही दुःख जन्य कातरता मे वृद्धि हो जाती है। वह गुणवती जब अपनी सखी के घर जाती है तो वह वसन्तोद्दीप्त दुःख उसके हृदय मे नही समाता और सखी से अपने दुःख का वर्णन करने लगती है। कवि का कथ्य सक्षिप्त और पूर्णतया लौकिक है।

फागुकार का नाम अज्ञात है।

मूर्ख फाग

रचनाकाल- १७वी शती

आदि गणेश आराहियइ, सधि बुधि केरो रे कंथ ॥
जेह पसाई गायसूं, मूख फाग वसन्त ॥१॥

एक नारी वध जोवनी, तेहनो रे नीसत नाह ॥
करमे म्याग्या रे कजोडला, दइवे दीधो रे दाह ॥२॥

सुन्दर कोटि सवालखि, ते दुख भरी रे अपार ॥
पुरब पाप प्रकाशिया, सापडचो भूंडो भरतार ॥३॥

मुरख वापि वरं घयो, काणक फागनी कोटि ॥
रतन जड़ावू रे रेहटिइ, पाणि पटोला नी मोटि ॥४॥

चदन घालु रे चूलडि, सघ सीयाला ने साथि ॥
काग कपूर सु जाणे रे, अन्ध अरिसा नी भाति ॥५॥

कलजुग माहे कजोडला, ते दीठे महादुख थाय ॥
मूरख ने घर मोहनी, ते दुख केहि पर जाय ॥६॥

अवला आसा विलूविरे, वेधि कदम काल ॥
पिऊ पाखे कोण वांधिसे, जोवन उलटि पागि ॥७॥

वीर हणी वीरहि आकली, निसभर मेहली नीसास ॥
रग सीयालो आवियो, गाजतो माधव मास ॥८॥

एक वार गुण गोठडी, सहिअर ने घर जाय ॥
नारि नीसासा मेल्हती, वहु दुख पेट न माय । ९॥

दइवे दीधो दुरभागीओ, मुझ घर मुरख प्रिय ॥
नाह बिना किम निगमू, सहीअर सीआलानारे दिह ॥१०॥

खांवु पीवु प्रेखुं, ते घर घणु रि अपार ॥
एक वात अलूणडी, सांपडो भूंडो भरतार ॥११॥

पेले भवि मे जनमि पाडवा, सा कीवा अपराध ॥
असू अलूत्त चालिरे, तो कथ मूरख लाध ॥१२॥

पुजी रे गोर मे पाउरिग, ईश्वर ढाको घूल ॥
आदित घरइ अपराधण, रानल वाढ़या मूल ॥१३॥

सासू नणद सतापिया, दुहवा देवर जेठ ॥
एक श्री कंथ विछोहियो, तो मुझ वलिश्रो पेट ॥१४॥

वेर विधाताइ पोषिश्रो, रतन विग्गासु रे वाल ॥
चांपो त्रुटि नांखिश्रो, लोपी वेल विसाल ॥१५॥

सोनु सास जडाविश्रो, फदली बाउल बाथ ॥
महारा मननुं दोहिलु, सांभलो महीयर साथ ॥१६॥

हस्ति हेज न श्रागमि, कर विहूणो पोहतार ॥
ताजणे कमट पावीइ, कायर थश्रो असवार ॥१७॥

रूप जोवन मेलिश्रो,श्रा भवनीगमो श्राल ॥
ए पाहि रूडु रंडापण, एह सहवा तन बाल ॥१८॥

सहिग्नर सूता मुझ सेजडी, रयणी कालज थाय ॥
माहरा मूरख नाह नि, एकि निद्राय विहाय ॥१९॥

सुव सुइ समि सांझनो, वलगी ते एक ज ईस ॥
ऊगा पछी रे उठाडिए, भाद करी दसवीस ॥२०॥

सहीयर सा माटे सापडो, काअर कंथ कठोर ॥
एका मुझ मनि श्रावे रे, धान विहुणो सु ढोर ॥२१॥

दूख सवेरे दोहिलु, जाण पणो जग जाण ॥
ते दुख वहु परे भोगवूं, मूरख ने मनि राज ॥२२॥

कायर घर कसा पडी, रूखी तणे प्रवतार ॥
श्रा भवनुं जीवुं अलखामणुं, स्वामी सवा रा मार ॥२३॥

अखर एक लेखया, वहि विधाता भालि ॥
आदित तणा फल उघड़ा, मूडो भागो रे कमाल ॥२४॥

केतलू कही ति प्रकासीइ, केतली राखीइ लाज ॥
पापी मरण न श्रावे रे, बेहू मा एक नि श्राज ॥२५॥

पुरष एक अस्त्रि भोगीश्रा, भोग वि पी श्रारी नारि ॥
माहरो कंथ दो भोगीयो मुन्हि करि न कार ॥२६॥

बाप सेन गयो गमोतरे, मोदी पड़ी सेन मात ॥
उदर श्रनग बेहु वाधता, ते घुक्र तूटए खात ॥२७॥

जाण मरू झंपावी नइ, छि एवडो विरात ॥
हयडु खटकि माहरू, मुरख नापि भाग ॥२८॥

मली अछे तेवड तेवडो, रमवा महीअर घात ॥
सहु को प्रीत प्रकासे रे, करि छि कथनी वात ॥२९॥

एक पुरष अस्त्रि भोगीआ, एक वेश्या पुर जाय ॥
एक कहे देवे ने सु करू, एवडो अ तर काय ॥३०॥

माहरा मन नु दोहिलू, सांभलो सहियर गूज ॥
एक जीभे कहु केतलू, थोडा मांहि घणु वूझि ॥३१॥

विहिनि कहु वेसारी नि, सारी सीखामण आज ॥
वायडी तु का भोलि रे, पीउनी नही तुझ लाज ॥३२॥

पापण पीउ वगोइर यो, ए तुझ भूंडी टेव ॥
कोढीओ कावड घालिने, सही ते जाणवो देव ॥३३॥

करि नि भगति पतिव्रता, साउलानी परि साघ ॥
रूप कुरूप करे नही, जानि तु ईश्वर आराधि ॥३४॥

आ भवे एहवो आराधीउ, आवति तु नहि पामि ॥
मन वछित फल तुम लि, जो तुमसे सारंग स्वामि ॥३५॥

इति मूर्ख फाग ॥ पत्र २ नं० ६७५६, ला० द०
भारतीय संस्कृति विद्या मन्दिर अहमदाबाद ।

जिनचंद सूरि फागु

रचना काल – सम्वत् १३५०

[परिचय के लिए भूमिका के अन्तर्गत
'हिन्दी की आदिकालीन फागु कृतियाँ' देखें ।]

अरे पणमवि सामिउ सतजु, सिव वाउलि उरिहारु,
अरे अणहिलवाडा मडणउ सव्वह तिहुयणसारु;
अरे जिण प्रबोध पवोह सूरि पाटिहि, सिरि संजमु सरि कंतु,
अरे गाइवउ जिणचदसूरि गुरु, कामलदेवि कउ पूतु । १

अरे हयडऊ तपियउ पेखिवि, न सहए रतिपतिनाहु,
अरे वोलावइ वसतु ज सव्वह रितुहु राउ,
अरे आगए तुहि बलि जीतओ, गोरड करउ वालभु,
अरे इसइं वचनु निसुणेविणु, आगयउ रलिय वसतु । २

अरे पाडल वालउ वेउल, सेवत्री जाइ मुचकुंदु,
अरे कंटु करणी रायचंपक विहसिय केवडिविंदु;
अरे कमलहि कुमुंदिहि सोहिया, मानस जयलितलाय,
अरे सीयला कोमला सुरहिया, वायइं दक्खिणा वाय । ३

अरे पुरि पुरि आवुला मउरिया, कोइल हरखिय देह,
अरे तहि ठए दुहकए वोलए, मयणह केरिय लेह;
अरे इसइ वसतिहि हूयए, माधु स केतिय मान्न (?)
अरे अचेतन जे पाखिया, तिन्हु तणी जुगलिय वात । ४

अरे इसइ वसंतुहि पेखेवि, नारिय कुंजरु कामु,
अरे सिंगारावए विविह परि, सव्वह लोयह वामु;
अरे सिरि मउडु, कन्ति कुंडलवरा, कोटिहि नवसरहास,
अरे वाहहिं चूडा, पागिहि नेउर कओ झणकारु ।५

अरे न ....

....

....ट परि हुयउ देवगण माव ।

रिण तूरिहिं वज्जतिहि उट्ठिउ थीलनरिन्दु,
देखेवि उतकट्ठु विम्हियउ सयलु विदेखिहि विंदु । २१

अरे ट्ठेठिहिं ट्ठेठिहि दीवए नाठउ रतिपतिराउ,
नारीयकुंजरु मेल्हिवि जोयए छाडिय खाल (?) २२

घराणिदह पायलहिं पुहवहिं पंडिय लोउ,
जीवउं जीतउं इम भणइ सग्गिहिं सुरपति इंदु । २३

वद्धावणउं करावए सग्गिहिं जिणसरसूरि
गूजरात पाटण भल्लउं सयलहं नयरह माहि । २४

मालवा की बउल भणहि सयलहं लोयहं माहि,
सिरि जिणचंदसूरि फागिहि गायहि जे भति भावि,
ते वाउल पुरुसला, विलसहि विलसहि सिवसुह साथि । २५

जिन पद्म सूरि कृत स्थूलि भद्र फागु

रचनाकाल– सम्वत् १३९५

[परिचय के लिए भूमिका के अन्तर्गत
'हिन्दी की आदिकालीन फागु कृतिया' देखें।]

पणमिय पासजिणदपय अनु सरसइ समरेवी,
थूलिभद्दमुणिवइ भणिसु फागुवंधि गुण केवी। १
अह सोहग सुन्दर रूववंतु गुणमणि भडारो,
कचण जिम झलकंतकंति सजम सिरि हारो,
थूलिभद्दमुणिराउ जाम महियलि वोहेतउ,
नयररायपाडलियमाहि पहुउ विहरतउ। २
वरिसालइ चउमासमाहि साहू गहगहिया,
लियइ अभिग्गह गुरह पासि निय गुण महमहिया,
अज्जविजय सभूयसूरि गुरु वय मोकलावइ,
तसु आएसि मुणीस कोसवेसाघरि आवइ। ३
मंदिरतोरणि आवियउ मुणिवरु पिक्खेवी,
चमकिय चित्तिहि दासडिय वेगि जाइ वधावी,
वेसा अतिहि उतावलि य हारिहि लहकन्ती,
आवीय मुणिवर रायपासि करयल जोडंती। ४
भास– धर्मलाभु मुणिवइ भणिसु चित्रसाली मंगेवी,
रहियउ सहीकिसोर जिम धीरिम हियइ धरेवी। ५
झिरिमिरि झिरिमिरि झिरिमिरि ए मेहा वरिसंति,
खलहल खलहल खलहल ए वाहला वहंति,
झबझब झबझब झबझब ए वीजुलिय झबकइ,
थरहर थरहर थरहर ए विरहिणिमणु कंपइ। ६
महुर गभीरसरेण जिम जिम गाजंते,
पंचवाण निय कुसुमवाण तिम तिम साजंते,

जिम जिम केतकि महमहत परिमल विहसावइ,
तिम तिम कामि य चरण लग्गि नियरमणि मनावइ। ७

सीयलकोमालसुरहि वाय जिम जिम वायते,
माणमडप्फर माणणि य तिम तिम तिम नाचंते,
जिम जिम जल भरभरिय मेह गयणगणि मिलिया,
तिमतिम कामी तणा नयण नीरिहि झलहलिया। ८

भास– मेहारवभर ऊलटि य जिम जिम नाचइ मोर,
तिम तिम माणिणि खलभलइ साहीता जिम चोर। ९

अइ सिंगार करेइ वेम मोटइ मनऊलटि,
रइयरगि वहुरंगि चगी चदण रसऊगटि,
चपयकेतकिजाइकुसुम सिरि खुप भरेइ,
अति आछउ सुकमाल चीर पहिरणि पहिरेइ। १०

लहलह लहलह लहलह ए उरि मोतियहारो,
रणरण रणरण रणरण ए पगि नेउरसारो,
झगमग झगमग झगमग ए कानिहि वरकुंडल,
झलहल झलहल झलहल ए आभरणह मडल। ११

मयण खग्ग जिम लहलहत जसु वेणीदंडो,
सरलउ तरलउ सामलउ रोमावलि दडो,
तुंग पयोहर उल्लसइ सिंगारथवक्का,
कुसुमवाणि निय अमियकुंभ किर थापणि मुक्का। १२

भास–काजलि अंजिवि नयणजुय सिरि सिंथउ फाडेई,
वोरीयावडि कांचुलिय पुण उरमंडलि ताडेइ। १३

कलजुयल जसु लहलहत किर मयणहिंडोला,
चचल चपल तरंगचंग जसु नयण कचोला,
सोहइ जासु कपोलपालि जणु गालिमसूरा,
कोमल विमलु सुकठु जासु वाजइ संखतूरा। १४

लवणिमर समर कूवडिय जसु नाहि य रेहइ,
मयणराय किर विजयखभ जसु ऊरू सोहइ,
जसु नहपल्लव कामदेव अंकुस जिम राजइ,
रिमिझिमि रिमिझिमि ए पायकमलि घाघरिय सुवाजइ। १५

नवजोवनविलसंतदेह नवनेहगहिल्ली,
परिमललहरिहि मयमयंत रइकेलिपहिल्ली,

अहरविंव परवालखंड वरचंपावली,
नयणसलूणी य हावभावबहुगुणसंपुन्ती । १६

भास—इय सिणगार करेवि वर जव आरी मुणि पासि
जोएवा कडतिगि मिलिय सुर किन्तर आकासि । १८

अह नयणकडक्खहं आहणए वांकड जोवंती,
हावभाव सिणगार भंगि नवनवि य करंति,
तह वि न भीजड मुणिपवरो तव वेस वोलावइ,
तवणुतुल्ल तुह देह नाह मह तणु सतावइ । १८

वाहरवरिसहं तण्ड नेहु किणि कारणि छंडिउ,
एवडु निठुरपण्ड कंइ मूंसिउ तुम्हि मंडिउ
थूलिभद्द पभणेइ वेस अह खेदु न कीजइ,
लोहिहि घडियउ हियउ मज्झ तुह वयणि न भीजइ । १९

महविलवंतिय डवरि नाह अणुराग धरीजइ,
एरीसु वावमु कालु सयलु मूंसिड माणीजइ,
मुणीवइ जंपइ वेस सिद्धि रमणी परिणेवा,
मणु लीणउ संजम सिरीहिसुं भोग रमेवा । २०

भास—भणइ कोस साचउ कियउ नवलइ राचइ लोउ,
मूं मिल्हिवि सजमासिरिहि जउ रातउ मुणिराउ । २१

उवसमरसभरपूरियउ रिसिराउ भणेइ,
चिंतामणि परिहरवि कवणु पत्थरु गिह्लेइ,
तिम सजमसिरि परिवएवि वहुधम्मसमुज्जल,
आलिंगइ तुह कोस कवणु पसरंतमहावल । २२

पहिलउ हिवडा कोस कहइ जुव्वणफलु लीजइ,
तयणंतरि संजमसिरीह सुह सुहिण रमीजइ,
मुणि वोलइ जि मइ लियउ तं लियउ ज होइ,
कवणु सु अच्छइ भुवणतले जोमहमणु मोहइ ।२३

भास—इणिपरि कोसा अवगणिय थुलिभद्दमुणिराइ,
तसु धीरिम अवधारि करिचमकिय चित्ति सुहाइ २४

मडवलवतु सु मोहराउ जिणि नाणि निधाडिउ,
झाणखडागिण मयणसुभड समरंगणि पाडिउ,
कुसुमवुठ्ठि सुर करइ तुट्ठि हुउ जयजयकारो,
धनु धनु एहु जु थूलिभद्द जिणिजीतउमारो । २५

पडिबोहिवि तह कोसवस-चउमासि अणंतर,
पालिय भिग्गह ललिय चलिय गुरु पासि मुणीसरु,
दुक्करदुक्करकारगु त्ति सूरिहि सु पसंसिउ,
संखसमुज्जलजसु लसंतु सुरनरह नमसिउ । २६

नदउ सो सिरिथूलिभद्द जो जुगह पहाणो,
मलियउ जिणि जगि मल्लसल्लरइवल्लहमाणो,
खरतरगच्छि जिण पदमसूरिकिय फागु रमेवउ,
खेला नाचइ चैत्रमासि रंगिहि गावेवउ । २७

राजशेखर सूरि कृत नेमिनाथ फागु

रचनाकाल– सम्वत् १४००

[परिचय के लिए भूमिका के अन्तर्गत–
'हिन्दी की आदिकालीन फागु कृत्तिया' देखें]

सिद्धि जेहि सइ वर वरिय ते तित्थयर नमेवी,
फागुबंधि पहुनेमिजिणगुण गाएसउं केवी। १

अह नवजुव्वण नेमिकुमरु जादव कुल धवलो,
काजलसामल ललवलउ सुललियमुहकमलो,
समुदविजयसिवदेविपूतु सोहसिगारो,
जरासिंघु भडभगभीमु बलि रूवि अप्पारो। २

गहिरसद्दि हरिसखु जेण पूरिय उद्दंडो,
हरि हरि जिम हिंडोलियउ भुयदडपयडो,
तेयपरिक्कमि आगलउ पुण नारिविरत्तउ,
सामिसुलक्खण साभलउ सिवमिर अणुरत्तउ। ३

हरि हल हरसउ नेमिपहु खेलइ मास वसंतो,
हावि भावि भिज्जइ नहो य भामिणिमाहि भमंतो। ४

अह खेलइं खडोखलिय नीर पुणु मयणि नमावइ,
हरि अ ते हरमाहि रमइ पुणि नाहु न राचइ,
नयण सलूणउ लडसउतु जउ तीरिहिं आवउ,
माइ बापि वधविहि माड वीवाह मनाविउ। ५

घर घरि उत्सव गारवए राउल लहलह ए,
तोरण वदुरवाल कलस धयवड लहलहए,
कन्हडि मागिय उग्गसेण धूय राजल लाधा,
नेमिऊमाहीय, वाल अट्ठभवनेहनिवद्धा। ६

राइए सम तिहु भुवणि अवर न अत्थइ नारे,
मोहणविल्लि नवल्लडीय उप्पनीय संसारे। ७

अह सामलकोमल केशपाश किरि मोरकलाउ,
अद्धचंद समु भालु मयणु पोसइ भडवाउ,
वकुडियालीय भुंहडियहं भरि भुवणु भमाडइ,
लाडी लोयणलहकुडलइ सुर सग्गह पाडइ। ८

किरि सिसिबिंब कपोलहिंडोल फुरंता,
नासा वंसा गरुडचंचु दाडिम फल देता,
अहर पवाल तिरेह कंठु राजल सर रूडउ,
जाणु वीणु रणरणइं जाणु कोइलटहकडलउ। ९

सरलतरल भुयवल्लरिय सिहण पीणघणतुंग,
उदर देसि लंकाउली य सोहइ तिवलतुरंगु। १०

अह कोमल विमल नियंबबिंब किरि गंगापुलिणा,
करिकर अरि हरिण जंघपल्लव करचरणा,
मलपति चालति वेलणीय हंसला हरावइ,
संझारागु अकालि बालु नह किरणि करावइ। ११

सहजिहिं लडहीय रायमए सुलखण सुकमाला,
पणउं घणेरउ गहगहए नवजुव्वण वाला,
भमरभोली नेमि जिण वीवाह सुणेई,
नेहगहिल्ली गोरडी हियडइ विहसेई। १२

सावण सुकिलछट्ठि दिणि वावी समउ जिणंदो,
चल्लइ राजलपरिणयण कामिणि नयणानंदो। १३

अह सेय तुंगतरलतुरइ रइरहि चडइ कुमारो,
कन्निहिं कुंडल सीसि मउड गलि नवसरहारो,
चंदणि ऊगटि चंद धवलकापडि सिणगारो,
केवडियालउ खुंपु भरदि वंकुडउ अतिफारो। १४

धरहि छत्तु वितु चमर चालहिं मृगनयणी,
लूणु उतारहिं बरबहिणी हरि सुज्जलवयणी,
चहुगरि बइसइ दसारकोडि जादवभूपाला,
हयगयरहपायक्कचक्कमीकिरिहिं भमाला। १५

मगल गायहिं गोरडीय भट्टह जयजयकारो,
उग्गसेण घरनारि बरो पहुतउ नेमिकुमारो। १६

अह सहिय पयंपय हल सहि ए तुह वल्लहउ आवइ,
मालि अटालिहिं चडिउ लोउ मण नयणु सुहावइ,
गउखि बइठी रायमए नेमिनाहु निरखइ,
पसइयमाणिहिं चंचलिहिं लो अणिहिं कउखइ । १७

किम किम राजलदेवि तणउ सिणगारु भणेवउ,
चपइगोरी अइधोइ अंगि चदनुलेवउ,
खुंपु भराविउ जाइकुसमि कसतूरी सारी,
सीमतइ सिंदूररेह मोतीसरि सारि । १८

नवरंगी कुंकुमि तिलय किय रयणतिलउ तसु भाले,
मोतीकुंडल कन्नि थिय विवोलिव करजाले । १९

अह निरतीय कज्जलरेह नयणि मुहकमलि तंबोलो,
नगोदर कठलउ कंठि अनु हार विरोलो,
मरगदजादर कंचुयड फुडफुल्लहं माला,
करि ककण माणिवलयचूड खलकावइ बाला । २०

रुणुभुणु ए रुणुभुणु ए रुणुभुणु ए कडि घघरियालि,
रिमिझिमि रिमिझिमि रिमिझिम ए पयनेउरजुयली,
नहि आलत्तउ वलवलउ से अंसुय किमिसि,
अंखडियाली रायमए प्रिउ जोअइ मनरसि । २१

घाडउ भरिउ जोवडहं टलवलत कुरलत,
अहूठ को डिरु उद्धसिय देषइ राजलकतो । २२

अह पूछइ राजलकंतु कांइ पसुबंधणु दीसइ,
सारहि बोलइ सामिसाल तुह गोखु हुस्यइ,
जीव मेल्हावइ नेमि कुमरु सरणागइ पालइ,
घिगु ससारु असारु इस्यउं इम भणि रहुवालइ । २३

समुदविजय सिवदेवि रामु कुसवु मलावइ,
नइपवाह जिम गयउ नेमि भव भमणु न भावइ,
धरणि धसक्कइ पडइ देवि राजलविहलंघल,
रोअइ रिज्जइ वेसु रुवुवहु मन्नइ निप्फलु । २४

उग्गसेणधूय इम भणइ दूषहि दाझइ देहो,
का विरतउ कत तुह नयणिहि लाइवि नेहो । २५

आसा पूरइ त्रिहुभुवण मू म करि हयासी,
दय करि दय करि देव तुम्ह हउं अछउं दासी,

सामिन पालइ पडिवलउं तउ कासु कहीजइ,
मयगलु उवट संचरए किणि कानि गहीजइ । २६

नेमि न मलइ नेहु देइ संवच्छरदाणूं
अजलगिरि संजम लियइ हुय केवलनाणूं,
राजल देविसउं सिद्धि गयउ सो देउ थुणीजइ,
मलहारिहिं रायसिहर सूरिकिउ फागु रमीजइ । २७

नेमिनाथ फागु (प्रथम, कृष्णर्षीय जयसिंह सूरि)

कृष्णवर्षीय जयसिंह सूरि ने नेमिनाथ से सम्बन्धित दो फागुओ के अतिरिक्त सम्वत् १४२२ मे सस्कृत मे 'कुमारपाल चरित' महाकाव्य की रचना की एवं 'न्यायसार' नामक ग्रन्थ पर 'न्यायतात्पर्यदीपिका' नामक टीका भी लिखी है। अतः इसी आधार से यह अनुमान किया जा सकता है कि विवेच्य फागु की रचना संवत् १४२२ के आस-पास हुई होगी।

वर्ण्य विषय की दृष्टि से इस फागु मे नेमिनाथ और राजुल की लोक विश्रुत कथा को ग्रहण किया गया है। पहले नेमिनाथ का परिचय देकर फिर ऋतुराज का अविर्भाव किया गया है। उद्दीपनविभावान्तर्गत व्यवहृत इस वसंत-निरूपण में कोई मौलिक दृष्टि अथवा स्थापना को स्थान नही मिला है। जल-क्रीडा के सन्दर्भ मे राजुल के सौंदर्य को निरूपित किया गया है। यह सौंदर्य-बोध भी रूढि-ग्रस्त है:—

मयण सूहड करिवाल सरिसु सिरि वेणीयदंडो
कंति समुज्वलु तासु वयणु, सांस बिंबु अखडो,
भालथलु अट्ठमिय चंदु, किरि कंन हिंडोला,
भमुह धणुइ सम विपुल, चपल लोयण कचोला ॥९॥

इस छद की प्रथम पक्ति और जिनपद्मसूरि के 'स्थूलिभद्र फागु' की इस पंक्ति मे कोई अन्तर नही है —

मयण खग्ग जिम लहलहंत जसु वेणी दंडो।

भाल को अष्टमी के चाँद की तरह उपमित करने मे और चंचल नेत्रों की उपमा प्याले से देने मे अवश्य ही प्रज्ञानुस्यूत-प्रयोग को प्रदर्शित किया गया है।

वर के रूप में नेमिनाथ की सज्जा का वर्णन एवं सौंदर्य-बोध कराया गया है। तोरण पर पहुँच कर नेमिनाथ को वैराग्य-बोध हो जाता हैं। यह देखकर राजुल का हृदय खण्डित हो उठता है। वह नवसर हार को तोड देती है, कंकण फोड़ देती है। सम्पूर्ण आभरणों को नष्ट कर देती है। उसके लिए श्रृङ्गार अं ङ्गार-

वत् हो जाता है। भोग, शोक का कारण और सुख, दुःख का कारण बन जाता है—

हार तासु प्राणापहारु, सिंगारो अंगारो।
भोग करइ मणि सोग, सुष दुक्खह भंडारो ॥२९॥

काव्यगत उपलब्धियों और नूतन भाव-बोध की दृष्टि से इस फागु की कोई विशिष्ट देन नहीं है।

कृष्णर्षीय जयसिंह सूरि कृत प्रथम नेमिनाथ फागु

रचनाकाल— संवत् १४२२

पणमिवि जिण चउवीस पइ, सुमरवि सरसइ चित्ति,
नेमि जिणेसर केवि गुण, गाएसउ वहु भत्ति। १

जादव कुल सिंगारु पहु नेमि कुमारो,
समुद्र विजय नरहि- पुतु, सिवदेव मल्हारो,
सोहगसुंदर तरुणदेह, गुणगयाभंडारो,
सिव सिरि रत्तउ गणइ चित्ति संसारु असारो। २

वनसइमंडन अह पहूतु, रितराउ वसंतु,
चंपक वेउल वउल कमल, परिमलु विलसतो,
कोइल कालिखु करुहि जाणु वाजइ वर वीण,
मन्नावइ प्रियपाय लग्गि तरुणी अहि दीण। ३

भमइं भमर मधुरपानमत्त झंकारु करंता,
रितुरायह किरि भट्टथट्ट वर कित्ति पढंता,
पसारिउ परिमलु मलइवाउ, दस दिसि पूरंतो,
माणिणि कामिणि मनह माहि, तक्खणि चूरंतो। ४

कामिय घर सहकार साष, वधंति हिंडोला,
हिंडहिं प्रियतम सरिसु, सरिसु गाइं इंदोला,
झंमलभोलिय वाल रंगि नव फागु रमंते,
दुक्खिय विरहिणि नयण नीरु नीझरण झरंने। ५

भास-लहवि विसंतु सहाइयउ, तरुणिय वलु अविलंवि,
सचराचरु जगि वसि कियउ, मयण सुहड़ु अविलंवि। ६

पेषवि पहुपड महि वसंतु, अंतेउर लेई,
वहु परि केसवु नेमि सहिंतु जलकेलि करेइ,
राणिय रुपिणि पमुह कुसुम आभरण करंति,
निय वर देवर देह, नेहगहिली मंडति। ७

गाढइ आदरि नेमिकुमरु, निय वचन विनाणि,
सारग पाणिहि पाणिगहणु मन्नाविउ प्राणि,
राइमई उग्गसेण धूय, मागवि तिणि लीधी,
अट्ठ भवतर तणइ नेहि, तक्खणि मन वीधी । ८

मयण सुहड करिवाल सरिसु सिरि वेणीयदंडो
कंतिसमुज्वलु तासु वयणु, ससि बिंबु अखडो,
भालथलु अट्ठमिय चदु,किरि केन हिंडोला,
भमुह धणुह सम विपुल, चपल लोयणकचोला । ९

दप्पणनिम्मल तसु कपोल, नासा तिलफूलु,
हीरा जिम झलकत दतपतिहि नहि मुल्लु,
अहिरु प्रवालउ, कंठु करइ कोइलसउ वादो
राजल वाणिय वेणु वीणु ऊतारह नादो । १०

आस—तसु भुयवल्लीय करि कमल, पीण पयोहर तुंग,
परिपूरिय सिंगार रसि, कणय कलस किरि चग । ११

उइकि लंकालिय सीह जेम, समत्रिवलि तुरंग,
नाही मंडलु अइ गहीरु रोमावलि चंग,
पुलिन विसाल नियंबबिंब कदलीथंभोरुह,
हराणिय जंघा, चरणजुयल पल्लव गुणचोरु । १२

जुवणवातिय लडसंडति, लवन्ननिहाणी,
कणयकंब सम कायकति, तिहु भुवण वषाणी,
विनय विवेक विचारसील, लीला सुविसाला,
रभ तिलुत्तम सरिस रुव सा राजल बाला । १३

समुद विजय उग्गसेण भुवणि मंडप वंधीजइं,
द्वारमइपुरि ठामि ठामि उच्छव मंडीजइ,
सिविदिवि राणिय धारणिय गेत्रिणिहि करावइ,
वाग ऊचार विचार सार अति करावइ । १४

अह सिंगारइ नेमिकुमरु निय करि सिवदेवी,
पहिरावइ देवंगु चीरु, चदनि अंचेई,
पुंय खणालउ सीसु, मकुटु रोपिउ मणिसारो,
कर्निहि कुंडल झगमगति उरि मोतिय हारो । १५

भास—वीरवलय हथिहि ठविय, अंगुलि मुद्दा संगो,
सुरतरु महि करि मावइरिउ, सामिउ सामलऊ गो । १६

सावण छठि सुकिल दियसु, सिरि छतु वहतो,
तु ग तुरगम रहि चडेवि रवि जिमि दीपतो,
जादव कोडि सहितु, नेमि परणेवा चल्लइ,
रह गइ हुइ पाइक्कमारु, महि मडलु हल्लइ, १७

चमर चिंघ सिकिरि कमालु गयणगणु छायउ,
सिविदिवि नदणु देसणत्थु दस दिसि जणु धायउ,
भेरी भु गल तिविल ताल कसाला वाजइ,
हरसिय नाचहि जावविणी, जादव मनि गाजइं । १८

न्हाइय धोइय रायमइ, धारणि सिंगारइ,
धालिय जादर तणउ चीरु, आछउ पहिरावइ,
भरियउ केतकि धुपु सीमु सीमत सिंदरु,
भाल तिलउ माणिक्कनिलउ धरियउ किरि सूरु । १९

अ जनि अ जिय वेवि नयण, पत्रवेलि कपोलि,
मोती लग ताडक कलि, मुखि रगु तबोलि,
कठु नगोदरु फुल्लमाल, उरि नवसर हारो,
करे ठिय कंकण रयणवलय मुंद्रडिय अपारो । २०

भास–तसु कडि कंचण घग्घरिय, झणणणणणण वाजते,
चरणिहि नेउर रुणझुणइं, नहि आलतइ उज्जति । २१

पेपवि वरु आवतु सहिय, राजल इम जंपइ,
लोयण भुव तु करि न देवि वरु आवइ सपइ,
लाडिय लडहिय गडषि चडवि, पच्चक्खु अणंगो,
जोवइ प्रिय सव्वगु चगु मनि पावइ रगो । २२

जिम जिम लाडिय चपल नयणि जोवइ निय नाहो,
तिम तिम रगु न माइ अ गि, मनिमाहि उमाहो,
तक्खणि दाहिणु नयणु फुरिउ, जाणिउ कुर माणि,
पभणइ नेमि न इणि समणि, इम वोलइ राणी । २३

ताम पहूतउ नेमिनाहु मडप दुवारे,
देपवि घण कुरलत जीव वाडा मज्झारे,
बधन कारणु जीव तणउ, सारहि पुच्छेइ,
गउरह हुइस्यइ जानियह, इम सो पभणेई । २४

चितइ सामिउ मनह माहि धिगु धिगु संसारो,
धिगु धिगु पाणिग्गहणरगु, जीवह सघारो,

धिगु धिगु बंधवनेहु एहु, धिगु धिगु गृहवासो,
एहु सयलु परमत्थि अत्थि गलिकदलि पासो। २५

भास—माड भंजिवि जीवह तणउ, निय करि करुणासारो,
रहु वालवि घरि सचरिउ, सामिउ नेमि कुमारो। २६

अह मन्नावइ पाणिगहणु, बधव प्रिय माय,
हथि पाइ लग्गेवि दीण बोलइ विच्छाय,
नीठरु चितु करेवि, नेहु भजवि सव्वगो,
नेमि न मन्नइ भवविरतु, मनि सजमरगो। २७

प्रियतमु गयउ जाणेवि देवि राजल सचित,
छिन्नि वल्लि जिम धरणि पडइ, मुच्छा सपत्त,
ओडइ नवसरु हारु, कणइ ककण तहि फोडइ,
मोडइ सयलाभरण, मयणपीडिउ तणु मोडइ। २८

हारु तासु प्राणापहारु, सिगारो अगारो,
भोग करइं मणि सोग सुष दुक्खह भडारो,
विलवइ गोवइ विरहझाल, भागी मनि आस,
नेमिविमुक्किय रायमइ, मेल्हइ नीसास। २९

वोल्लइ लाडी सामिसाल, तुह कवणु विचारो,
जीवह दीधउ अभयदाणु, मह पुणु दुहभारो,
जासु न रूपु न गधु न रसु नहु देहु न गेहो,
तुह मणि सिवसरि तेह सरिसु कहि केउ सनेहो। ३०

भास—इम विलवतिय रायमइ, नेमिनाहु परिचत्त,
परिग्गणु कह नवि बूझवइ, विरहानल सतत्त। ३१

दाणि दलिद्दु दलेवि, लेवि सजमु भरु दुद्धरु,
केवलु नाणु लहेवि सिद्धि पत्तउ नेमीसरु,
भवियजिणेसर भवण राग रितुराउ रमेवउ,
कन्हरिसी जयसिंहसूरिकिउ फागु कहेवउ। ३२

नेमिनाथ फागु (जयशेखर सूरि)

जयशेखर सूरि, श्वेताम्बर जैन सम्प्रदाय के अचलगच्छानाचार्य महेन्द्रप्रभ सूरि के शिष्य थे। इना जन्म १५वी शती के प्रारम्भ मे हुआ था। सम्वत् १४१८ मे मेरुतुंग सूरि से दीक्षा प्राप्त की। जयशेखर सूरि 'त्रिभुवन दीपक प्रवन्ध' के लेखक के रूप में सुप्रसिद्ध हैं। इसके अतिरिक्त संस्कृत में रचित कृतियाँ हैं:— 'उपदेश चिन्तामणि', 'धम्मिल चरित', 'प्रवोध चिन्तामणि' आदि। ऐसा भी कहा जाता है कि जय शेखर सूरि ने 'जैन कुमार सम्भव' नामक महाकाव्य की भी रचना की है।[1]

इस कृति की हस्तलिखित प्रति १६ वीं शती की है, इस आधार पर 'नेमिनाथ फागु' का रचनाकाल १५वी शती का मध्यकाल माना जा सकता है। रचना के प्रारम्भ में कवि ने नेमिकुमार की वदना के उपरान्त, गुरु की आज्ञा पाकर नेमिकुमार फागु की रचना करने का उल्लेख किया है। द्वारिकापुरी का वर्णन तथा कृष्ण के शौर्य का वर्णन करने के उपरान्त नेमिनाथ का परिचय दिया है। यौवन में प्रविष्ट होने पर नेमिनाथ और कृष्ण की पत्नियां लाक्षाराम के शीतल जल में जलक्रीडा करते हैं। इस सन्दर्भ मे कवि ने वसन्तागमन का सुन्दर वर्णन किया है:-

> तउ अवतरिउ रितुपति तपति सुमन्मथ पूरि।
> जिम नारीय निरीक्षिए दक्षिए मेल्हइ सूरि ॥८॥

(सूर्य ने दक्षिण-दिशा को पारित्यक्त कर दिया है। जैसे कोई आश्रयहीन नारी को परित्यक्त कर दिया जाता है।)

यहाँ पर कवि ने परिवेशजन्य उल्लास, प्रत्यक्ष उद्दीपन और प्रेरक उद्दीपन के रूप वसन्त निरूपण किया है। इस उद्दीप्त परिवेश मे सत्यभामा और रुक्मिणी के कहने पर नेमिनाथ राजीमती के साथ विवाह की स्वीकृति दे देते हैं। तत्पश्चात कवि ने वर के रूप मे नेमिनाथ की सुषमा का वर्णन किया है। द्वार पर भोज के लिए बँधे हुए अश्व, मृग, शूकर आदि पशुओ को देखकर नेमिनाथ का मन विरक्त हो जाता है। विरक्ति का सदेशा सुनते ही राजीमती बेसुध होकर जमीन पर गिर पडती है। होश मे आने पर विलाप करने लगती है। इस स्थल पर उसकी उक्तियाँ अत्यन्त मार्मिक हैं:—

---

१. त्रिभुवन दीपक, भूमिका।

दव दति विरहानलि हा नलि नडिय अपार,
प्रिय मेलउ केते वास रे प्रास रे वाडिय संसारि।
हूं नवि देखी प्रादरी प्रादरी याद वराइं,
वाकीय दृष्टि पसारिय हारिय काजल वाइ ॥५०॥

[मेरी अवस्था नल से वियुक्त दमयन्ती के समान हो गई है। प्रिय मिलन से बढ़कर कौन प्राशा इस संसार मे है। प्रार्द्रतर से सिक्त हुई मैंने हे यादवराय तुम्हारा प्रादर नही देखा। अब मेरी ये कज्जलाय प्रांखे राह देखते-देखते थक गई हैं।]

निराश होकर राजीमती हाथ के कंकणों को फोड़ देती है। नवसर हार को तोड देती है। राजीमती की विरह-वेदना मे कवि ने अपना काव्योत्कर्ष दिखाया है। विप्रलभ शृङ्गार परक उद्दीपन विभाव और राजीमती का विरह वर्णन बड़े ही प्रभावोत्पादक ढंग से किया है। वस्तुतः यह कथा ही इतनी भावप्रवण है कि जैन कवियों ने ५० के लगभग फागुप्रो की रचना इसी कथा को उपजीव्य बनाकर की है।

नेमिनाथ फागु

रचयिता— जयशेखर सूरि   रचनाकाल- वि० स० प्राय: १४६०

जिणि जगि जीतउ शमरसि अमर शिरोमणि कामु
विलसइ सिद्ध सयवर सवरगुणि अभिरामु ।
निरुपम निपुण निरजन रजन जन मन चारु
पामीय सुह गुरु आइसु गाइसु नेमिकुमारु ॥१॥

दीपइ जिणि जिणमदिर मइर शिखर समान
दीसइ दिसि दिसि हाटक हाट कहु क विमांन ।
धनदिहिं सइं हथि थापिय वापी अ वर आरामि
मणि कण धण सपूरिय पूरिय द्वारका नामि ॥२॥

आकुलि कुलवट लोपिय गोपिय रमइ रंगि
कास केसि जाणूर ए चूरए जे वहु भगि ।
वसुधा वीर वदीतउ जीतउ जिणि जारासिंधु
तहिं हरि अखिल टालए राजसुवधु ॥३॥

तसु बधव भवभजन अंजन पुंज समांन
नामियइ नाथ स चेतनि केतनि सख प्रधान
समुद्रविजय शिवानदन चदनवचन विलासु
नेमि जिणेसर नितु नितु उन्नत महिम निवासु ॥४॥

सख मुखिइं जिणि पूरिय भूरिय हरि मनि जपु
टोल टलक्कइ रैवत दैवत मनि आकपु ।
सारग चाप चडाविय डाविय बाहु नइ प्राणि
हरि हेला हींडोलिय तोलिए तसु बलु प्राणि ॥५॥

त्रिभुवननायक जानिय मानिय वरू ससार
नेमि न यौवनि परिणए अ·णए घरइं दमार ।
कहइं कहावइ ते जिमतेजि मनोहर नाहु
तिम तिम भिमइं न मांनइ ए मानइ मनि अति दाहु ॥६॥

मिलिया नेमि नारायण गायण गीत सुणेउ
वारवधू मदि माचती नाचती जोइ बेउ ।
बेउ वेलइ सरसी तलि सीतलि लाखारांमि
नीरंगु नेमि न भीजइ खीनइ नारी नामि ॥७॥

रमइं रमापति राणिय आणिय आपणइ पासि
तीणि छलइ नवि छीपइ ए दीपइ ए तानप्रकासि ।
तउ अवतरिउ रितुपति तपति सु मन्मथपूरि
जिम नारीय निरीक्षिण दक्षिण मेल्हइ सूरि ॥८॥

कीजइ अवसरि अवसरि नवरसि रागु वसंत
तरुणीदल दोलारस सारस भमइ हसंत ।
लिपइ तावनिकंदनि चदनि चदनि देहु
निज निज नाथ सभारिय नारीय नवलउ नेहु ॥९॥

"चद रे तुं गम मूंकि म मू किम किरण उ वाहु
कोइल बोलि म मान सिउ मानसिउ ताहरउ पाहु ।
मनकरि मधुकरि रुणझुणि नीझणि रहण सुहाइ
मलयानिल क्षण माहरी थाहरी क्षण इकुवाइ ॥१०॥

एकली करवकनी कली नीकली गिउ अभिमानु
मानि अशोक अनोहक शोकह तणउं निधानु ।
दव जिम दीठइं करुणए करणइ ए हियुं निकांमु
मरुउ वरुउ दमनकि मन किहिं नही य विश्रामु ॥११॥

जगडइ ए जासक जूहिय मूं हियडउ निरधार
देखउं केवह. केवडी जेवडी करवत धारि ।
प्रिय विण चगि नारंग रग ना आवइं आजु
हिव मइ हत्या साधवी माधवी वेलि न काजु ॥१२॥

नीरि निरक्षिय नीरज नीरज हावउ केमु
टालइ ए केलीहर दीहर खल जिम खेमु ।
विरहणि वस विहसक किंशुक नहि ए भ्र ति
विनवइ विरह करालिय बालिय इभ एकति ॥१३॥

चचल चपक कोरक चोर कहउ भि न चीति
तउ परिहरियइं षटपदि सपदि सजाती प्रीति ।
पाडल परिमल पूजती धूजती पवन सचारि
नव रगिइं वनि विकसती असती जिम न विचारि ॥१४॥

वनि वनि विकसइं वेउल खेउ लगाउइं चीति
दीठा द्राखह मंडव मड पधारइं प्रीति ।
परविलसइं अलवेसर केसर हेठि सुवेक्ष
अव पूगइ ऊतरायणि रायणि फलिय असेस ॥१५॥

मजरि मधुरसि मीठीय दीठीय जव सहकारि
तव मत मागि न लागइ ए लागइ ए विषय विकारि ।
सामली मन तनु आमली आंमलि फलिय अनेक
वर्षाकाल वि मालती माल ती रहीय स एक ॥१६॥

विरचइ विपिनि विचक्षण तक्षण दस वि दसार
नव नघ निर्मल भूषण दूषण रहिय शृंगार ।
एक जोइ नव हाटक हाटक दान प्रवीण
फ'इ ति गायण आलवि आल वि मन्नइं वीणा ॥१७॥

एक करइ रथ वाहिय वाडिय माहि विवेकि
कुसुम विवादइं चूटइ चूंटइ पल्लवि एकि ।
फल पुण तरतर त्रोडए मोडइ ए तरुवर डालि
उज्जवल निर्मल सरसीअ सरसीय लेयइं वाल ॥१८॥

पुहतउ हरि अन्तेउर केउ रमलि रसरेसि
सहचरि नेमि जिणेसर केसरि जिम वन देसि।
केउ वंधव वल वन्धुर सिंधुर जिम वनतीरि
खेलइं विपुल खडोखली छोकली पाडती नीरि ॥१९॥

गति रस हंस हराविय भाविय मनइं मेलि
पइठो जलि हरि रमणीय विमणी करिवा केलि ।
हरि सीगा भरी पाणीग रांपीय छांटइं प्रेमि
ते हिय वरणि सनेउर देउर नाग्रइं नेमि ॥२०॥

ते सवि हरि सतकारिय धारिय जिम धूमत
ताइं त्रोडिए कमलिनी रमलिनी एक भ्रमंत
धाइं धसइं ति ऊवसईं विलसईं हसइं प्रवाहु
खधि चडइ खवागली भाकली न सकइं नाहु ॥२१।

तडि पहुतउ जल गाहिय नाहिय प्रभु हरकेसि
"मांनि क परियण उत्सव कुरस वयण म भणेसि ।"
धीनवी नृपति न वीनउ मीनउ नेमि न जामु
सत्यभामा रोषारुण दारुण वोलइ तांम ॥२२॥

"नीठर नेमि गदाधर पाधर सीह विमासि
परि अ सरीखीय माडइ ए माटइ ए पाडिसु पासि।"
जपइ ए रमणि शिरोमणि रुक्मणि गणिय रोलि
"रहि रहि बहिनि ऊनावली णावलि माहि म ढोलि ॥२३॥

एहरइं वेव न लागइ ए आगइ ए मंगि न मंगि
अटके ताहरे आनि मिइ जाइ मिइ गिरिवर शृंगि।
गरुड गणइ न नात्र कुपात्र ज पात्र न जाण
स घरइ ए भक्ति न लीजइ ए भीजइ ए भक्ति विन्नाणि ॥२४॥

जगपति हउ जि मनाविसु भाव सुहावउ हेव
सभलि स्वामीय देवर देत्र रचइं तुज्झ मेत्र।
माखी पडि पडिइ खापण आपण रूप विचारि
नारी नयन सजीवन यौवन अफल म हारि ॥२५॥

नाहरइ बंधवइं परिणिय तरुणीय सहस बत्रीस
तुज्झ एकइ नवि मावटी कावडी जिम निमिदीस।
आदरि अरिदन आमला ब्यामलावानि वीवाहु
आगारगि रमाडि य गाडिय मनि उच्छाहु" ॥२६॥

तव जादव अणरागिय लागिय रहिया पागि
धीटिउ प्रभु पर मेमरी नीसरी न सकइ मागि।
मानइ ए वलवंतु बोलतउ डोलतउ नेमिजिणिंदु
घरि घरि गूडिय ऊंभीय थोभिय यादववृंद ॥२७॥

कमला कहउं कि सरसति वरसति अमीरसवांणि
कचणु कुणि किर जाविय पाविय साररााणि।
नेहइ नव भव बीधिय दीधिय उग्रसेन राय
कुंअरि भलीय राजीमति सीमनि तिहुयण माहि ॥२८॥

चमकति चालइ ए गजगति जगति अदभूय बाल
त्रिभुवन गुरुतरु आकुली आकुली हुय सुकुमाल।
बिहु वेवाहिय मदिरि वृंदि रमइं तसु अंगि
लेई नागवि धाविय आविय वात परंगि ॥२९॥

धवल तणी सरघोरणि तोरणि तरुवर पान
गोलि गहिल्ली गोरडी भगइं पकवानु।
संचियइ घृत दधि गोरस ओरस चदन हेतु
कीजइ फाल फलावली पडइ अचेत ॥३०॥

आणइ अनुचर आकुला चाउरि पाट
मांडइ मडपि मांडणी आडणी ऊपरि घाट।
हरि मन हरिखि हकारिय नारिय स्यउं निजजाति
बइसिइ घडलहुडाईय भाईय जिम ते पांति ॥३१॥

पहिलउ नीली सूकिय मूंकिय फलिहलि तीह
देखीय मोदक मुरकीय फुरकीय जीमतां जीह।
खाजां खरहर चूरतां कूर तां आविउ थालि
नांमइ घृत्त जिम पाणीय ताणीय लीजइ दालि ॥३२॥

भागा वदन संसालणे सालणे वांधी पालि
पीजइ पांणी परिमल निर्मल वहुल विचालि।
मधुर करवक ऊपरि सुपरि परसइं घोल
मुखशुंधि करइ ति करविय करविय करई तंबोल ॥३३॥

आवइ सकल कलापति व्याहति मांडइ कोडि
वइठा स्वजन सुखासनि वासणि धन दिइं कोडि।
वीडा दीजइ वलि वलि सुविमल सरस कपूरि
करइ जि आलस ते सवि केसवि कीजइं दूरि ॥३४।

छट्ठिहिं विरह सतावण श्रावण सुदि अरिहत
शृंगारइ सुर दानव मानव मान वहंत।
निपुण निवेसइं त्रेवडी केवडी भालउं खूंप
दीसइ मुकुट कटीरकि हीरकि नवनवउं रूप ॥३५॥

काने कुंडल मोतिय जोतिय झूंपइ द्रेठि
हार निगोदर सुंदर दीसइ न सुरिज हेठि।
कचण कंकण केउर नेउर पइं भुयदंडि
चर्दनि देह विलेपनु लेप न लागइ पिंडि ॥३६॥

सोहाग ऊपरि मजरि कुंजरि चडइ जिणिंद
जयजयकार सुसेवक देव करइ आणंद।
सिखरि मेघाडवर तुवर गाइं गीति
नाचइ रंभ घृताचीय राचीय आपइ चींति ॥३७॥

दिसि दिसि मोकिरि डामर चांमर ढलइं सभावि
वाजइ तूर अनाहत नाद तणइ अनुभावि।
मांणइ एक अनेकप एक पलांणइं वाहु
एक चडी चाल्या रथि सारथि मंडर वाहु ॥ ३८॥

नवभवनेहि ऊमाहिय नाहिय कुमरि सकालि
सिरवरि सोवन वालिय जालिय तिलक निलाडि ।
किरि दिनकर शशिमडल कुंडलकान नइं मूलि
पत्रलता कस्तूरिय पूरिय विपूल कपोलि ॥३९॥

कंठिनि गोदर अवसर नवसर उखरि हार
कचरण ककरण चूडिय रूडिय वारु शृंगार ।
कडि भारिण मेहल नूपर रूप रहावइं पाय
पहरणि सेत्र पटउलीय कूलीय पान न माइ ॥४०॥

मृगनाभिइं महमहतीय पहुतीय गउखि कुमारि
नयणि निरखू ते निरखिय हरिखिय नेमि सा नारि ।
दृष्टि विचक्षरण दक्षरण तक्षरण फूरकिय तास
अधरइ मनि असमाधिय आधिय त्रूटि आस ॥४१॥

वधन देखी शशि मृग शूकर शोक रसत
पूछइं प्रभु आधोरण तोरण वारि पहूत ।
स भणइ "सुणिन प्रयोजन भोजन लहिसिइ लोक
तुज्झ उतसवि ईह आमिष स्वांमि खपइ" तउ शोक ॥४२॥

चिंतइ चतुर स चिंततउ धरतउ अरति अपार
"विषय विणोदि विणासिइं हासइ जीव गमांरु ।
भवि भवसउ ते बोलइं वोलइ गिरिसरि टोल
सहजिइं परभव भेदन वेदन पदन विलोल ॥४३॥

चमरी जिम चल लखमीय विषमीय विषयनी वात
नारीय नेह विण दीविय जीविय वहु उपघात ।
भवसुख धयवड चचल चचल यौवन जाइ
एक जि अविहड उपशम रस मझ हियइ समाइ" ॥४४॥

करइ ति मागिक वालिय वालिय वूना काज
परिघरि हुइ दिसा लिअ टालिय दीजतउ राज ।
लावइ सार सुधा रसिका रसिते सिंचति
मृग धरीये मृग लोचना लोच ना रंग चूकति ॥४५॥

गज रथ रमाणि तुरगम रंग-मसामलउ ताम
जन परिजन परिपालन काल न तूजइं जाम ।
जोइन तउ सयमनी सयम नी जइ सीख
परिहरि नारि न नेहिय रे हियडा लइ दीख ॥४६॥

पसुवधन जिम छोडिय मोडिय मायापासु
असिवनिवारण वारण वलिउ तहिय उदासु ।
ते गोरभउ मडिउ छाडिउ रथ गोविंद
कर जोडी वर वालइ वालइ नेमि जिणंद ॥४७॥

स्वजन वेवाहिय धूरइं भूरइं निगहिय नेह
लई अचेत ऊपाडिय माडिय आणीय गेहि ।
भूतलि भभर भोलिय डोलिय जिम न चडत
विलवइ कुमरि विलक्खिय देखिय ते वृत्तांत ॥४८॥

"हउ तुज्झ पूजउं वरदलि परदलि पिनउं न रोपि
हउ तुज्झ वचनि न चूकिय मूकिय कहि कुणइ रोपि ।
जइं हू देव अलूणिय ऊणिय गुणिहिं असार
तउ पसिलउ काइम निय ज्ञानिय कहि नि विचार ॥४९॥

दवदति विरहानलि हा नलि नडिय अपार
प्रियमेलउ केते वासरे आस रे वडिय ससारि ।
हू नवि देखी आदरी यादवराइं
थाकीय दृष्टि पसारिय हारिय काजलवाइ ॥५०॥

रे रे जोसी जातक वात करी जगवच
वाह्या करण कतूहलि तू हलि हरि दिइं अंच ।
लगन कुसुधउ आपिय पापिय अम्ह घरबोल
जोतइं जाणइं जाणसु माणसु न हइ ते ढोर ॥५१॥

कोइय त्रूटउं सांधइ बांधई फूटी पालि
वालइ नेमि जु वलियउ वलियउ ते ईणि कालि" ।
इम करि ककण फोडए त्रोडए नवसर हार
अ गि निरतर सरवती करवती जिम जलधार ॥५२॥

वीधिउ मन राखि नवमइ नवमइं निज नेठाउ
देई दान संवत्सर मत्सर निल्हिय नाहु ।
लेईय स्वजन अचारितुं चारितु करुणाधार
भांजइ भोगल भव नी य अवनीय करइ विहार ॥५३॥

पद्म ब्रह्म वमासण आसण तणइ निबंधि
अरिबधवि साधारण धारण पुरि गिरिसधि ।
सोसइ मइरु महातपि आतपि रहइ गभीर
मोह तणा जगबंधव बंध विछोडइ धीरु ॥५४॥

मनरसि दिवसि पंचावनि पावनि वलि पालोकु
जिनपति हुउ स केवली ते वली आवइ लोक ।
वाजइ दुंदुंभि अंबरि तुवरि सुर अवतार
श्रीपति अति आणंदिउ वदिउ नेमिकुमार ॥५५॥

हरिखी [illegible] उग्रसे [illegible] बेटी [illegible] भेटीयउ वर अवरोध
जगगुरु अमीय समाणिय वाणीय जन प्रतिवोव ।
उपशम तरुवर रोपइं लोपइ मनसदेह
मुक्ति तणउ पथ दाखिय राखिय त्रिभुवन रेह ॥५६॥

निज यश दिसि दिसि व्यापए थापए चउविह सघ
सूरउ तेह ज सामिय धामिय कामिय रग ।
कवितु विनोदिहि सिरिजय सिरिजय सेहर सूरि
जे खेलइ ते अर्हंपद सपद पामइ पूरि ॥५७॥[1]

पुष्पिका :—इति यादव कुल शृंगारहार श्री विमलागिरीभूषण श्री नेमिनाथ फागुः ॥संपूर्णः॥ श्री चेला जेसा लिषतं॥ श्रीः ॥श्री॥ लिखत चेलाजेसा ॥

१. गुर्जररासावलि, ओरिएन्टल इन्स्टीट्यूट बरोदा, १९५६ में प्रकाशित ।

सुरंगाभिध नेमिफाग

कथात्मक जैन फागुओं की परम्परा में धनदेव गणि कृत 'सुरंगाभिध नेमि-फाग' भी एक कडी है। इसमे लोक विश्रुत नेमिनाथ और राजुल या राजीमती की कथा ग्रहण की गई है। यद्यपि कवि के काव्य-प्रतिमान परम्परागत हैं, परन्तु उनमे मौलिक उद्भावनाएँ भी की गई हैं।

प्रारम्भ मे कवि ने आदिनाथ की स्तुति की है, तत्पश्चात् सरस्वती और नेमिनाथ की अर्चना की है। इस फागु में नेमिनाथ से सम्बन्धित कथा को काव्यो-चित प्रसार देने का प्रयास किया गया है। यह फैलाव विभिन्न छन्दो मे आबद्ध होने से नूतनता का आभास देता है। सौरीपुर नरेश समुद्रविजय की रानी की कुक्षा से नेमिनाथ का जन्म होता है। जिस समय नेमिनाथ का जन्म हुआ उस समय के अवतार जन्य ऐश्वर्य का कवि ने सुन्दर वर्णन किया है। इसके पश्चात् कवि ने गिरिनारि पर्वत पर कैवल्य प्राप्ति तक की कथा को परम्परागत रूप से वर्णित किया है।

कवि का सौंदर्य-बोध परम्परागत है। उसके उपमानो मे कोई नवीनता नही है। कवि ने वसन्त निरूपण मे भी यही पद्धति ग्रहण की है। उसका काव्य-सौंदर्य एक ही स्थान पर उत्कृष्ट बन पड़ा है :—

> रणझिणइं भमइ कुसुमरसि, राता माता मयण जइंदरे,
> माता मयण गयद, रणि चडिउ मदन नरिंद,
> विरहिआं कमकमइ ए, निसि दिन नवि गमइ ए
> कोअलि करइं टहूकार, रतिपति दल जयकार,
> मन सवि गहिगह्यां ए, परिमलि महिमह्या ए ॥४१–४३॥

यहां कामदेव रूपी राजा का सुन्दर सांगरूपक चित्रित हुआ है। जिसमें पुष्प-रस का पान करते हुए भौंरे, मत्त हाथी के समान बताये गये हैं। रण पर गमनार्थ कामदेव के भय से विरहियो का मन कम्पित हो रहा है। टहूकार करती हुई कोयल मानों चारण है जो कामदेव की सेना का जय-जयकार कर रही है।

इसके अतिरिक्त अन्य स्थलों पर कवि का काव्य-सौंदर्य परम्परागत है। छन्द-विधान की दृष्टि से 'सुरगाभिध नेमिफाग' छन्द-वैविध्य परम्परा की एक फागु-कृति है।

सुरंगाभिध नेमिफाग

रचना काल– संवत् १५०२

नत्वानतगुणात्मकं सुरनतं संसार निस्तारकं,
विश्वानंदविधायकं जिनपतिं श्रीआदिदेवं प्रभुं ।
स्मृत्वा श्रीश्रुतदेवतां जननतां निःशेषजाड्यापहां,
श्रीनेमेरतुलं करोमि सकलं फाग सुरंगाभिधं ।। १

प्राकृत काव्य

देवी देवि नवी कवीश्वर तणी वाणी अमीसारणी,
विद्यासायरतारणी मझ घणी हंमासणी सामिणी,
चंदा दीपति जीपती सरसती मइं वीयवी वीनती,
बोलुं नेमिकुमारकेलि निरती फागिइं करी रंजती ।। २

रासक

सरसति सरसति मुझ मति देवी अ, देवीय तु जागि सार रे,
नील कमलदलसामल जिनवर वरणवु नेमिकुमार रे । ३
जगरंजण रणि मयणविहंडण, मंडण गिरि गिरनार रे,
सुरनर किंनरवर नित वंदित, कामित फल दातार रे ।।४

अढैउ

कामिल फल दातार, सामी नेमिकुमार,
हार मनोहरु ए मुगतिरमणिवरु ए । ५
यादववंशशृंगार, पावनिवारणहार,
तारण त्रिभुवनु ए, जनमनरंजनु ए । ६

फाग

जाणीइ जगि सोरीपुर सुरपुर किरि अवतार,
जिणहर मंदिर दीपइं ए जीपइं ए दिनि दिनकार । ७
निशि शशिहरकर संहरइं हरइं सवे अंधकार,
दंड कलस धज लहकइं ए रणकइं ए घंट अपार । ८

काव्य

दीसइं एकि कुमार रूपि रुअडा सोभागीआ सुंदरा,
सालूणा दोड तो सलक्षणवरा लीला करी आगला,
नारी जे नवयौवना पदमिनी जेमी हुइं मोहिनी,
ते सोरीपु··ाहि रायकुमरी रंगिइं रमइं सुंदरी। ९

रासक

तीणइं नयरि श्रीय समुद्रविजय नृप, नृपतिनपित नित पायरे,
निज तनुदीपति द्युतिपति जोपति, रतिपति किरि नव कायरे। १०
राज करति सुरपति सम दीसति, वमति वदनि सरसती रे,
समरथ शूरशरोमणि भणीइ, सुणीइ दह दिसि अंति रे। ११

अढैउ

सुणीय दह दिसि अंति, तस मुखि अरि न रहंति,
भूअवलि गंजवइ ए रणि भड भंजवइ ए। १२
गयमर गाजइं बारि, अंजनगिरि अवतारि,
हयवर हीसता ए, रथ घण दीसता ए। १३

फाग

राणी म पाटि शिवादेवि, देवि हरावण रूपि,
शीलवती गुणवंती य युवती य नही अनुरूप। १४
यादववंशशगारण, तारण नेमिकुमार,
देव विमाण ने मूंकी य कीड सा ऊअरि अवतार। १५
सुखभरि सोइ हीडालाटइं खाटइं पउढी अ देवि,
चऊद सुपन मन साखीआं तीणइं खेवि। १६
ततक्षणि जागी य रगीरि, रगिनि अतिहिं आनंद,
नव मास आठ आठे दिनि, रजनि जनमिइ जिणिंद। १७

काव्यं

सामी नेमिकुमार यादव जिसिइ जायउ स सोभागीउ,
आधी राति प्रभातनइ सम हुई, भूमी समी उल्हसी।
तीणइं कालि अकालि वृक्ष सिचला फूल्या फलिया पालुया,
वाया शीत समीर वीर किरि ऊगिउ नवउ मानवउ। १८

रासक

वैमानिक सुरपति तारापति, व्यंतरपति भुवणिंद रे,
सामी य जनम महोत्सव नव परि करिवा मिल्या सवि इंद रे। १९

सुरगिरि ऊपरि क्षीरसायर जलि विमलि भरी य भिंगार रे,
सुरवर न्हवण करइं मनरंगिहिं अ गिहिं नेमिकुमार रे। २०

अढ़ंउ

अ गिहिं नेमिकुमार करी य जनम आचार,
प्रभु मुकि करीए, आणंद मनि धरीए। २१

सहू पहुतउं निज ठामि, हरष सोरीपुर ग्रामि,
धवल मगल हुइं ए, साव जन गहिगहइं ए। २२

फाग

तीपइं अवसरि मथुरापुरी, अवतरीउ कंसारि,
वसुदेव देवकी संभम, निरूपम देव मुरारि। २३

तास बंधव वडु वलभद्र, समुद्र समान गंभीर,
अकल अजेअ निरजन, रजन जगि बेऊ वीर। २४

काव्य

गोविंदिइं सवि माल सरीषउ चाणूर ते चूरीउ,
बीजइं बंधवि माल मोष्टिक हुणिउ तउ कस कोपिइं चडिउ,
'साहु ग्राल गोवाल बेउ वलीया, बांधउ, कहइ जेतलइं,
पाडिउ वीणि धरेवि केशवि तिहां पूरउ करिउ तेतलइ। २५

रासक

यादव सवि मनि करइं विमासण, रा सुणिसिइ जरासंव रे,
आज जमाइ कस विणासिउ, रहिसिउ तउ हुसिइं बंध रे। २६

ततक्षणि सवि यादव सोरठ दिसि वसिवा ग्या तस रेसिइं रे,
द्वारिकापुरी य धनदि नव बारी य करीय इंद्र आएसिइं रे। २७

अढ़उ

करी य इंद्र आएसिइं इंद्रपुरीनइ वेसि,
यादव तिहां राह्या ए, मनि अति गहिगहिया ए। २८

रूपिइं नेमिकुमार दीसइं देवकुमार,
दिन दिन दीपता ए रतिपति जीपता ए। २९

फाग

सामीय वयण अनोपम, ओपम चद न होइ,
क्षीण कलकीय दीसइ ए, वीसइ ए तपइ न सोइ। ३०

भमहडी बेऊ रुलीआमणी, कमलिणी लोचनि जीत,
जीभडी जग तणउं जीवन, सवि जन चोरइ ए चीत। ३१

काव्यं

दता दाडिम बीजडा, अधर बे जाचा प्रवाला नवा,
दीपइ सुं जल आंषडी कमलनी जेसी हुइं पांषडी,
नासा सा शुक चंचडी, भमहडी दीसइं बेऊ वांकुडी,
बोलु किं बहुना, कुमार जमलुं कांई अ ओपइ नहीं । ३२

रासक

एक वार नेमिकुमर रमता, पहुता आउधशालइं रे,
हरि आउध हेला सवि शरभइं रमइं सारग धनु वालइं रे । ३३
पांचयज्ञ सामी शष लीधु कीधड सहज निनाद रे,
त्रीणइं गदिइ हरि हईअडइ चमकिउ लुकिउ सयल उनमाद रे । ३४

अढैउ

लुकिउ सयल उनमाद सुणी य शंषनु नाद,
वलभद्र प्रति कहिउ, 'राज हिवइ गऊं ए । ३५
वलिउ 'नेमिकुमार, राज हरेसिइ सार,'
वलभद्र मनि हसइ ए, हरि नवि वीससइ ए । ३६

फाग

हरि भणइ 'भुज.मझ वालुओ, टालुओ एक संदेह,
नेमिइं कमल नालती परि, करि धरी वालिउ तेह । ३७
वलतउ ओ नेमिकुमार कर सधर न वलइं मुरारि,
तब विलषइ झाषउ थउ, रहिउ आणी मनि हारि । ३८

काव्य

तव वोलइ वलभद्र आगलि जई ए राजलक्ष्मी गई,
कीजइ कोइ उपाय, नायक नवउ होसिइ सही, चीतवउ,'
वाणी माधव पैद बंधक भणइ 'तुं कां हीइ आपणइ,
हार ? नेमिकुमार नरि न वरइ ते राज केथउं करइ ?' ३९

रासक

ईणइ वचनि मनि हरि हरषीयला, आईला वसत ऋतु काल रे,
वनि वनि मलयानिल पसरीयलइ, करि लिइ मयण करवाल रे । ४०
अढार भार वनसपती य मुरी य, गोरी य धरइं आनंद रे,
रणझिणइं भमर कुसमरसि, राता माता मयण गइंद रे । ४१

अढैउ

माता मयण गयंद, रणि चडिउ मदन नरिंद,
विरहिआ कमकमइं ए निसि दिन नवि गमइं ए । ४२

कोअलि करइं टहूकार, रतिपति दलि जयकार,
वन सवि गहिगह्यां ए परिमलि महिमह्यां ए । ४३

फाग

महिकइं ए सोवन केवडी, केवडी सोइ वनमाहि,
पहुती य रति मधु माधवी, माधवी फाल न माइ । ४४

चपकती दीसइ ए कली नीकली पीली य अंगि
किरि ए रयणि रणदावीय नवीय करीय अनंगि । ४५

दीपइं ए राता कणयर दिणयर किरि अवतार;
पारधि पाडल परिमलि रमलि करइं मधुकार । ४६

कोफलि फणस बीजुरी य मुरीयडा सहकार,
वृक्ष लिवंग नारंगना अंगना नइं सहकार ।४७

काव्यं

दीसइं केसूअ रूअडा किरि नवा आतया सही सुभडा,
मुरया जे ए मचकद कंद जमला कमिइं करया आमला,
ऐधी केलि फली सबे मन रुली, नारी रमती मिली,
फूली दाडिमि रातडी, दुषि गमइं पंथीयनइं रातडी ।४८

रासक

नेमिकुमर तेडीनइं श्रीपति रमति रमइं वनमांहि रे,
सोल सहस गोपी रसि राती रमती ते तिहां जाइं रे । ४९

पदमिनी नवयोवना नवरंगो अ अंगि सुरगो य नारि रे,
रुपि अनोपम जनमन मोहइं सोहइं सयल शृंगारि रे । ५०

अढैउ

सोहइं सयल शृंगारि, वेणि उरग अनुकारि,
सिरि वरि राषडी ए, रयण हरि जडी ए । ५१

ससि रविमंडल मानि, दीपइं कुंडल कानि,
तिलक मनोहर ए, कठि नगोदर ए । ५२

फाग

उरवरि हार एकावली, कावली कनकनी हाथि,
रयण ककण घणुं झलकइं ए, षलकइं ए मेषला साथि । ५३

रमिझिमि रणकइ नेउर, देउरसिउं करइं आलि,
नेमिकुमर नवि भीजइ ए, कीजइ ए ते सहू आलि । ५४

मरकलडे मन मोहइं ए, खोहइं ए सुरनर इंद,
लोचनि चित चमकावइं ए, वदनि हरावइं ए चंद ।५५

देव वयण सवि बोलइ ए, डोलइं ए सुचतुर नरिंद,
'वेगिहिं परणेवु मानि न,' मानिनि भणइ जिणिंद । ५६

काव्य

षेलइ माधव मास माधव तणी गोपी मिली बाउली,
लोपी लाज सवे नवे रसि रमइ कामी प्रतिइं भूलवइ,
बोलइं बोल सकाम वामनयनी, दूती जिसी कामिनी,
देषी लोक कहइ सही अभिनवी ए देवनी मोहिनी । ५७

रासक

हावि भावि नवि लीजइ ए सामी, कामी नही जिनराय रे,
नेमि अचल गोपी सवि भागी, लागी रही प्रभु पायि रे । ५८
नेमिकुमर हरिनुं मन राषइ, भाषासमितिइं बोलइं रे,
'नारी ते परणु सहीअलि, जमलि तुलइ मझ तोलइं रे । ५९

अढैउ

जमलि तलइ मझ तोलि, हरि हरषिउ ईणइं बोलि,
नेमि वचन कहउं ए, त्रिभुवन गहिगहिगहिऊं ए । ६०
यादव सवि पभणंति कन्या वहु गुणवति,
छइ राजीमती ए जस मुखि सरसती ए ।६१

फाग

रूपि हरावए अमरी अ, कुमरी अ सा जगि सार,
मागीय यादवरजि इंहि, काजिहिं नेमिकुमार । ६२
लगन लेई सहू सामइहइ, जान हुइ जिनराय,
त्रिभुवन चालइ ए मन रुलि, मिलीय यादव सुरराय । ६३
'वइठउ ओ वर सुरवर रथि, सारथि मातुलि होइ,
सामीय रूप अनोपम ओपम नावइं कोइ । ६४
त्रिभुवनजनमनमोहन हो, मोहन वलि समान,
सिरिवरि छत्र रयण तणु रवि तणु हरइ जे माण । ६५

काव्य

जे वारु गज भद्रजातिक भला गाजइं मदिइं आगला,
चालता हिमवत पर्वत जिस्या दीसइं सवे उजला,
हांसइं हयवर नीलडा हरीयडा गगाजला सामला,
तेहे यादव संचरघा परवरघा तेजी तुषारे चडचा ।६६

रासक

चालीय जान याद वर केरी, भेरी देव वजावइ रे,
सिरि वरि छत्त चमर सोहावइ भावइं देवि वधावइं रे । ६७
नेमिकुमर वर सुरवर सहिता, पहुता तोरण बारि रे,
गउखि रही राजलि वर निरखी, हरखी सामनि नारि रे । ६८

अढैउ

हरखी सामनि नारि, वर रहिउ तोरण बारि,
वाड पशू भरिया ए, दीठा तरवरिआ ए । ६९
पूछिउ सारथि सामि, 'पशु वाधा कुण कामि ?'
सारथि इम भणइ ए, 'काजि गुख तणइ ए' । ७०

फाग

जाणीय जीव वध जिनवरि मदभरि धरिउ वइराग,
'धिग पडउ एह संसारनइं, सार नही जिहां राग' । ७१
पशू अ वधन प्रभु छोडीय मोडीय मयणनुं मान,
जिनवर वलीउ ओ मेल्हीय, वेल्हीय ऊभीय जान । ७२
निज घर वलीउ ओ जाणीय, राणीय राजलदेवि,
विरहकरालीय वालीय ढलीय धरणि तीणइं खेवि । ७३
शीतल पवनि चंदनि करी, करीय सचेत सा नारि
दीन वचन सु जि वोलइ ए, 'बोल एक जि अवधारि । ७४
नाह ! सनेह सु दाखिन, दाखि न राखि न देव !
तुझ विण क्षण मझ राजन ! राज न भावइं हेव' ।७५

काव्य

राती नेमि जिणिंदि चदवदनी रोइ रडइ कामिनी,
फोडइ ककण सार हार कुमरी त्रूटइ नवी नेउरी'
खीजइ पैदि करी महादुखि भरी, शोकिइं हीइ आदरी,
दाझइं अ गि अनगदाह धरती, बलोइ ए राजोमती । ७६

रासक

विरहविधुरमति राजमति विलवति, जिनपति मुंकीय जाइ रे,
तत्क्षणि जिनवर दानिहिं वससइ, वरसइ ईम गनींइ रे। ७७
दान देई दीक्षा प्रभि लीवी, कीधी अकह कहाणी रे,
नव भव नेहनिवधीय राजीमती, राजमति मानिहिं न आणी रे। ७८

अढैउ

मनि नवि माणी नारि, पहुता गिरि गिरनारि
हारि मनाविउ ए, मोह हरावीउ ए। ७९
दिन पचावन मानि, प्रामिउं केवलज्ञान,
सुखर सवि मिली ए, उत्सव करइं रुली ए। ८०

फाग

ज्ञान ऊपन्न जाणीय, राणीय राइमइं रंगि,
गिर सिर सागीय निरषीय, हरषीय सा निज अंगि। ८१
पाए लागी प्रभु मागए, माग जे मुगतिनु होइ,
सामीय संयमि थापइ ए, आपइं ए माए सोइ। ८२

काव्यं

सामी केवलकामिनी करिवरी, राजीमती नादरी,
सा सारी निज काज राजकुमरी मुगतिइं गई सादरी,
जे रेवइ गिरिराय ऊपरि गमइं, श्रीनेमि पाए नमइं,
ते पामइं सुखसिद्धि, रिद्धिहिं रमइं, श्री शाश्वती भोगवइं। ८३

संस्कृत काव्यमय

एवं वासववृन्दवन्दितपदं श्रीनेमिनं स्वामिनं
यस्तौत्यद्भुतभावभावितमनाः थी रैवतस्थं जिनम्
सः श्रीशार्वपदं गताघविपदं कैवल्यलीलाप्रदं
प्राप्नोत्युत्कटकर्ममर्ममयनं कल्याणलीलावनम् ॥ ८४

नारी निरास फागु

रत्नमंडन गणि कृत शृङ्गारपरक रचना है। रत्नमंडन गणि, तपाच्छनाचार्य सोमसुन्दर सूरि के शिष्य सोमदेव सूरि के शिष्य थे और विक्रमी १६वीं शती से पूर्व विद्यमान थे। इस कृति के अलावा रत्नमंडन गणि ने संस्कृत मे 'सुकृत सागर' 'मुग्धमेधालकार', और 'जल्प-कल्पलता' आदि ग्रन्थों की सृजना की है। सृजन-प्रक्रिया की दृष्टि से 'नारी निरास फागु' 'वसन्त विलास' के कहीं समीप है। छन्द योजना और अभिव्यञ्जना प्रणाली दोनों से ज्ञात होता है कि सर्जक ने अपने फागु की रचना वसन्त विलासीय परिपाटी पर करने का प्रयास किया है। नारी सौंदर्य निरूपण करते-करते कवि ने अन्तिम छद में भक्ति के उन्मेष में नेमिनाथ के रैवत-गिरि पर्वत पर चले जाने के पश्चात विरह-जन्य निराशा से आपूरित राजुल का स्मरण किया है, जिससे फागु के नाम की सार्थकता तो हो जाती है परन्तु क्रमागत वर्णन का विषयान्तर हो जाता है। दूसरे, 'वसन्त विलास' मे सस्कृत और प्राकृत के सुभाषित दोनो भाषाओ की सुप्रसिद्ध कृतियो से चयन किये गये थे, परन्तु 'नारी निरास फागु' के सस्कृत छद, देश भाषा छन्दो के अनुवाद मात्र हैं और सस्कृत भी लोक भाषा मे अभिभूत है।

कृति के प्रारम्भ मे कवि ने वसन्तागमन का आभास दिया है। इसके तुरन्त बाद ही नारी-सौंदर्य-निरूपण किया गया है। नारी-सौंदर्य-निरूपण ही कवि का अभीष्ट और कृतित्व का ललिताश है। राजुल ने सिर की सीमान्त रेखा पर सिंदूर लगा रखा है, उसकी उपमा देते हुए कवि ने बताया है जैसे तरुणाई के भार से अवनत श्याम गगन मे पडी उल्का रेखा हो:—

सिंदूर देखी सिरिमु घरे तुं घरे नयण निमेष।
तरुण भारे पडी अ वरें, अंबरे उलकनी रेख ॥१०॥

कवि का नख-शिख वर्णन मौलिक उद्भावना और सूक्ष्मानुभूति से अवेष्टित है। तरुणी वैरिणी सी प्रतीत हो रही है— क्योकि उसकी कुटिल भ्रू धनुष के समान हैं और विकट कटाक्ष शर समूह हैं, फिर भला भट क्यो न विधें :—

कामिणी वइरिणि सीगणि भमहि वे जाणि,
विकट कटाषि शराउली, राउली मूंकए ताणि ॥१२॥

कवि के नख-शिख वर्णन मे सौंदर्य का ऐश्वर्य है। धार्मिकता मे पर्यवसित होते हुए भी यह फागु अन्य जैन फागुओ से पृथक है। धार्मिक कुण्ठा की सेवार से रहित उसका काव्यत्व निर्मल जल के समान है। अन्तर्यमक के सौंदर्य के साथ-साथ उपमानो की संयोजना मे उसकी मौलिकता परिलक्षित होती है। यद्यपि इसके भी कुछ उपमान रूढ़िग्रस्त हैं परन्तु उसका प्रस्तुतीकरण इस ढग से हुआ है कि उनमे अभिभासित का तत्त्व सहज ही आ जाता है। जहां उसका अवयव सौंदर्य परम्परा मुक्त उपमानों से निर्मुक्त हैं, वहीं काव्य-सौंदर्य भी अपने उज्ज्वल रूप मे प्रतिभासित होता है।

नारि निरास फाग

रचनाकाल– १६ वी शति का पूर्वार्द्ध

सकलकमलाकेलीधामत्वदीयपदाम्बुज-
प्रणतिनिरतः श्रीनेमीशः । स्मृनश्रुनदैवतः ।
प्रथमरसजोल्लेखद्वेष प्रदांत्यरसास्पद
रचयति यतिः फाग नारी निराम इति श्रुतं ॥ १ ॥

रति पहुती मधु माधवी, साधवी शमरस पूरि;
जिम जिम महमहइ महीतल, शीतल सजस कपूर । २

न जितो मधुमाधवतुं ना विषयैः पंचभिरचित्तनय ।
स करोति दि ो यशोभरच्छलसर्प्पद्घनसारसौरभाः ॥ ३ ॥

तेह तणु कीजु अलि जु अलि पयकमलांहि;
परिहरिउ जेहि अ काय रे, कायरे वर वनितांहि । ४

रचयामि [चारु] चिराय चारुतच्चरणांभोरुहचंचरीकतां ।
कनकद्रवसाद्रकांतिषु प्रमदागेषु रति न ये गताः ॥ ५ ॥

वेणि गमइ नही आज मु आ जमुनाजल पूर;
कालि अ नाग निरागलु, रागलु डसइ अति क्रूर । ६

कुसुमावलि फेनिलावलाकबरी कालतनुः कलिंदिजा ।
अजिन जनमत्त मारयत्यनुरागः किल कलियोरुगः ॥ ७ ॥

म करसि एकसि राषडी, राषडी पेषणि रंग;
ए निरयापथदीपक, दीपक तु जि पतग । ८

स्निग्धशामलकांति कुंतलनिभोज्जृंभांजनभ्राजितं
तेजःपुंजविराजित शशिमुखीदीपं नृणां दुर्गतेः ।
मार्गं दर्शयितुं शिखामणिमिषाद् धत्ते शिरःशेषरे
मा भूत्तस्य विलोकनाय रसिकस्त्व यत्पतंगायसे ॥ ९ ॥

सिंदूर देषी सिरि मुंधरे तु धरे नयण निमेष;
तरुण भारे पडी अंब रे, लब रे ऊकनी रेष । १०

त्व सिंदूरपरागपूरणधृतारुण्यां तरुण्याः कच-
श्रेण्यत. सरणि विलोक्य मुकुलीकुर्वात्मनश्चक्षुषी ।
उल्कायास्तरणेश्वरिष्टापिशुना रेषाचिरेषातम-
स्तोमश्यामतमे निपत्य गगने विस्तार मासे द्रुषी ॥ ११ ॥

कामिणि वइरिणि सी गणि सीगणि भमहि वे जाणि;
विकट कटापि शराउली, राउली मूंकए ताणि । १२

तरुणी गणयंतु वैरिणी कुटिलभ्रूनिभधन्व धारिणी ।
विकटाक्षकटाक्षतोमरैः कटरे विध्यति सा भटानपि ॥ १३ ॥

नाकि म खेडसि मनरथ, अनरथनु ए मूल;
भमहि तिलक त्रिणि पाखडी, आषडी त्रिसूल । १४

मध्यप्राशुस्मरपरनरस्तोमहृद्भेदरक्ता-
सक्तिव्यक्ताठणतरतिरः सर्पिलोहत्रिपत्रम् ।
भालोन्मीलद्घुसृणतिलकश्यामलभ्रूयुगश्रीः
सुभ्रूनासा न भवति किमुद्दामकामत्रिशूलम् ॥ १५ ॥

निरमल नासिका माणिक, जाणि कमलि जिस्युं वारि;
तिणि परि आयु अविगणी परिहरि नारि । १६

सपद्यध्वमगण्यपुण्यकरणव्यापारपारगताः
कान्तारङ्गमम् च मञ्चत शिवद्रङ्गाध्वगध्वसिनम् ।
आयु [पद्म] दलोदबिंदुतरल यस्मादितिस्मारय-
त्यस्माक धृतनक्रमौक्तिकामिद वक्त्ताब्रुज सुभ्रुवः ॥ १७ ॥

तु मनि म धरसि अधरम, अधर मधुर म विमासि,
युवती जगम विसलय, किसलय तिणि तेह पासि । १८

युवतेरधरस्त्वया सुधामधरो मुग्ध ! मुधाऽवधार्यते ।
विषवल्लिरकारि येन सा विधिना तत्र पुनः सपल्लवः ॥ १९ ॥

विकसित पकज पाखडी, आषडी ऊपम हालि,
ते विष सलिलि तलावली. सा वली पापिणि पालि । २०

युवतिदृग्युगल तव पक्षमल तुलितपालिपरिष्कृतपल्वलम् ।
विषजलाकुलमस्ति हिनस्ति तद् भवकटाक्षतरङ्गघटानर ॥ २१ ॥

नरग नगरि मुख पोलि, कपोलि कपाट विचार,
ज्योति जलणमय कुंडल, कुंड लगार न सार । २२

नरकपुरिपुरन्ध्रया गोपुरंवक्त्ररहनध्रं
किल कलितकपोलोद्घाटदृग्दृक् कपाट ।

अपि च विचरदर्चिः मकुले वन्हिकुंडे
किमु कामिनृकुलाना कुंडले दाहहेतोः ॥ २३ ॥

हार मिसि मुख सामु कि वासुकि भुंकइ फुक,
तिणि तीणि करी महिलीइ गहिलीइ चतुर अतूक । २४

विगलति गलकाडे वासुकिः सुन्दरीणां
गमितगरलशक्ति शौक्तिकेयस्रगात्मा ।
श्वसित निषतईर्ष्यामुक्तफूत्कार एष
ग्रहिलित इति हेनो. स्याज्जनस्यत्र सक्तः ॥ २५ ॥

नारि लवइ नित कुअली कुअली म सुणि तुं वाणि,
कुमति करइं सुयडाइणि डाइणि मत्र तु जांणि । २६

आ कर्णयोन्मोलदलीकमाला त्व कोमलागां कमलनानया.
यद्डाकिनीमत्र इव श्रुता सा दत्ते बुधानामपि दुष्टबुद्धिम् ॥ २७ ॥

सुर नर तिरिअप्रजागति, जागति मइ किम जाइ,
निणि त्रिणि जित कलकठ रे, रेखा व [च]हु माइ । २८

दिविजमनुजतिर्यग्गामुका. कामुकाः स्युः
कथमिव मयि सत्यमित्रमावेदनाय ।
कलयति कमलाक्षी वेद्मि रेखास्त्रिमख्याः
स्वरजितकलकण्ठीकण्ठपीठप्रतिष्टा ॥ २९ ॥

कासिण कचुक मिसि आ भलुं आभल कुच गिरि शृंगि,
भीतरि करिसि ए कादम का दम घरिसि न अंगि । ३०

भूषारत्नचरिष्णुरोचिरचिरद्युच्चारु नारीकुच-
क्ष्माभृत्यभ्रममेतदुन्नतमय नो मेचक कञ्चुकः ।
कर्त्ता पकिलतामिद किल भवत्युद्यद्गुणाभ्र गिर्नौ
तेनाशु प्रविशत्यमिद्रियदमावामोदर सादरः ॥ ३१ ॥

आपणपु गिणि हार तुं, हार तु जइ निरषेसि;
माहि अ पास पयोधर, योध रह्या तुझ रेसि । ३२

विपुलमौक्तिकपद्धतिपाशयोस्तत्र पयोधरयोः किमु योधयोः ।
द्वयमिद तरुणिस्वनिरीक्षणप्रवणपुंधरणाय समीहते ॥ ३३ ॥

नेत्रावली त्रिवली नर, लीन रही मन वणि,
त्रिविध कपट भरी रेख, वरेख [व] हइ तिणि त्रिणि । ३४

ईयमिह कणगर्त्ता गाढगभीरभावा
त्रिकरणकपटानामुत्कटानांवघूटी ।

इति विधिरकरोत् किं तामभिज्ञानहेतोः
गलितवलि तरगव्याजमध्यत्रिरेषाम् ॥ ३५ ॥

मयण पारधि कर लाकडि सा कडि लकिहिं भीण;
इम कि कहइ जुवती वस, जीव सवे हुइं खी । ३६

युवमृगमृगयोत्कनगयष्टेस्तरुण्या-
स्तनुदलनकलकप्रापकश्रेणिलकः।

पिशुवयति किमेव कामिनी यो मनुष्यः
श्रयति स भवतीत्य ततुशकाशकायः ॥ ३७ ॥

बिल जिसी आणि म सुंदरि, तुं दरिसिणि निज नाभि,
मयन रहइ दृष्टोविष ही, विष धरइ तेह गाभि । ३८

नितविनि ! विलोपमा तवकमाभिरालवते
बतेयम्घरीकृतत्वदभिसधिगभीरिमा ।

इमां भुवि भवी निभालयति भालयन्नश्रुते
वदीयविषमेषु दृग्विषभुजगतः पचतां । ३९ ॥

वपु विषवन शुभ जाणि म, ताणि म कुच फल लुंवि,
सेवि म तेह तणी छाहडी, बांहडी डालि म भुंवि । ४०

शके सुभ्रू ! चकार तावकवपुः किंपाकपृष्वोरुहा-
कीर्णं काननमाकुल कलयितुं वेधा कुल कामिनाम् ।
भ्रू वल्लीहसित प्रसूनसुरभिश्वासानिलोर्मिस्फुरद्-
दोः शाखाधरपल्लवदिय इमे यत् ते ददत्यापदम् ॥ ४१ ॥

कुरणइ कामिणि ककण कां कण विणु जिम रंक;
कार घरो लिइ रये साकिणि, साकिणि नरगि निसंक । ४२

द्वारि क्षुद्रनृणामकारितकणा रका इवैणीदृशा
मुक्ता बाष्पकणाः कुतः करुणयत्युच्चकणाः ककणाः ।
धृत्वा नः कर्योरशंकित मिय नंपीदसौख्याकरे
मा कस्मिन् नरके तदेकनयनासक्तेऽतिभी ना सज्जे ।४३

विषतरु विषम तजां घडी, जांघडी परिहरि वेड,
तु न पीअ पुण थान, कुथानकु जन तजइ तेउ ।,४४

विषतरुभुवा जघायुग्मं त्वचा घटितं घटा-
महति युवतेः सत्कं तस्माज्जिहीय हितस्पृहाः ! ।
त्यजत च तनौ तस्याः कुस्थानकं तदनर्थकं
न भ [व] ति तथा पेयं धन्या यथा जननीपयः ॥४५॥

अंगि अगनि साची रची, रची ए परि गुढ;
तिम करि जिम झाझिम दाझि म तिहाँ तुं मूढ । ४६

कचसंचयधूमधूसरोऽरुणचीरा तरुणी न पावकः
अधिभूमिचरिष्णुरुष्णतागतितोऽप्येष दहत्यहो ! जनम् ॥ ४७ ॥

साच वचन ऊगाढीआ, काढियां निज मुख सीम;
नेउर झुणि पगि लागलां लाग लाख्यां लहइं कीम । ४८

सद्भूतानि वचांसि चारुवदना सर्वाणि निर्वासया-
मास स्वाननसीमतः कृतमतिः सत्येतरोदीरणे ।
रुच्यप्राच्यपदस्पृहानुरतया मंजीरमंजुस्वर-
व्याजात् तानि लगंते सति पदयोस्तस्याः प्रशस्यानि किं ॥ ४९ ॥

जेहु मनि शमरस सुंदरि, सुंदरि वसइ अराति;
ते मझ सीलसुदिरिसण, दरिसण दिउ सुप्रभाति । ५०

येषा चेतःसरसि तरुणी नैति पानीयहारि-
ण्येकाऽप्यगीकृतकुचघटा शुद्धसिद्धान्तनीरे ।
तेषामालोकनमनुदिनं सगलन् मगलाली-
लीलागार मम दिनकरोकारकाले किलास्तु ॥ ५१ ॥

पदमिनी कुल मधु राजलि, राजलि जिणी तजी खेमि,
जागि जयउ नित नित सुरयण, सुरयणमंडन नेमि । ५२

लक्ष्मीकेलि निकेतकांतविकसद्वक्त्रारविंदस्फुरद्-
वेणीकैतवचचरीकतरुणीझंकारझांत्कारिणीम् ।
भोजप्राज्यकुलेज्यपल्वलभुव राजीमती पद्मिनी
हित्वा रैवतरत्नमण्डनमभूद् यः सोऽस्तु नेमिः श्रिये ॥ ५३ ॥

रंग सागर नेमि फाग

कृति के प्रथम खंड के अनुष्टुपवृत के वाद 'काव्य' के नाम से जो छन्द आया है, उसमे 'रगसागर' के नाम से इस फागु को अभिहित किया गया है, उसी मे इसी फागु को महा फाग भी कहा गया है। लेकिन पुष्पिका मे इसे 'नेमिनाथ नव रस' कहा गया है। प्रतिपादित विपय के अनुसार दोनो ही नाम पूर्णतया उपयुक्त हैं। रस की दृष्टि से 'रग सागर' नाम सगत है तो वर्ण्य-विषय की दृष्टि से 'नेमिनाथ नव रस' नाम भी उपयुक्त है।

इसके रचयिता सोमसुंदर सूरि है। काव्य के अन्त मे इसका उल्लेख भी आता है :—

भूयादुज्ज्वल सोमसुंदर यशां श्री भद्र करः।[1]

सोमसुंदर सूरि, सशक्त कवि, लेखक और विद्वान थे। साथ ही प्रसिद्ध तपागच्छाचार्य भी। कुम्भा राणा के समय से वसे हुए राणकपुर में जग प्रसिद्ध देवालय की स्थापना सोमसुन्दर सूरि द्वारा ही हुई थी। यद्यपि कृतिकार ने कृति के रचना काल का कोई सकेत नही दिया है फिर भी रचना के वारे मे अनुमान लगाया जा सकता है। कृतिकार ने सम्वत् १४८१ मे 'स्थूलभद्र कवित्त' और वि० सं० १४८५ मे 'उपदेशमाला' और वि० स० १४९६ मे पष्ठीशतक लिखा।[2] इससे ज्ञात होता है कि संवत १४८० से लेकर स० १४८५ तक कवि रूप मुखर हुआ होगा, अतः इस फागु का रचना काल सं० १४८३ के आस पास माना जा सकता है। क्योकि फागुकार की परवर्त्ती रचनाएँ जैन-दर्शन सम्बंन्धी हैं।

वैविध्यपूर्ण १०९ छन्दो मे निवद्ध यह वृहत कृति तीन खडो मे विभक्त है। प्रथम खंड मे नेमिनाथ के जन्म का वर्णन किया गया है, दूसरे मे नेमिनाथ के विवाह की प्रस्तावना प्रस्तुत की गई है और तीसरे खंड मे गिरिनार पर्वत पर वैराग्य लेने, तत्पश्चात चिर-समाधि लेने तक की कथा है।

---

१. रंग सागर फाग, तीसरा खड, ३७।

२. आपण कविओ, सोमसुन्दर सूरि कृत नेमिनाथ नव रस फाग.

काव्य-बोध की दृष्टि से दो ही स्थल विचारणीय हैं। पहला स्थल द्वारिका पुरी का है—उसमे ऊपरी वैभव का वर्णन अधिक है, नगरी का कम। दूसरा विचारणीय स्थल वसन्त-निरूपण है। फागुकार ने वसंत को उद्दीपन रूप में प्रस्तुत कर तज्जनित मनोवैज्ञानिक परिवर्तन (विशेषकर रसिको पर) का भी चित्रण किया है। यह वसन्त वर्णन विवरणात्मक एवं परम्परा-मुक्त है। सोमसुन्दर का रूपक-विधान और बिम्ब-निरूपण निस्सदेह श्लाघनीय है। एक स्थल पर उसकी कल्पना है– वन रूपी घर मे चपक का पुष्प दीप के समान जल रहा है। उस पर काजल के समान काले भौंरे मडरा रहे हैं, मानो वे पथिको के प्राण पतंग है—

पथी प्राण पतग कालऊ काजल भृ ग,
चपक दीपकूए वन थर दीककूए ॥२३॥

कल्पना–वैभव का एक दूमरा सुन्दर स्थल है, जहाँ कवि ने चम्पक पुष्प को तरुणी के समान माना है और उस पर मँडराने वाले भौंरो की पक्ति को सिर पर धारण की हुई वेणी माना है:—

कुसुमित ए करणी जरो किणि तरुणी,
मधुकर श्रेणी तेह सिरि वीणी ए ॥२४॥

कवि ने वर्णनो मे अलकारिता को प्रश्रय दिया है। रूपक, उपमा, यमक, उत्प्रेक्षा, अनुप्रास आदि कवि के प्रिय अलकार हैं।

रंग सागर नेमि फाग

कर्त्ता— सोम सुन्दर सूरि

रचनाकाल— संवत् १४८३

प्रथम खंड

अनुष्टुपवृत्त

ॐकार प्रणिधेयाय प्राणिनां त्राणकारिणे ।
तमालश्यामलांगाम श्री नेमिस्वामिनेनमः ॥१॥

काव्यं

स्मृत्वा तां कविमातरं धरति या श्रीपुस्तक वल्लकी
दण्ड पाण्डुकमण्डलूज्ज्वलदलाम्भोज चतुर्भिः करैः ।
श्री नेमेः परमेश्वरस्यय मकालकारसारं मनः
स्मेरीकारकरंगसागर महा फाग करिष्ये नवम् ॥२॥

रासक

समर विसारद सकल विसारद सारद वा परदेवो रे,
माइसु नेमि जिणिंद निरंजन रजन जगह नमेवी रे ॥३॥
रवितालि वर तइं सोरीअ पुरवर अवर नयर सिंगार रै,
समुद्र विजय तिहां राज करति पत्ति रातिपति नउ अवतार रे ॥४॥

आंदोल

रतिपति नउ अवतार अविहड भड भंडार,
प्रतपई जितरिपुए समुद्रविजय नृपूए,
पटराणी पुणि तास गरुआ गुण आवास,
रूपि रति नवीए सोऽइ भिवा देवीए ॥५॥
अपराजित अभिधान पारिहरीय (वर) विमान,
काती वदि वारसिए रवि उगम दिसिए,
सिवादेवी उअरि उपन्न तिहु नापे संपन्न,
वावामभद जिणवरुए चउद सुपन धरुए ॥६॥

फाग

सपन लहइ हीडोला खाटइं खाटइं पउढीय देवि,
गोरी पीनपयोहरी उहरी भाहि सवेवी । ७

पहिलउ पेखइं (अे) गायवर अमर गइंद उदार,
वृषभ कपूर रमामल सामल सिंग सिंगार । ८

चद्रधवल पचानन कानन नायक अेक,
दिसिगज विहिअ सुधारसि सार सिरि अभिषेक । ९

दीहर टोडर नवसर नवसर मधुकर वृंद,
सुंदर अमीय रसागर सागर नदन चद । १०

दिणयर तेजि दीपतउ जपत तिमिर अभग,
सोवनदडि धरी धज कीधऊ मलि जमु गग । ११

मंगल कलश अभभिरिउ कठि परीठअि माल,
पदम सरोवर निर्मल जसु जलि रमइं मराल । १२

मोतीअ मणिरयणायर सायर खीरनिहाण,
झगमगतुं मणिरयणनु नयणनुं ठाम विहाण । १३

भासुर गयणि गरुअडउ रूडअउ रयणनउ रोड,
पावक धू नवि अरते तु करतउ मन नउ मोहु । १४

काव्य

एवं वर्णित वारणादि विविध स्वपनावली रूचित,
स्वर्लोकावतरास्पदीकृत शिवादेवी पवित्रोदरः ।
देवः श्रावणपचमी निशिनिशा रत्नांशुनश्यन्तमः
स्त्रोमार्य जनु राससाद जगता मानद संपादकं । १५

रासक

श्रावण सुदि पंचमि दिन जनमीउ नमीउ सुरासुर होलइं रे,
वाजइ वाजि अमर मानव नवरंग नारी गाइ धउल रे । १६

सुरतइ कुसुम समूहइं वरसइं अमर अनेकइ रे,
खरि सागरि जलि कनक कलस भरि जिनवर नइं अभिषेकइ रे । १७

आंदोल

जिन अभिषेकइं रगि सोवन गिरि शृंगि,
सकल सुरा सुरए भाविइं भासुरूए;

समुद्र विजय आवास मूं कइं जननी पासि,
वईं सवे सुरवरुए अंवरि तरुवरुए । १८

माणिक हीरई जडिउं सार सोवन घडिउं
पउढणि पालणउंए तसु रली आभरणउए;
माणिक रमकडा उपरि कनक कडा,
हांसरु आलीइं ए तलई तलाइए ।१९

फाग

नवल तलाइ पउढणि जदव वरि,
अंगि सुंआलिम आगलुं आंगलु नवरंग हीर । २०

लावइं अंगियडावइं रंगि लडावइं देवी,
वरइं वेमि हवार दोष निवारइं केवि ।२१

काव्य

प्रोप्त द्वादशमे दिने यदु पतीना कार्य चर्योत्सवैः
सत्कत्यासनदानपानाविधिना तेषा समक्ष नृपः ।
राज्यासाध्वमरिष्टनेमिरिति तन्नामान्निराम ददे,
वेमिर्लालित पालितः सुकियतः कालाद्ययौ यौवन ॥२२॥

काय वर्णनम

रासक

बीजि अंगि अवतरिउं यौवन सोवन विण सिणगार रे
पव मनि मोहइ सुरनर रमणी रमणीय रूप भंडार रे ।२३

प्रह्मारइं करतां ए सामलवन मद्दवन नुहु अनग रे,
नील कमलदल तोलि सूं आलिम कालिम गुणधर अंग रे ।२४

आंदोल

कालिम गुणधर अंग पगतलि अलता-रंग
केली थंभ कूअली ए साथल जुंअली ए ।
कहि जिसिउं केसरिलंक नाभी गंभीर निकलंक
उरवरि उन्नतु ए श्रीवच्छ लंछिन्नु ए । २५

कुसुम कली जिम अति आंगुलेडी दीसंति
कणयर कांवडी ए लांबी वेह बांहडी ए,
संख सरीखउ कंठ प्रगटिउ गुहिरउ कंठ,
धय धुरंधरु ए अधर ए रंग धरू ए ।२६

फाग

अधर कुंवर केरातुंडि रातुंडि चडइं प्रवाल,
कंपइ डालिम जमंई जमइ विजित प्रवाल ।२७

सकल करी निज दासिका नासिकाइ शुक चच,
वदन चरण करजुअली पदम ए पच ।२८

नेमि तणउं सुहु विभाणिम चंद अच्छइ निसिदीस,
दंत नही एह उजली झलहलइ कला बत्रीस ।२९

लोचन विकसित कमलकि असल किरणु अणीआल,
हे हर तुज ससिमंडल-खंड लहीउँ ए भाल ।३०

काव्य (शार्दूल)

दंता दाडिमनी कुली अधर रे जयी प्रवाली जिसी
कीजइ खंजन पंखि अंखि सरिखा धारा जिसी नासिका
सारी सांगिणि समली भमही बे वांकी वली वीणडी
काली कि वहुना कूमार किर ए पीजइ लगभग लही ।३१

यौवन वर्णन

रासक

अवतारीमा इणि अवसररि मथुरां पुरिसरयण नव नेहरे,
सुख लालित लीला प्रीति अति वलदेव वासुदेव बेहुरे ।३२

वसुदेव रोहिणि देवकीनदंन चंदन अंजन वानरे,
वृदांवनि यमुना जलि निरमलि रमति सांई गाई गान रे ।३३

आंदोल

रमति करंता रंगि चडइ गोवर्द्धन शृंगि
गूजरि गोवालणिए गाइं गोपी सिउं मिलीए
काली नाग जल अंतरालि कोमल कमलिनी नाथि
नाथिउ नारायणिए रमलि परायणीए ।३४

कंस मल्ला खाडइ वीर पहुता साहस धीर
बेहु वाइ बाकरीए वलवंता बाहि करीए,
बलभद्र वलिआ सार मारिउ मौष्टिक मार
कृष्णि बल पूरिउए चाणूर चुरिउ ए ।३५

फाग

मौष्टिक चाणूर च्यूरिय देखीय ऊठिउ कंस,
नव बलवंत नारायणि तास कीधउ विध्वंस ।३६

काव्यं

कस ध्वस समत्य दुद्धरजरासंधत्रिखंडाधिपे
सद्यः क्रोधामुपागते यदुमहीपालाः समद्रादयः ।
आदाय स्वतुंरग वारिणि परिवारादि वारांपते
रासाया क्षिति मण्डन सजलधि सौराष्ट्रदेशं गत ।।३७।।

इति रग सागर नाम्नि श्री नेमिफागे जन्मोत्सव वर्णन प्रथम खण्ड ।।

खड दूसरा

अनुष्टुप वृत्त

श्री नेमि प्रमुख पौढ़ यदूना वास हेतवे ।
शक्रादिष्टा पुरी चक्रे श्रीदः सौराष्ट्रमण्डले ।।१।।

रासक

सोरठ मंडलि इंद्र आइसि धनदइ नव वारि रे,
द्वारिका नगरि सोवन घलहरे घलहरे सागरि वारि रे । २

उत्तुंग तोरण मणि मडप मनोहर हरगिरि हरावण हार रे,
तीणइं नगरी अति रूअडा जिनहर हरइं रयणि अंधकार रे । ३

आंदोल

हरंइ रयणि अंधकार झलहलता मणिसार
हेम घवल हरुए कनक कलस घरुए,
सुखडिआवा खभ कारणि आदला थंभ
रंभकि पूतलिए मणिभमरी भलीए । ४

दीसे नगरि युवान सुंदर सोवन वान,
अनंग संजु वनीए घरि घरि पदमिनीए
यादव पुरवासी चहुँटहां चउरासी
सोवन पावडीए जलभरी वावडीए । ५

फाग

वउह रंभ समाणिय पाणीय हारि सुरग,
गउख जली मत वारणां वारणां तोरण जग । ६

नवरंग चंद्रआ फालीए मालीए खेलइं नारि
अवर ऊपम देवा टलइ वाटलइ हेम पायरि । ७

रयण कांगरे सांकलिरे पोलि रे कनक कपाट,
मणिमय तोरण ऊपरि ऊपरि अविचल घाट । ८

पटरितु मडित उपवन पवन हीडोलित डाल,
वरमरि परिमल वासित नासित रविकरवाल । ९

आर्या

नाना वास विमान मानव रमा सुरामरीश्चारम्या
अमर नगरी समाना द्वारवती नाम नगरीय ॥१०

द्वारिका वर्णन

तीणी नगरीइं जरासध विध्वसक सकल यादव देविंद रे
सयत रतनवत राज करइ हरिकुल कमल दिणिंद रे । ११
आयुधशाला गयु एकेदा गोविंदनी इंद नीलवन्न उदार रे,
खडग गदादिक आयुध शरमति रमंति नेमि कुमार रे । १२

आंदोल

रमंति नेमिकुमार शरमई हरिहर राय
धारंग चडावइए, शंख वजवइए,
धनुष तणे धोंकरि शख तणे ऊंकारी,
खलभली सागरूए डोलइं डूंगरूए ।१३

नादि भरिउ वंभंड खिणि थभिउ मार्तंड
पृथवी थरहरीए मनि यमकिउ हरिए,
जयजयकार करति सुर कुसुमे वरिसति,
नेमि तिहाथिउए काहन कन्हइ गयुए । १४

फाग

नेमि सिहासणि थापीय आपीय बाहु मुरारि,
तव बल गरव करालीय चालीय नीमि कुमारि । १५
हरिकुल कानिनि राचइए साचइए नेमि रसाल,
बांह डालंइ पिक डोलइए डोलइए कसनउ काल । १६
नेमि भुजल जणीय आणीय केसवि संक,
लेसिइए माहरु आजए राजए हुं निकलक । १७

काव्य

रामो जंपइ नेमि निप्पमभुआ दण्डाण चण्ड वल
जाणेऊण विसारज्जहरणा सकाकुलं केसव ।
सोरज्ज नरकत मिच्छदि कह तारुण्ण पुप्फोविजो,
जोगीदो परिणेदिनेग तरुणि वैरग्गरगादरो ॥१८॥

फाग

इणि वचनि अमी सरिखइंए हरिखइंए सीखवइ राम
वत्रीस सहस् अंतेउरी नेवरी निरूपम पाय । १८

कामिनी जनमनो माहग सोहग सुंदर वेह,
नेमि मनाविउ रमणीय रमणी परिणवउ एह । १९

अनुष्टपवृत्त

यावदाशासिता देशाः श्री नेमि रमणेच्छया
अन्तःपुरे विनेयांति वसन्तस्तावदागमन् ॥२०॥

रासक

अवसरि अवतारि रति मग्न माधवी माधवी परिमल पूरी रे,
कुसुम आयुध लेइ वनस्पती सवि रही विरही ऊपरि मूरी रे । २१
मदन रणगिणि सारथि परिमल भरि मलायनिल वाइ रे,
सुभटि कि मधुकर करइ कोलाहल काहल कोकिल वइं रे । २२

आंदोल

कोइल विखयणी मदिरा रुण नयणी,
नार कि मरहठीए वनि वनि वइठीए ।
पंथी प्राणपतंग कालऊं काजल भृंग,
चंपक दीपकूए वनघर दीककूए । २३
कुसुमित ए करुणी जणे किणि तरुणी,
मधुकर श्रेणिए तेह सिरि वीणीए ।
जंबीर बीज उरी वेइल वउल सिरि,
षाडल पारखीए मधुरस वांरिषीए । २४

फाग

बाडीय सवि हु कुसुमायुध आयुध आशा लहवंति,
भमर रहइं तिहां पाहरी माहरि ए मन मन भ्रंति । २५
संवत्री फूलडइ महुर अर महुअर रहथुं जव दीठ,
मुगध भणइं तव राहुउ चहुउ चंदी वइठ । २६

काव्य

भावीए मधु माधवी रति भलो फूली सेव माधवी,
पील चंपकनी कली मयणनी दीवी नवी नीकली ।
पामि षाडल केवठडी भमरनी पूगी रुली केवडी,
फूडे दाडिमि रातडी विरहियो दोल्ही हुई रातडी । २७

फाग

सुललित चरण प्रहारिह मारइं कामिनी लोक,
धिक विहसंवि अभागीया अभागीया तहवि अशोक । २८

कुवमारि करइं परीरंभ रंभा सोभागी नारि,
वनि वनि कुसुम रोम रोमांकुर कुरबक धरइं प्रपारि । २९

पूरइं षट्पद ऊलट फूलि ह्यो वनखंड
त्रिभुवनि मदन महीपति दीपति अति प्रचंड । ३०

काव्यं

ढढी चादर चीर सुंदर कसी दीली कसो कांचली
आंजु लोचन काजले सिरि भरी सीमंत सिंदुरनी,
लेइ साथिइं नेमिकुंवर सवे गोविंदनी सुंदरी
चाढीए गिरिनार डुंगरि गइ सिंगारिणी खेलिवा । ३१

रासक

वसत पेलणि साथिइं देवर देवरमणी सम गोरी रे,
पहुतली गिरिनार गिरि अंबावहि वावनि चंदानि गोरी रे । ३२
अनग जंगम नगरा वहुपरि परिणेवा मनावण हारी रे,
ललाट घटित घन पीयलि कुंकम कुमर रमाडइ नारी रे । ३३

आंदोल

कुमर रमाडइ नारि हीडोले हीचण हारि,
ऊच्छंगि वइसारीए सयरि सिंगारीए ।
थाइ थुमणि थोर दोलइ दोहर दोर,
कचण चूडोए रणकइं रुथडीए । ३४
देउर (मार। उखरि हार वडल सिरी सुकुमार,
नवनव भगरिए कुसुमची अ गिए ।
श्रीकम तरुणी तुंग विस्यइ सुचग
अति अणीयालउंए खुप पूणलउ ए । ३५

फाग

खूप घूणालउ विचि विचित्र कुसुम रचइ खेमि,
अतिहि अलकृत कली हरि हरि रमणी लिइं खेमि । ३६
कनक चउ कीवट भांडती हा रस पूरि,
नेमि रमाडइ सोगठे सोगठे सइं सवि दूरि । ३७

अढइआ

वन खड मडन अखड खडो खली मलयानील पडित जल उकली,
उकली चतुर हुआरितु घन घन तेह जलि विलसतइं । ३८
सवि अलवेसरि विगलित काजल कुंकम केसरि ।
असरि सीहरि नारितु । धन धन । ३९

झगमग झगमग झलि भवूकइं,
रिमि झिमि रिमि झिमि झंझर झणकइं । घन घन । ४०
सुरभि सलिल भरी सोवन सीगी केसव सुंदरी सकल सुरगी,
सीचइं नेमि सरीरतु । घन घन । ४१
इणपरि विविध विलासे रमणी नेमकुमर मनि अचिल जणीय,
पाणीय रमलि मझारितु घन धन । ४२
वानि खिसी हुई चपकनी पुली रुचि करति अपहर नीकली,
नीकली वाहिरी नीसरी घन घन । ४३
सरीरि करइं सिणगार पहिरइं चीर मनोहार,
रमणी कुसुम कुसुम सुकुमार घन घन । ४४
नेमि पाय पडी इमि भणइ अम्ह भणी करिन पसाउ
साव सलुण नुं मानि न मानिनी परिणउ भाउ,
नेमि कदाग्रह लागउ सागउ मौन नइ रंगी
तव मनि मानिउं जणीय राणीय उलटइं अंगि ॥४५॥

॥ इति रंगसार नाम्नि श्री नेमिजिन फागे विवाहकार वर्णनं ॥

तीसरा खण्ड

गाजंती गज गेलि गजन गति गोरी गुणे आगली,
सारी साव सुभावणी सरसती सादीसती सुंदरी ।
मागी नेमि विवाह कारणि करी कन्या कुलीणी कला,
वंती कुंअरि उग्रसेन कुल नी गोविंदि राजमती । १

रासक

उग्रसेन भूपति संभव कन्या धन्या गुणह निधान रे,
गोवीदि मागी (सुभगिसे) गुण भाजन राजमति अभिधान रे । २
सकल मगल कर लेईय अलगन लगन लगन उच्छाहरे,
अलंब पटउला बांधीइ मांडवि मांडवि माडउ विवाहरे । ३

आंदोल

मांडव रचंई विसाल चद्रअडा चउमाल
माणि मोती भरिआए दीसइ सिरी घरिआए,
रतन खचिताचि थभहेम घटित सिरि कुंभ
माणिक दीवडाए दीपईं रूअडाए । ४
इंद्र धनुष आकारि तलिआ तोरण बारि
मणि हीरालीए बन खालीए

सग्रहिग्रो ग्रति ग्रणीमाल सुंदर घवल विलास,
नागर खडडांए पान ग्रखंडडांए । ५

फाग

संग्रह्यां रंग सनागर नागर खंडडां पान,
परथल मधुकर घृते करी (ते करो) ते करीइं पकवान । ६

मांडीइं मणिमय भाजन सांजन जिमइं विवाह,
मूकीइं पकवान शालि रे दालि रेलिइं घृत माहि । ७

काव्यं

मूकीइं पकवान वानि घवलां देसांउरी सूखडी
पीली ढाली ग्राखंड शालि सुरहु घी सामटां सालणां
टाढां ढेप दही ग्रखंड शालि सुरहु घी सामटां सालणा
टाढा ढेप दही ग्रउघरिचलुं रंऊाजले उजवले
काथे केवडीए कपूर सरिसे तंबोलि पनाउली । ८

रासक

नेमि ग्रनेक परि कामिनीग्र मुगध दुगध जलिग्र घोलइं रे
पच सवद विविध घवल दइं मुहिरा मुहि रांती तबोलिइ रे । ९
बावनिचदनि उगटि सारइं कारइं सवि सिणगार रे,
हीरालग ग्र गि कृष्णागुरु वहिकइं लहकइ कुंडल हार रे । १०

ग्रंदोल

लहकइं कुंडल कानि ससि रवि मडल मानि
मुकुट मनोहरुए सिरि सोभा करुए ।
नीलवटि तिलके विशेष नयणे काजल रेख
वदनि तबोलूए पगि कुंकु मरोलूए । ११

उरवरि नवसर हार नव जलघर जिम धार
मणिरुचि पीयलीए विचि विचि वीजलए,
मुद्रडी मडित पाणि वीर वलय भुज ठाणि
नांहडी वहिरखाए झलके विहुपरवाए । १२

इति शृंगार वर्णन

फाग

ईम सिणगारीउ सारीए नारीए नेमिकुमार,
ग्रागलि मणि मारीसईए दीसईए सोहगसार । १३

भाषा

वावनी चदनि गूहलीरे उपरि चउकन वेरारे,
माणिक मोती केरो रे माडिउ सोवन पाटे सु दरुए;
तेह ऊपरि हरषि थापीइ माडी मनि ऊमाहोरे,
थाल मणिमय साही रे मोती अ ेड वधावइ कु अरुए। १४

भद्र जतिक धवल मयगिलि सिवादे कु अरुए,
सोभाग सु दरु रे चडीउ जिसिउ हुई पुरदरुए;
वहिनि वाला पुठि वइठी लीना लुण उतारइ रे,
दृष्टि दोष निवारइ रे उपरि धरिउ मेघाडंवरुए। १५

फाग

सिरि छत्र मेघाडवर अ बर व्यापक कंति,
विहु पखि सीकिरि चामर धवल ढलनि;
धउल गाइ धुरि धुलही धउल हीराउलीदति,
मागलि अवसर सोलही सोलही नाच करंति। १७

काव्यंद्वय

जे गगा नील काला कि डाहा खुरासणी भा
सीधल सीधुआ कलहथा कास्मीरीया कु कणा
टुका कानिआ न कचानि विहुला पुवे पाग नीसला
ते हे यादव कुमरा तखर्या तेजी तुखारे चडचा। १८

मोती मांडल मु डि दड सरल दीमात दतूमला
हीरालां झलकत सोवन कडी सिंदूर भाले भला,
थाली युधरीआल पाखर खरे हीरे जडो अेहनी,
अ गे नेह गजेन्द्र उपरि चडचा चालति राणा सवे। १९

रासक

मृदग भु गल भेरि गभरि सर सरणाइ नीसाण वाजति रे
दडदडि दिसिमा देव दु दुभि महारवि रविरथ तुरीय त्रासति रे। २०
पालखी सुरीयरथ गयद आडवरि अ वरि अमर निहालो रे
छत्र छज अलवसी किरिवा (मरधर) सवर जन हिव चालो रे। २१

आंदोल

तोरण पहुती जन मागत दीजइ दान
वाजिन्न वाजइ ए अ वरि गाजइ ए;
वइठी रयण गवाक्षि चतुर चकित हरिणाक्षि,
रसि राजमतीए नेमि निहालतीए। २२

रहिउ तोरण वारिसुणीय पसुय पोकारि,
पशूअ मेल्हाविआर अभय वरताविआए,
मयगल वाली नेमि पहुतउ निज घरि खेमि।
राजलि हलवलीए तव महीयलि ढलिए। २३

फाग

वीजणे करइं सखीजन वीजनराल जयति ।
उपरि ताप निकदन चदन रसि विरसति । २४

चेतन पामिय राजलि काजलि कलुषित दृष्टि,
विलपति विरह देखाउती पाउती आसुअ वृष्टि । २५

पीडइं काइ बापीयडा प्रीयडा विरह विषादि,
प्राण हरेतुं मीरडा (मोरडा) मधुर निनादि । २६

रडइ य पडइं लोटइ ए मोटइए ककण फार,
गमइ य नहि अंगि नेउर केउर करि उरिहार । २७

राजलि विरहइं पूरिअ (पूरिअ) अवर कुमार
नेमि निरतर समरति समरति पति गुणसार । २८

दान सवत्सन देइय लेइय सयम भार,
नेमि करइं पणि ते सवि देस विदेस विहार ।२९

गाथा

आसो अमावसीए दिणमि सिरि नेमिजिण वरिंदेण ।
पत्ते केवलनाणे कुणति देवा समोसरणं ॥ ३०॥

सस्कृत रासकः

सुरपतयो विद्दधति समवसरण मशरण शरणमुदार रे
रजत कनक मणिसालस डबर भमर तरु विभार रे। ३१

सकल मिलित वृंदारक दानव मानव नायक लोकारे,
मधुकर निकुरंब मकरद पारण कारण विलसदशोकरे । ३२

आंदोल

प्रथम अशोक विशाल पुल पगर सुकुमाल
नाद मनोहरुए चंचल चामरुए,
हेम सिहासण कंत भामंडल झलकंत
दुंदुभि अंवरिए त्रिणि छत्र उपरीय । ३३

इम प्रतिहारिज आठ कसर जितो नगुपाठ
रचइं पुरदरुए भरि भगति घरुए,

पालीय जिनवर पासि संयम मद उल्लासि
सिवपुरि पुहुतीए राजमतीए सतीए । ३४

फाग

धवल आषाढनी आठमी नाठ महामेव नारी,
नेमि जिणेसर सिवपुरि वपुरि गयु गिरिनारि ।।३५।।

अनुष्टुप वृत्त

श्री मान्नेमि जिनो दीक्षा ज्ञान निर्वाण लक्षणं
कल्याणक त्रयं लेभे गिरिनारगिरीश्वरे । ३६

काव्य

देवे रैवत मौलिमण्डनमणि देवी शिवानंदनः
स्वामी यादव वश वारिधिः हरिः शखाकितः श्यामलः
श्री नेमिर्जगदेक मगलकरः कदर्प दर्पापिहो
भुयाहुज्ज्वल सोमसुंदर यशा श्री संघ भद्रंकरः । ३७

इति श्रीनेमिनाथस्य नवरसा विघनं भविक जनरंजनं फागं ।

नेमिनाथ स्तवन, रगसागरनेमि फाग
(शमामृतम्, सं. मुनि धर्म विजय, वि. स. १९७९)

वीर विलास फाग

यद्यपि इसका वर्ण्य-विषय नेमिनाथ-राजीमती की सुप्रसिद्ध कथा है, परन्तु कवि ने अपने नाम के आधार पर ही फागु का नामकरण किया है। गुटका मे फागु का शीर्षक इस प्रकार दिया गया है— 'अथ श्री वीर विलास फाग लिख्यते' पुष्पिका मे प्रतिलिपिकार ने रचना और रचनाकार दोनो का उल्लेख किया है— 'इति श्री वीरचद्र विरचित श्री वीर विलास फाग समाप्तम् ।' यह एक वृहत फागु है जिसमे १३७ छद हैं। पुष्पिका से स्पष्ट है कि इस फागु के रचनाकार वीरचन्द्र हैं जिनकी गुरु-शिष्य परम्परा इस प्रकार रही है :—

विद्यानन्दि→ लक्ष्मीचन्द्र→ वीरचन्द→ ज्ञानभूषण

ज्ञानभूषण प्रणीत 'सिद्धान्तसार भाष्य' के मगलाचरण मे लक्ष्मीचन्द्र और वीरचन्द्र का बडे आदर से स्मरण किया है।[1]

वीरचन्द्र ने किसी भी रचना मे रचनाकाल का सकेत नही दिया है परन्तु इसके शिष्य ज्ञानभूषण नें सम्वत् १६०४ मे भ्रमर गीता को समाप्त किया था।[2] यदि गुरु-शिष्य के रचनाकाल मे २५ वर्ष का अन्तराल माना जाये तो वीर विलास फागु की रचना १६ वी शती के उत्तरार्द्ध मे ठहरती है। इसकी प्रतिलिपि भी सम्वत् १६८६ मे किसी शिष्य परम्परा के व्यक्ति द्वारा हुई है। भट्टारक परम्परा के अनुसार वीरचन्द्र १६ वी शती मे विद्यमान भी थे।

कृति लोकविश्रुत नेमिनाथ-राजीमती की कथा से सम्बन्वित है। इस कथा को उपजीव्य बना कर जितने भी फागुओ की रचना हुई, उनमे परम्परा कथानक रूढियो, वर्ण्य-स्थलो, और घटना स्वरूपो को ग्रहण किया जाता है। अत विषय

---

१ श्री सर्वज्ञ प्रणम्यादा लक्ष्मीवीरेन्दुसेवितम् ।
भाष्य सिद्धान्तसारस्य वक्ष्ये ज्ञानसुभापणम् ॥
(मगलाचरण, सिद्धान्तसार भाष्य)

२. सवत् सोलह चार ऊपर जानो, कार्तिक सुदी पडवा वखानो ।
सारका पासाण सिद्धि सिनाये भ्रमरगीता कीवो तेठी छाया ॥
(भ्रमरगीता)

प्रतिपादन की दृष्टि से इस कृति मे कोई नवीनता नही है। इस कृति मे कथा की अपेक्षा, यो कहा जाये अनुभूति की अपेक्षा, उपदेश ढेर सारा है । उपदेश भी जैन दर्शन से अनुप्राणित और अनुस्यूत है । अहिसा, अपरिग्रह, विरक्ति, अनासक्ति-आदि से युक्त धार्मिक-प्रवचनात्मक दृष्टिकोण ने कृति को बोझिल बना दिया है।

सम्पूर्ण कृति सादे दोहे मे निबद्ध है।

वीर विलास फाग

रचनाकार– श्री वीरचन्द,

रचनाकाल— १६ वी शती का उतरार्द्ध

अकल अनंत आदीश्वर इश्वर आदि अनादि ।
जयकार जिनवर जग गुरु जोगीश्वर जे जूगादि ॥१॥

कवि जननी जग जीवनी मझनी आई करि सभाल ।
आपितु शुभमती भगवती भारती देवी दयाल ॥२॥

मिहि गुरु सुखकर मुनीवर गणधर गौतम स्वामि ॥३॥
(केवल एक पक्ति उपलब्ध है।)

श्री नेमि जिन गुण गाय सु पाय सुं पुण्य प्रकार ।
समुद्रविजय नृप नदन पावन विश्वाधार ॥४॥

शिवादेवी कुमर कोडामणो सोहामणो सोहायसु प्रधान ।
सकल कला गुण मोहण मोहण वलि समान ॥५॥

महि जीसो भागि स मावडो सलूणू हरी कुलचद ।
निरूप मरूप रसालुणडो जादूयडो जगदानद ॥६॥

केलि कमल दल कोमल सामल वरण शरीर ।
त्रिभुवनपति त्रिभुवनतिलो गुणनीलो गुण गभीर ॥७॥

माननी मोहन जिनवर दिन दिन देह दिपत ।
प्रलत्र प्रताप प्रभाकर भवहर श्री भगवत ॥८॥

लीला ललितु नेमीश्वर अलवश्वर उदार ।
अहसित पकज पखडी अखडी उपि अपार ॥९॥

अति कोमल गलि कंदल प्रविमल वाणी विशाल ।
अंगि अनोपम निरूपम मदन निवास ॥१०॥

भरयावन प्रभु षट वरयो संचरयो सभा मझारि ।
अमर खेचर नर हरषीया नरखीया नेमिकुंमार ॥११॥

देव दानव समान सहू वहू मल्यायादव कोडि ।
फणीपति महीपति सुरपती वीनती करू कर जोडि ॥१२॥

सुणि सुणि स्वामी उं सामला सावला तूं साहु सुवंग ।
प्रथम तत्रह सुख सम्पदा सुप्रदा भाग विचग ॥१३॥

पीहू परमारथ मीन धीर आचरि चरित्र चंग ।
आपि अप आराधज्यो मावज्यो शिव सुख संग ॥१४॥

उग्रसेन रायां केरी कुमरी मनोहरी मनमथ रेह ।
साव सलूणा गोरडी उरडी गुण तणी रेह ॥१५॥

मे ।लती अतिमलमती चालती चउरसुचंग ।
कटि तटि लक लवूतर उदर त्रिवली भंग ॥१६॥

कठि न सुपीन पयोधर मनोहर अति उतंग ।
चपकवनी चद्राननी माननी सोहि सुरग ॥१७॥

हरणी हरावा निज नयणडि वयणडि साहू सुरग ।
दत सुपती दीपंती सोहंती सिर वेणी वध ॥१८॥

कनक केरो जमी पूतली पातली पदमनी नारि ।
सतीय शिरोमणि सुंदरी अवतरी अवनि मझारि ॥१९॥

ज्ञान विज्ञान विचक्षणी सुलक्षणी कोमल काय ।
दान सुपात्रह पोखती पुजती श्री जिनपाय ॥२०॥

राज्यमती रत्नीयामणी सोहामणी सुमधुरीय वाणि ।
भमर तोली भामिनी स्वामिनी सोहिमु राणी ॥२१॥

रूपि रंभा सु तिलोत्तमा उत्तम अंगि आचार ।
परणि हू पुण्यवती तेहनि नेह करि नेमि कुंमार ॥२२॥

तव चिंतवि सुखदायक जगनायक जिनराय ।
च रत्र वरणीय कर्म मर्म ह जीमज आज ॥२३॥

जव जिनपणी ग्रहणतणी हामणी हइडि विचारी ।
सुर नर तव आनंदीया वंदीया जय जयकार ॥२४॥

तव बलदेव गोविंद नीरद सुरिंद समान ।
रोष त्रिग जगपती जव सद सहू वालि जान ॥२५॥

घटा टकार वयमटम कया चमकया चतुर सुजाण ।
देवद दामाद्र कया ठमकथा ढोल मीसाण ॥२६॥

भेरी न भेरी महू अरि झल्लरि झंझकार ।
वीणा वश वरचग मृदग सु दोदो कारा ॥२७॥

करडका हाल कंसाल सूताल विशाल विचित्र ।
सांगा सरग इव संख प्रमुख वहु वाजित्र ।।२८।।

पाश्वरा तार तो खार हीसार ना नेजी अरग ।
मद भरि मेगल मलपता मलकता चाला सुचंग ।।२९।।

सवल संग्रामि सवभजे झूझ झालिक झू झार ।
धाया धारध सता हसता हाथि हथीयारा ।।३०।।

समरथ रथ सेज वाला पालानर पुहु विनमाय ।
वाहाण विमाण सुजाण सुखासन सख्यन थाइ ।।३१।।

उर्द्ध ध्वज ने जारा जेसरिवरि सीस करि सोहु समान ।
विचित्र मुद्दत्र चामर भरि अंवरी द्राहघो भाण ।।३२।।

सूगघ विविध पकवानि भोजन पान अमीय समान ।
जमण जमती जाय जान सुमान वा धती विधान ।।३३।।

मृगमद चदन घोलत वोल सुरोल अपार ।
सुरतर अ वर भरा केसर कपूर सार ।।३४।।

केतकी मालती माल गोजाल सु चंपक चग ।
वोलसरी वेल्य पाडल परिमल मलया भृंग ।।३५।।

वहु विध भोग पुरंदर सु दर सहिजि स्वरूप ।
चतुर परिण चालि जान सुमान मली वहु भूप ।।३६।।

दुख दालिद्र दूरि गयां आपयी दान उदार ।
सजन सहु संतोषीया पोरवीया वहु परिवार ।।३७।।

वंदीजन अरद वोलि घण तिन तणा विविध विसाल ।
वरवा जाय वाय लगाय ण गाय गुण माल ।।३८।।

इंद्र इन्द्राणी उवारणा लुंहणां करि घरणेस ।
नवरसि नाचि विलासणी सुहासीण भरे सीर सेस ।।३९।।

धवल मगल सोहामणां भामणा लेव भवनारि ।
लूण उतारे कुंमारी स मारी सहुसार सणिगार ।।४०।।

जयतूं जीवितूं नद जिणंद जगंद जगीस
युवती जगती यम जंपती कुलवती दिय आशीश ।।४१ ।।

इमु प्रभु परणे वा सांत तोरणि जाइ जान ।
जान जाणी जव आवली नरपती उग्रसेन ताम ।।४२।।

खचरो साहामो संभ्रकरी आणंद भरी प्रणमेवि ।
मलया महाजन मन रगे अंगे आलिंगन लेवि ॥४३॥

युगति जोडी जानिवासि उल्लनि उनारी जान ।
आसन सयन भोजन विधि मन सिद्धि दी धामान ॥४४॥

नयरि मझारि सिणगारी सू नारी ताहि सुविचार ।
महालम हासव मांडीया छडीया अवर व्यापार ॥४५॥

ध्वजि तोरणि सोहि घरि घीर धीर धीखान रसाल ।
फूल पगर भरयां घीरं घीर घरि घरि झाकझमाल ॥४६॥

घरि घरि कुंकुम चंदन तणो छाटणां छडा देवरावि ।
घरि घीर मणि मुगताफल चाउल चाक पुराय ॥४७॥

नव नवांनाटिक घरि घीर घरि घरि हरष नमायि ।
गिरि नारि पूरि के री सुंदरी रंगभरि मगल गाइ ॥ ४८॥

चोवटां चहूटी चणगारीयां मारी बांध्यां पटकुल ।
पच गव दवाजि घरि घरि धरि घरि दत तवोल ॥ ४९ ॥

घरि घरि गाय वधांमणां रलीयामणा मन मिली ।
घरि घरि अंग उल्लास सुरा सुर मिरलि ॥५०॥

उत्सव एहवा अनेक विवेक सु करि कुल रीति ।
सुंगव सुतेल सचारि उचारि कामिनी वर गीत ॥५१॥

मलना हाणूं करावि पहिरावि शृं गार ।
श्रवण कुंडल शीग सरोवरा वर हार कठि उदार ॥५२॥

तिलक जे जतोय निलवटि कटि तटि कटि सूत्रधार ।
बाहि विहिर खा हाथि मुद्रडी भणि जडी जोति अपार ॥५३॥

आंखि अंजन आजि हरख नुं मुखि सवारितं वोल ।
कंठे कुसुम माल सुगध मंद मधूकर रोल ॥५४॥

चरणे घूघरी घम घम कि सुझमकि नेउर झमकार ।
इम आभूषण पहिरी सोरंथि वेठो कुंमार ॥५५॥

मुनी वीरचन्द्र वोलि तिन तोलि कुण कहीइ भवन मझारि ।
रूपि जगत्र महू मोहिया जगदाधार ॥५६॥

नाचती अमरी किनरी खेचरी विविध प्रकार ।
देवता दुंदुंभी वाजती गायती मुघड ओंकार ॥५७॥

सेरी सेरी मढू परवरा दिहोद शिखु सट धाय ।
देव देवी नरनारी वहू अर जावा जाय ॥५८॥

सारथी रथि चोइउ जो इइ अवसारु सार ।
तव परणेवा निकारणि तारणि पो होता कुमार ॥५९॥

तव राजलि राणी हरप सुं पेखि आवतु निज नाह ।
करि वरमाल धरती करती अंगि उत्साह ॥६०॥

सही अरमणे सुणि सुंदरी प्रहरी अवर भूपाल ।
मावि तुझ कत महातनि धीर गलि वरमाल ॥६१॥

गजगती गेलती गुणवती मलपती माननी सार ।
जो इव रहइ इह रखती निरखंती निज भरतार ॥ ६२॥

तेणे समे जलचर थलचर नभचर प्राणि पोकार ।
साभली निमनि कंपयो जंपयो जगदाधार ॥६३॥

सारथि कहिरें किणि काजि ए आज भरया पसूवाड ।
मूख तरख सहि वापडा वापडा पाडि बराडि ॥६४॥

सुणि मुंदर प्रभु जिनवर कर तोडी जपि सोय ।
तोरी विवाह गोरव हसि जमीस सजन सहू कोय ॥ ६५॥

तेणि कारणि पसू रुधियां वांधया करे आक्रंद ।
इम साभली रथ वालयो पालयो पसु तणो हंद ॥६६॥

मोक सवि तव खल भल्यो जव वल्यो सांमलो स्वामि ।
राजेलि माभली तव ढली मही अले मूरछाह ॥६७॥

चेत नहि उति आरोवती जोवती नेमिकुंमार ।
म गउ भीथी देटि नारिव निरधार ॥६८॥

प्रीय पाखि प्रेमे पर जली वलि वलि वनीता अपार ।
अचेत थाही चेत लहि वजी ढोल ढली पडि वारोवार ॥६९॥

कनकमि. कंकण मांडती त्रोडती मणि मिहार ।
लूंचती केलेकलाप विलाप करि अनिवार ॥७०॥

नयणि नीर काजलिगलि टलवलि भामिनी भूर ।
किमे करूं कादिरे साहे लडी बिहि नीडे गयो मझनाह ॥७१॥

तोरणि आनदि आवयो वल गेयो भाजी उछाह ।
.... - .... ॥७२॥

विरह वेदना ह ी आकुली हवि रलीइ मझकाय ।
मनना मनोरथ मनमाहि रह्या ते कह्या किम न विजाड ॥७३॥

पोयण पान कुसुम भर अगर चंदन कपूर ।
सरी रही ताप न किम रहि दहि शीतल जलपूर ॥७४॥

तु जोतां जाइ जिनराय कायि न थाइ मोरी माय ।
वालि भविगो बोलावो मनावो जई लागो पाय ॥७५॥

सिरि वाघे वाह वि आखडी रयण रयण दीपंति ।
चारु घाद स्तुम भसोखप जोत पले शिकंत ॥७६॥

नयण काजल नही सारू समारू न सीस सिंदूर ।
झवकती झालि न भावि जो नावि गयो प्रीयु दूर ॥७७॥

मुखि न बोल सचार लगार न लगि सार ।
मणि मोती तेजि सार सुहार करिह इयि भार ॥७८॥

करि ककण मुइडी पदकडी पिहि खानिम ।
कटि मेखला कम मनि हीरं जो वर वोली सीम ॥७९॥

झाझर झूमण मझन डी गमि मनभमि प्रीयडा पासि ।
धिग धिग ए सणगार असार ए दुख निवास ॥८०॥

कोयल साद सोहामणी अलखामणो एमझ आज ।
मोर किंगार घीकारयो कार करि कुण काज ॥८१॥

क्रीडी किसी न सुहाविन भावि मुखि मिग आहार ।
देही विदी धु मुझ दाह विवाह सीम अनिवार ॥८२॥

परभव पुण्य न कीधा न दीधामि पात्र दान ।
कि समकित व्रतना दरथा नाचस्या सु तप विधान ॥८३॥

किंमि कु गुरु वखाणीया न जाणीया देव कुदेव ।
किमि गुरु माण खडीय छंडीय सति गुरु सेस ॥८४॥

किंमि पर भडार फडाव्य किंमि प्रासाद ।
धर्म मारगिमि राखीया माखीया पर अपवाद । ८ ॥

किमि सिद्धान्त विराधिया वाधिया बहु विधि कर्म ।
किमि धरतणां दोष मेलीया बोली यामा सा मर्म ॥८६॥

कि साधु सतापिया पापीया नरनि अ गि ।
किमि दोष निवेस चडावी कराव्या भग ॥८७॥

किमि जती जनीन विकारी अवीचारी दीधी गाल ।
किमि रयणि भोजन करथा तुल व्यापार धन उदालि ॥ ८॥

पण जाण्यां पचन पत्र शाक कुपाक भक्षा कदमूल ।
किमि मघुमांस मघु खाधा प्रसुव प्रस्याणु फुल ॥८६॥

किमि काज वीना नरिनाखीयां भंखीयां आलपंपाल ।
मिमि माय विछोहीयां रोवडाव्या बाल ॥९०॥

किमि मण गल जल पीधां कीधां तेह माहि समान ।
मिमि खेत्रज खेडाव्या भूडाव्या किमि रान ॥९१॥

किमि दव दाधीयां बालीयां टालीया जीव सथान ।
किमि कोमल फल चूटीया खूटीयां कुपल पान ॥९२॥

किमि निवाण फोडावीयां चडावीयां परीनभि आल ।
किमि पारिधि पशुफलावीयां घलावीयां जलमांहि जाल ॥९३॥

किमि संखारासूकव्या पाकव्या कि इटवाय ।
किमि थापी लिपि सीडवां पीडया जीव छकाय ॥९४॥

किमि कला ल कु मार गली आरा चू नारा खाट की माछी जेह ।
तेह कर्म कियां कराव्यां जिणि तिणि सभ फल्यां पाप रेह ॥९५॥

परथां पिणि लाचमि अही किमि रण भांज्या करी सीम ।
जूवढा पाडचां पडाव्या किमि लेई लोप्या नीम ॥९६॥

तडकि खाटि खाटल्या खोल्यो बोल्या मिं कि नीर मभोरि ।
उन्हिनीरि सीचो दूख दीयो कियो मि मांकण सतार ॥९७॥

किमि चांचड लीखजू घणी हणी निज पायो सताप ।
असत्य अघटता किमि सल कीधा वावीया तेणि बहु पाप ॥९८॥

किमि कीधी परचादी लगाडी माहो माहि राहिडि ।
किमि पुरगाम उजाडी विभाडी चडावी किमि धांडि ॥९९॥

किमि पातक न विचारीआ वारीयांमि देतां दान ।
किमी होम करावीया मारीयां माणस ढोर ॥
किमि चोरी द्रव्य सघव्या वच्या दाही निचोर ॥१००॥

साख्य कूडो पूरी परतणी नही सूणो काने जेवात ।
किमि कूट कपट करावी धरावी परतात ॥१०१॥

किमि नीसी भरि भत्र काव्या जगव्या भि सूतालोक ।
बाहा आवि छोहीमि परधरि कराव्या सोक ॥१०२॥

गली विषलाख लोहला कडां महूडा मांखण मधमीण ।
चात्र कोचा वडा मडा दोरडा परोडां पभेठी कुसि कीण ॥१०३॥

अरहट घरटी धाणी हल कवल को सकु दाल ।
सांती धांकन सस्त्र वूहारडी पावडी प्राणी प्राणी काल ॥१०४॥

पावडा चा चू आसफा सीफा सावूं साजी कंटोल ।
धावडी सोरठी काक फल मसी कांकसी कील कंटोल ॥१०५॥

मूसल उखल तदुल तल आदि करी सल्या धान ।
माधा सपसू पखी घणा विक्रय विधाक ॥१०६॥

विणज एह वा कराव्या करचा नाचरा ज्ञानाचार ।
वस्त सरखा सरखी भेली मेली गर्मि वे ची अमार ॥ ०७॥

वि मि कूडानाण पालधा तोलि कीधा विभाग ।
पशू पु छ कान कापीआ करावीया किंमि कीधा जगननिजाग ॥१०८॥

त्रिमि वहू भार भराव्या समव्या मि वल तुरंग ।
किमि नरनारी भोम सयोग ना कीवा भंग ॥१०९॥

पूरवला पाप इम फलि नवि चलि चाहो टांजे कर्म ।
जे गात प्रीयनी तेह गति माहारी नारी नो एह वोए धर्म ॥११०॥

तिणि अवमरि नेमि जिन भाखिनि राखि कोय राय तणू गूझ ।
तहने क्षत्रे धर्म्म छाडचो ए मांडयां अवूझा ॥१११॥

कुमती कुशास्त्र वखांणि न जांणि को धर्म अजाण ।
अहिंसा परम धरम मुखि मणि हणि प्राणी तणां प्राण ॥११२॥

कुगुरु कुदेव कुधर्म्म कुकर्म लीणा जे गमार ।
हठि इणि दुरनिगुण तिगे रनह करि जीव सचार ॥११३॥

मरण भय जे त्रासता नासता देहि दसि जाय ।
जे नर जीव धरावी मरावीजि आमीष खाय ॥११४॥

ते नर नरकि निवास आवास करि वहु वार ।
भवि भवि अति दुख भोगवि आनुभवि अनंत ससार ॥११५॥

कलवल करता ते असरण मरण दीजि किम जाणि ।
आप वेदना जो वरवाणीइ मारी एतो किम प्राणी ॥११६॥

राम मूरति चा चिसू कहणि मुखि भणि जिम जिम राम राम।
तिम दया दया मुखि सहू कहे नलहि दवा तणू नाम ॥११७॥

ए रीति आगि अहच कुलि नही कही जाणि कीधूं ए काजी ।
जीव मारीति परण घूं अभिनवू दीमि आल ॥११८॥

धिग् धिग् राग भोग सजोग वियोग मि धिग ससारा ।
धिग् धिग् परणे वु धिग राज एक जे मझमनित मगार ॥११९॥

धिग धिग् भूपति भरेग लपंट कपट पाणि जे मूढ ।
राज काजि परछे तरि निस्तरिते किम मूढा ॥१२०॥

अनेक भूपनि आगि आवषा विघवा सुभट अनत ।
उदरनि अरथि ए आतमा वहून मा डया आरभ ॥१२१॥

इम जनामि जनामि आवतो विगूतो ए गमार।
विषया सुख ए धारयो भारियो भवतणि भार ॥१२२॥

परम धरम नवि सांि राधिए समकित सार ।
माया भावि वहु पा सताप पीड उपाय अपार ॥१२३॥

धंधि पडचो स्वो मनडचो रि वहचो जनमनी कोडि ।
मोहि मोहि मातो मो रु मोर क रम रजि जाटि सहू छोडि ॥१२४॥
संसार आल पपाल जजाल ए जालस मान ।
ससार मा ि जलि मीनए दीनमि निरदयनि दान ॥१२५॥

काल अनादि जीव अडवडचो पडचो भलो भवजाल कूपि ।
कर्म न टावि ् नाचव्यो राचव्यो जू जवरूपि ॥१२४॥

अथिर रमणी रम तरग मातग शुभ गुरु भोग ।
अथिर शशी कर चामर छत्र कलत्र पुत्र मिले सयोग ॥१२५॥

अथिर सुगढ़ मढ मंदिर पुर पाटण परिवारा ।
अथिर जीवित धन जोवन तनु मन अथिर समारा ॥१२६॥

आप अरथि पर पीडा ते क्रीडा मां विधिकार।
प्रथम प्रेम हू परिहरु जिम तरु भव जल पार ॥१२७॥

तपोवनि जई तोपंड वरू धरू व्रत सयम भार ।
मन इन्द्रीय बहू सवरू आप रूप चा चार ॥१२८॥

इम जपीनि वेगि नेमि जिन हृढ़ मनि गयो गिरिनारि ।
वितरा गतणिर मिरजयो भंजयो मार वि ार ॥१२९॥

पग चरित्र समाचरी विहिरी निदिछारन्न ।
रेवत गिरि रुव विमान श्री जिन गुण सपन्न ॥१३०॥

धीर पणि ध्यान पूरवो चूरवी कम विनाद ।
बावीस मो जिन सुखकर शिवपुरी पोहो ा जिणंद ॥१३१॥

संतोष करी मन सवरी व्रतधरी जपतप परवाणि ।
सेवीनि जिन स्वामी सुखपामो ो गत ामती राणी ॥१३२॥

धतीव्र शधिजेणि छडि वानडवी ुधर काम ।
धन नेमि जिन राजि नजिणि मन राख्या गमि ॥१३३॥

नेमि जिनराय नो फाग सुराग अंदोला एहनिह ।
श्री वीर विलास उद्गलास सुंगाय सि जेह ॥१३४॥

भुवने भला भोग भोगवि नव नव नव संपदासार ।
सिद्धि नयरी ते सचरि गुण धार अष्ट प्रकार ।।१३५।।

श्री मूलसंघि महिमानिलो जती तिलो श्री विद्यान्द ।
सूरी श्री मल्लिभूषण जयो जयो सूरी लक्ष्मीचद ।।१३६।।

जयो सूरी श्री वीरचंद मुनिंद रच्यो जिणि फाग ।
गाता सांभलतां ए मनोहर सुखकर श्री वीतराग ।।१३७।।

जीहा मेरू महीधर द्वीप सायर जगि जाम ।
लगि सूर ए चदो नंदो सदा फाग

इति श्री वीरचन्द्र विरचित श्री वीरविलास फाग समाप्तम् ।।
।।श्री।। लेखक पाठकेयाश्च कल्याणमस्तु ।।

नेमीश्वर फाग

नेमिनाथ और राजीमती की अत्यन्त लोकप्रिय कथा को उपजीव्य बना कर लिखा गया २५१ छन्दो का दीर्घायत फागु है । फागु की रचना काष्ट सघ, नदी तट गच्छ के सूरीवर विश्वसुसेन के शिष्य विद्याभूपण द्वारा हुई है :—

आहे कष्टाए सघ नदीतट कह विद्या गण सास ।
सूरिवर विश्वसु सेनए शासनना शणगार ।।
विद्याभूष्ण तस शिष्यए दक्षि पणि कृत फाग ।
एक मना सहू सुण्ताए भणता ए हुइ वैराग्य ।। २४८–२४९ ।।

कृति का लेखन कार्य विद्याभूपण के शिष्य तेजपाल द्वारा सम्वत् १६१४ के कार्त्तिक मास की शुक्ल पक्षी चतुर्थ्या को तदनुसार भौमवार को सम्पन्न हुआ ।

कृति का कथानक परम्परागत है समुची कृति मे काव्यत्व की दृष्टि से दो ही स्थल विचारणीय है, जहा कवि की काव्यगत सवेदनाएँ अपने झीने रूप मे मुखर हुई है । पहला स्थल नेमिनाथ के द्वारा किये गये कौतुक है। शंखनाद और धनुपटंकार से जो प्रभाव दृष्टिगत हुआ, उसी का वर्णन कवि ने अतिरंजना के साथ किया है। दूमरा स्थल वसन्त वर्णन का है जिसमे अनुभूति की अपेक्षा स्थूल वर्णन है, वह भी निजी नही, पराया है। यह पद्धति प्राकृत और अपभ्र श की कतिपय कृतियो से चल कर फागु मे निष्णात हुई और परम्परा अभिव्यञ्जना-रूढि से ग्रस्त होकर लिजलिजी हो गई ।

वसन्त सुषमा मे गणना करते हुए कवि ने श्रीफल, ताल, तमाल, लवग, नारिकेल, चदन, देवदास, कृष्णागर, कर्णिकार, दाडिम, कमरख, कदली, वट, पीपल, नीवू के पौधो को एक स्थान पर वटोर दिया है । शायद कवि को वसन्त श्री की प्रत्यक्षानुभूति करने का कभी अवसर नही मिला था ।

नेमिश्वर फाग

विद्याभूषण कृत

रचनाकाल– सम्वत् १६१४

श्री सरस्वत्यै नमः

श्रीमद्देव समाजवंदितपदं ससार विध्वंसकं ।
दोषघ्नं च कुकर्म्मणा सुतपसा गेता रमत्युद्धृतं ॥
त्यक्तवागारमनंत सौख्यजलधि मोहारिनिनसिकं ।
वंदेऽनत गुणार्णवं सुचरितं श्री आदिनाथ प्रभुं ॥ १ ॥

गौतमेशं जिनं नत्वा स्तुत्वा जिन मुखांबु जात- ।
निर्गतां सारां देवी वक्ष्ये नेमि वसतकं ॥ २ ॥

अथ फागु

आहे प्रणमीय पढमपढम जिन सारदा पाय ।
गायशूं दशह भवांतर सहित नेमीश्वर राय ॥ ३ ॥

आहे जाणीय जस अवतार सुसार इंद्रादिक देव ।
आवीय मेरु शिखिर लेई कीधी बहू परिसेव ॥ ४ ॥

आहे कुमर पणि अंगीकरयु निर्म्मल संयम भार ।
मूंकी विनश्वर राज काज शुभ राजलि नारि[1] ॥ ५ ॥

आहे केवल बोध दिवाकरि, बोधीय भवीक समाज ।
मुक्ति मारिग मजू आलीय, पाम्दाए शिव पद राज । ६ ॥

अडिउ

एवं विध जिन राय, ए भुवनत्रय नुत पाय ।
गाइशूं मन धरीए सद्गुरु सनुसरीए ॥ ७ ॥

सुणु भवीक भवएह, यम निर्म्मल थापि देह ।
निश्चल मन करीए, आरति परहरीए ॥ ८ ॥

विंध्याचलि पुलिंद, हणि जीव ना वृन्द ।
अघऊपारजीए, मति पापह भजिए ॥ ९ ॥

---

1. नामि

ध्यान स्थित मुनिराय, तपिसु निर्म्मल काय ।
जीव रहयु लहिए, शरपाणि ग्रहिएं ॥ १० ॥

निकट स्थित निज नारि, मो प्राणनाथ अवधारि ।
भवीयण तारणुए, मुनि नवि मारणुए ॥ ११ ॥

इमसंबोधी कांत, जाणी मुनिवर सांत ।
विहि पासि गयाए, नमी ऊभा रहयाए ॥ १२ ॥

सन्मुख जोयूं ताम, नेमीश्वर हुसि नाम ।
भावि तीर्थंकरुए, भुवनत्रय गुरुए ॥ १३ ॥

मुनि इम घि उपदेश, जे जीव तणायनि बेश ।
नवि पर जालवाए, यलि पालवाए ॥ १४ ॥

इम संबोध्यु भिल्ल, मूंकाव्यां मन शल्य ।
जीव यत्न धरिए, जिन चित करिए ॥ १५ ॥

भिल्लवि भूइ जाण, सुखिते मुक्या प्राण ।
पुण्य तणि फलिए, गुरु योगहु मलिए ॥ १६ ॥

रासु

बीजि भवि अभिके तु नरेश्वर, देव पूजाइ जिमह
पुरदर । मदर समद्दढ चित्त रे ।
राज्यकला संपूरण सोहि, रूपि अंतःपुर जन मोहि ।
अति असंख्य जस वित्त रे ॥ १७ ॥

प्रथमस्वर्ग बीजि भवि देव, श्रीधरनामि ऊपनु हेव ।
सेवि निज्झंर वृंद रे ।
चित्रागति विद्याधर सुन्दर, वीतराग पदपंकज इंदिर ।
चुथि जगदानंद रे ॥ १८ ॥

अडीउ

भवि पचमि सुजाण । चुथि स्वर्गि वरवाण ।
उपनु देवताए । निज्झंर सेवताए ॥ १९ ॥

देह तणू परिमाण । षष्ट हस्तनूं जाण ।
जिन वाणी कहिए । सहू भवीयण लहिए ॥ २० ॥

जीवत सागर सात । धर्म्म तणी तिहां वात ।
सम्यक्तह धरिए । जिनपूजा करिए ॥ २१ ॥

श्लोक

माहेन्द्र स्वर्गं तश्चनुत्वा राजाभूदपराजितः
राज्य भुनक्ति सौख्येन पूर्वोपार्जित पुण्यत, ॥ २२ ॥

फागु

आहे पुण्य सयोगिए, पाम्युए अच्युत अच्युत स्वर्ग ।
अ ग अनोपम सोहिए मोहिए देवीय वर्ग ।। २३ ।।

वावीस सागर जीवि तह तणु शुभ जाण ।
उच्चपणू तस देह तू बोल्यू विहस्त प्रमाण ।। २४ ।।

श्लोक

सुप्रतिष्टो भवेद्राजा जीविताते ष्युत महत् ।
स्वर्ग मुक्त्वा महा भोगी जिनधर्म्मं रतो महान् ।। २५ ।।

अढोउ

जयत नाम विमान । तिहां जिनवर केरू ध्यान ।
अहमिंद्रह थयुए । नुमु भव भयुए ।। २६ ।।

सागर तेत्रीस आय । त्याहा एक हस्तनी काय ।
सुख अनत मिए । देवन कर नमिए ।। २७ ।।

शेष आयुषूं जाण । पण्मासनूं प्रमाण ।
इन्द्र अवधि लहिए । धनद प्रति कहिए ।। २८ ।।

भो भो धनद कुमार । जिहां तीर्थंकर अवतार ।
द्वारावतीइं हसिए । त्रिभुवन उल्हसिए ।। २९ ।।

श्लोक

अभांतरे प्रविक्ष्यामि शृण्वतु भविक व्रजाः ।
सूरीपुरे चयेज्जातं तत् किंचिदुच्यते मया ।। ३० ।।
कृष्णेन महता राज्ञा हतः कंसो महाभटः ।
तस्माज्जातं महद् वैर छोर जरासधि महीभुजा ।। ३१ ।।
जमातुरपिता वैरधृत्वातः करणेमहत् ।
सर्वं सैन्या वृतस्तस्माच्चलितोयादवोपरि ।। ३२ ।।
वासुदेवादि कैर्मूपै.नगराच्च पलायितं ।
जरासधि भवेन्नैवा लोकाः शष्टपि निर्गतान ।। ३३ ।।

फागु

आहे जरासधि तिहां आव्युए ल्याव्युए कटक बहूत ।
नगर विलोकीय पेरवीयशून्य सुचेल पहूत ।। ३४ ।।
आहे गोत्र देव्यांयि मायामयी वृद्धा तणु लेई ।
रूपा विविध प्रकारि ए प्रीछवी पाछुएवालीयु भूप ।। ३५ ।।
आहे यादव माधव सहित पहूत समुद्रनि तीर ।
नक्र चक्र युत गर्ज करता दीसइ व नीर ।। ३६ ।।

आहे रम्यप्रदेशनि निरखिए परखिए अति मनोहरा।
विविध वनस्पति देखता पेखता हर्ष अपार ॥ ३७ ॥

आहे वाडीय व्रावीय कूप तडाग तणु नवि पार ।
मधुकर कोकिल हंस मयूर करि किंगार ॥ ३८ ॥

आहे तास तमाल खजूरि एलच्छा केरा वृक्ष ।
चंपक चंदन सरल तरु केरा बहुवृक्ष ॥ ३९ ॥

आहे किं सुक करणीय तरणीय कदली तणा जिहावृंद ।
माधवी नागलता शुभमंडपस्यशि चिंद ॥ ४० ॥

आहे तम उपकंठिए त्रिविध प्रकारि वाजीवाय ।
शीतलमंद सुगंधि किरि दह दिशिना ठाय ॥ ४१॥

अढीउ

एव विध शुभ ठाम सुप्ति दीठु ताम ।
मनशू चिंतविए । रहां वसवू हविए ॥ ४२ ॥

वेलंधर जे देव । करी तेहनी सेक ।
प्रोषध त्रय धरीए । दर्भ शयन करीए ॥ ४३ ॥

पुण्य तणि सुपसाइ । जिहा हू तु नरराय ।
गोतम आवीयुए । यदु मनि भावीयुए ॥ ४४ ॥

जो अण बार प्रमाण । जलधि उसारयू जाण ।
इंद्र सीख लहीए । धनद आवि सहीए ॥ ४५ ॥

मांडी रचना सार । कनक तणु प्रकार ।
द्वारा वती वसीए । इंद्रपुरी जिसीए ॥ ४६ ॥

रास

गढमढ मंदिर पोलि पगारा, ऊपरि कनक कलस झलकारा ।
सारा सुजन वसति रे ॥

सात त्रण नव खण आवास, निरखता मन अति उल्हास ।
ऊपरि ध्वज लहि कांति रे ॥ ४७ ॥

एक वीस खणनु अवास, नारायणि कीधु तिहांवास ।
वास्यु सहू परिवार रे ॥

समुद्र विजय राजा तिहां वसीया, सुन्दर नयर देखी उल्हासीया ।
हसिया हृदय मझारि रे ॥ ४८ ॥

धनदि द्वारावती पुर आवी, रत्नवृष्टि दिन ऊठ करावी ।
जाणी निर्द्धन लोक रे ।

जिन चैत्या लेपूजा करता, एक मनीयिन गुण उच्चरंता।
मन ना जायि सोक रे ॥ ४९ ॥

फाग

आहे राज्य करि तिहां नरपति समुद्रविजयमहाराज।
सर्व कला गुण मंडित यादव प्रणमि पाय ॥ ५० ॥

आहे निज सुप्रतापिए दडए खडए बहू भूपाल।
दान देतां यश वाधिच साधिए देश विशाल ॥ ५१ ॥

आहे रूप अनोपम सोहिए मोहिए मानिनी वृंद।
सभा मंडप मांहि विसतु दीसतु जाणे इंद्र ॥ ५२ ॥

आर्या

वदन विनिर्जित चंद्रोरूप विशेषण निर्जिता नंग।
गव्या रंजित हंसो यदुवंशे केतु कल्योभुव ॥ ५३ ॥

फागु

आहे तस पटराणीय जाणीय सयल सतीय मझारि।
शिवा देवी सुखकरणीय तरणीय अतिमनोहारि ॥ ५४ ॥

आहे सकला भरण विभूषित दूषित पंच मिथ्यात।
देव पूजा दिन दिन करि मनि धरि धर्म्मनी वात ॥ ५५ ॥

आहे सयल विचार सुजाणि वखाणिए जिनवर धर्म्म।
पर अपवाद न भाषि न दाषिए कहिना मर्म ॥ ५६ ॥

आहे जीव दया प्रतिपालिए टालिए दुर्जन संग।
इंद्र समान सु आसन दीठिए ऊपजि रंग ॥ ५७ ॥

श्लोक

एकस्मिन्नंतरे राज्ञी सुप्ताशय्या तले शुभे।
याम त्रये गते पश्यत् स्वप्नान् षोडश सम्मितान् ॥ ५८ ॥

नागोक्ष सिंह कमला कुसुम श्रगिंदु बालार्क मत्स
कलशा जश रोत्रु रासीन्।
सिंहासनामर विमान फणींद्र गेह सद्रत्न राशि
शखिनो जिन सूर पश्यत् ॥ ५९ ॥

वाते प्रभात समये शिवादेवी शुभानना।
स्वप्नांतिसहसाप्येप जागरीतपुण्य भागिनी ॥ ६० ॥

ध्वन प्राभातिकैं सूर्यैः पठन्मागध निःस्वानिः।
ततः प्रोत्थायतल्पास्यातं स्वांगस्य भूषणं ॥ ६१ ॥

फागु

आहे तत्क्षण ऊठीय बिसीय प्रणमीय जिनपदसार ।
दु,ख निवारण तारण हृदय घरी नवकार ॥ ६२ ॥

आहे वस्त्र विभूषणधारीय सारीय साथि नारि ।
चालीय स्वप्न फलाफल पूछवा सभामझारि ॥ ६३ ॥

आहे समुद्र विजय नृप विठुए हीवुए जाणे अनंग ।
राणी शिवादेवी आवती देखीयधुमनरग ॥ ६४ ॥

अर्द्ध सिंहासन दीधुं ए सीनुए शिवादेवी काज ।
कर जोडी इम वीनवि वचन सुणु महाराज ॥ ६५ ॥

पश्चिम रातिमि दीठाए सोल स्वप्न शुभ जाण ।
कृपा करी मुझ ऊपरि एहनूं करु वखाण ॥ ६६ ॥

इंद्र गजेंद्र समान नाग पेख्युमदांविष्ट ।
श्वेत गवेंद्र मृगेंद्र रमा पुष्प मालमि दीठ ॥ ६७ ॥

चंद्र सूरिज मत्स युगल विपुल घट युग्म सुसार ।
विमल कमलगण मंडित सरोवर समुद्र अपार ॥ ६८ ॥

वष्टर विश्व विमोहन अमर विमान उदार ।
नाग भुवन भलुं पेखीयूं रत्न राशि मनोहारि ॥ ६९ ॥

निधूम पाक निर्म्मल सोल स्वप्न विचार ।
कहु मुझ आगलि स्वामीय काम रूप अवतार ॥ ७० ॥

श्लोक

शिवादेवी वचः श्रुत्वा प्रावाच भूपतिस्तदा ।
स्वप्नानीमानि जानीहि अपूर्वान हेश्वरानने ॥ ७१ ॥

स्वप्नां दर्शना देवां तव पुत्रोभविष्यति ।
त्रैलोक्य दीपको राज्ञि तीर्थं कर्त्ता जगद्गुरुः ॥ ७२ ॥

एतद्वाक्यं समाकर्ण्य शिवा देवी शुभानना ।
संतुष्ट मानसाजाता यथा चंद्र मसांः बुधि ॥ ७३ ॥

फागु

आहे राय वचन श्रवणे सुणी गृह भणीगै शिवा देवि ।
देव पूजा दिन दिन करि अनुसरि श्री जिन सेवं ॥ ७४ ॥

आहे इंद्र आदेश लही करी आवीय छपन कुमारि ।
जय जय शब्द करती धरतीय प्रेम अपार ॥ ७५ ॥

आहे अप्ट अंगार धरि अष्ट आदर्श सुजाण ।
अष्ट उपरि छत्रह है धरि जाणेय अभिनवा भाग ।। ७६ ।।

आहे सारीय नारीय ऊपरि अष्ट चमर ढलति ।
अपर कुमारीय सवीय विविध परि पालति ।। ७७ ।।

आहे पाणीय छाणीय अर्पिए केतीय देवि ।
पट्टकूल वर वस्त्र आगलि धरि लेडी हेवि ।। ७८ ।।

आहे अपर देवी घर भूषण दूषण रहित विशाल ।
पहिरावि देइ आखडी राखडी केतीय बालि ।। ७९ ।।

आहे वागि विचक्षण तत्क्षण देवीग गर्भ सोधति ।
डीणी परि देवीय सेवीय राणीय पासि रहति ।। ८० ।।

आहे निर्म्मल वार उदारए कातीय शुदि छट्ठिसार ।
जायत विमान थी चकीयनि ऊपनागर्भ मझारि ।। ८१ ।।

अ हे राणी शिवादेवी हरखीय निरखीय छपन कुमारि ।
निज निज चिन्ह करीयनि जाण्यु जिन अवतार ।। ८२ ।।

आहे इन्द्र आदेशह पामीय धनद करिधन वृष्टि ।
कोटि साही दस दिन प्रति जो ताए थापि सतुष्ट ।। ८३ ।।

आहे रत्न सुवर्ण गधोदक पुष्प विमिश्रित जाण ।
पचाश्चर्य एणी परिमास ते नवह वरवाण ।। ८४ ।।

श्लोक

गर्भस्थेन जिनेनापि कष्टनाकारिर्कहिचिन ।
शिवादेव्या सुरुपाया: पद्मिन्यास्थित भगवता ।। ८५ ।।

एकाक्षर निरोद्य चद्वक्षरं काव्य मेवच ।
लोमानि प्रेनि लोमच देवीभि: पृष्य तेप्यमा ।। ८६ ।।

यत् पृष्ठं सुरदेवीभि: तत्सर्वं कथित तया ।
सुशास्त्राणां रहस्य च गर्भस्थार्हन प्रभावत: ।। ८७ ।।

अढीय

पूरण्या नव मास । त्रिभुवन मनि उल्हास ।
जिनवर अवतरयाए । देव हर्ष करयाए ।। ८८ ।।

शुभ नक्षत्र शुभवार । श्रावण शुदि छाडमार ।
नेमि जिनेश्वरए । जन्म्या सुख करुए ।। ८९ ।।

द्वारावती मझारि । उत्सव हुइं अपार ।
गूडी उछलीए । लहिंकि निर्म्मलीए ।। ९० ।।

चतुर्गिण कायज देव । आव्या करवा सेव ।
वाहन अनुसरिए । भाव हृदय धरीए ॥९१॥

रासु

शिवा देवी राणी जिहां हूती । इंद्राणी तस पासि पहूती
सूती दीठी ताम रे ।
कर संपुह अपणा करीनि । दिव्य वस्त्र आगलि धरीमि ।
बोलि तस गुणं ग्राम रे ॥९२॥

भक्ति भावना मनशू आणी । स्तवन वाक्य बोलि इंद्राणी
राणी तूं जगि माहि रे ।
तेज पुंज पुत्र हंति जनम्यु । इंद्रादिकदेवे जेह विनम्यु ।
त्रिभोवन जस आराहि रे ॥९३॥

निर्म्मल नयणे जिनवर निरखी । निजपाणि लीधुं अति परखी ।
हरषी हृदय मझारि रे ॥९४॥

राणीनिमायामयी निद्रा । बालकम्यूं क्यू करी शुभमुद्रा ।
रूपि जांणे मार रे ॥९५॥

सचीयिं बालकपाणिधरीनि । बक्ति जय २ शब्द करीनि
पुहुती इंद्र समीप रे ॥९६॥

इत्यादिस्तुति वाक्य कहीनि । जन्म महोत्सव सपल लहीनि
मेरु प्रति चालंति रे ।
ऐरावण ऊपरी विहि विठा । इंद्र जिनेश्वरसहूए दीठा ।
लीलायिमा हालती रे ॥९७॥

फागु

आहे विक्रणा र्‍धिनिपाईयु इद्रि ऐरावण सार ।
लक्ष योजन उच्चेस्तर वदन तं शत मनोहार ॥९८॥

आहे वदनि वदनि अष्टदत दंति एक सरोवर चंग ।
सरोवर मांहि कमलिनीयिं पच वीत क्षत सग ॥९९॥

आहे कमलिनी कमल कमल त्याहा सवासुजाण ।
कमल कमल शुभपाखडी एक सु आठ वखाण ॥१००॥

आहे पांखडी पाखडी उपरि नृत्य करि देव नारि ।
सर्व पिंडी क्षत तेह सत्ता वीस कोडि उदार ॥ १०१॥

आहे एह्वा ऐरावण ऊपरि बिठाए शोभि जिनेश ।
नाग लक्षण उदया चलि जाणेय ऊग्यु दिनेश ॥१०२॥

माहे रीणी पिरि उत्सव करतांए धरतौ आनंद अपार ॥
मेरु शिखिर पाडुक वनि पांडुक शिला उदार । ॥१०३॥

तेह ऊपरी जिन थाप्याए व्याप्याए निर्जर वृंद ।
क्षीर समुद्र थूं पाणीय आणीय ढालि इंद्र ॥१०४॥

एक सहस्र अष्टाधिक कनकमि कलश विशाल ।
चंपक जाईय जूईय कमलनी वीटीयमाल ॥१०५॥

जय जय शब्द करंता धरता ए भाव अपार ।
नदवृद्ध जिनस्वामीय मुक्ति तणा दातार ॥१०६॥

श्लोक

स्नापयित्वा जिन तत्र देवानौ निकरैस्तदा ।
महोत्सव सहस्रं चक्रियते हर्ष पूरितैः ॥१०७॥

अरिष्टं नेमि नामेद दत्त वृंदारक व्रतिः ।
भवाब्वौ तारणे पोत स्वर्ग मुक्ति सुख प्रद ॥१०८॥

सौधर्म्मेद्रागना नेमि भूषायित्वा विभूषणैः ।
मानद मान साजाता पार्वणेंद्र समानना ॥१०९॥

सौधर्मे द्रारिकैर्देवै जेटियित्वा निजा न करान ।
नेमे स्तुतिः समाव्धा तदा रोपित मानसे ॥११०॥

जय देवाधि देवस्त्व जयस्त्व मोह मर्द्दनः ।
जय दोषारि निर्मुक्त जम कामोभ केसरी ॥१११॥

नमस्तुभ्यं जिनेशाय ससार शत्रवेनम. ।
मुक्त्यगना सुकांताय कर्म्म मल्ल विनाशने ॥११२॥

भुवनत्रय पूज्याय नमः सुगतये निश्र ।
नमः कलक मुक्ताय नमस्तुभ्य सुखात्मने ॥११३॥

एव विधौ स्तुतिकृत्वा जिनमादाय देवराट ।
ऐरावणं समारुह्य द्वारावती मगाल्लघु ॥११४॥

नृपांगणे जिनंस्थाप्य कृत्वा नद सुनाटकं ।
स्वालय प्रत्य गुर्देवाः स्वस्त्रीकाभक्ति पूरिताः ॥११५॥

फागु

माहे जिम गगनांगण वाधिए बीज तणु शुभ चंद ।
तिणि परिराय गृहांगण वाधिए नेमि नरिंद ॥११६॥

माहे लक्षण पूरित अंग अनग समान सुरुप ।
देव कुमर माहि खेलिए गेलिए नेमिसुभूप ॥११७॥

आहे विमल कमलदल लोचन मोचन भव बंध पाश ।
समुद्र विजय सुत निरखिए हरखिए मनु उल्हास ॥११८॥

आहे भमि युगल अति सोहिए मोहिए अक्षर वृंद ।
जाणीय कामनु चापए व्यापिए मोह नरेंद ॥११६॥

आहे निर्धूम दीप शिखा सम नाशाए निर्मल जाण ।
बन जिशा दाडिम कलीसुर मिली करि वखाण ॥१२०॥

आहे भुजदंड अति सुंदर मदर सम विक्रम्म ।
चरण कमल भवन त्रय पूजितधिवहु शम्मं ॥१२१॥

आहे दिव्य विभूषण आणी इंद्राणी पहिरावि सार ।
मस्तकि मुकुट अनोपम कर्णां कुंडल मनोहार ॥१२२॥

आहे रत्न जडित करि सोहिए मोहिए अंगद चग ।
कठि अनोपम मुक्तिज केरए हार उत्तंग ॥१२३॥

आहे कनक तणी करि कडली ते वडलीय घालि रगि ।
ईणी परिभूषणभूषित सुंदर दीसि अंग ॥१२४॥

अढीय

ईणी पिरि नेलि नरिंद । जस सेवि सकल सुरिंद ।
मेल्ही शिसु पणूंए । पाम्यु यौवन घणूए ॥१२५॥

एक दिन नृप गणसार । बिठा सभा मझारि ।
बोलि वल घणाए । निज निज प्रभु तणाए ॥१२६॥

एक कहि सुणि राय । अणिण खड नत
गोवर्द्धन करि । ऊपाड्यु हरिए ॥१२७॥

एक कहि वृत्तांत । जरासंघ कृतांत ।
त्रिणि खंड पतिए । सेवि नरपतिए ॥१२८॥

एक सुभट कहिसार । पांडव बलि उदार ।
कौरव जी पीयाए । पुण्यि दीपायाए ॥१२९॥

एक भूपति कहि इम्म कंसराय महायम्म ।
साध्या देश घणाए । परभूपति तणाए ॥१३०॥

रास

इत्यादिक बहु भूपति केरा । वरकाण्यां बल नवानवेरां
यादव हूर्ष्या जाणा रे ॥
तव बलभद्र ईणी पिरि बोलि ।
विक्रम नहिं नेमीश्वर तोलि ।
परनां किश्यां वरवाण रे ॥ ३१॥

वन माहि गजतो बल बांकि ।
क्रोध चढ्या मारवा जताकि ।
जां मृगेंद्र नावति रे ।।
तीणी पिरी सहूनां विक्रम जाणु ।
बली वली ते किशां वखाणु ।
हीन पणुं पावति रे ।।१३२।।
इशां वचन नाराय सुणंतु ।
वलत्तं राम प्रति इम भणतु ।
अवगुण तो नेमिनाथ रे ।।
भो हलधर तह्ये इमस्युं भाष्युं ।
राज्य सभां सहूं निर्बल दाख्यु ।
किश्र करूं तस्म साथने ।।१३३।।
कोप चढ्यु नारायण उठ्यु ।
जाणो यम राजा ए रुठ्यु ।।
वाली सवलु काछ रे ।।
कठि उठि नेमीश्वर तोरु ।
विक्रम जायू नवूं नवेरु ।
वाली एह्वो वाच रे ।।१३४।।
वलशू नेमि जिनेश्वर जंपि ।
राडि करंता उत्तम कपि ।
ऐ गोपाल ज काम रे ।।
बिष्णुरा किठो चरण ज मोरु ।
उचेलीमंक हे ठेरु ।।
सवल पणूं तुझ नाम रे ।।१३५।।
नेमि वचन सुण तु पुरुषोत्तम ।
चरणे आवी वलगु उत्तम ।
(चरणे आवी वगु उत्तम)
जपाडि वहु वार रे ।।
मेरु तणी परि निश्चल चरण ।
नेमि कुमर मुझ राखु सरण ।।
तव हुउ जय जय कार रे ।।१३६।।
पुन रपि बोल्यु नेमि जिनेश्वर ।
एक वचन अवधारु नखर ।
इचो गुनीम विशाल रे ।।

पाछी वालु भु तह्यि स्वासी ।
नु तह्य निमि सीसज नामी ।
उठ्यु देरी फाल रे ।।१३७।।

धाई वलगु जव ग्र गुलीइं ।
उन्नली तोल्यु मन रलीइं ।
नेमीश्वर जगि जाण रे ।।

नंदीवृद्ध तू जिन जगदीश ।
यादव देवे नामी सीस ।
बोली जय जय वाणि रे ।।१३८।।

फाग

ग्राहे नेमि तणूं बल निरखीय हरखीया कृष्ण नरेंद ।
धन्य यादवकुल ग्रह्य तणू जिहाँ श्रीय नेमि जिणिंद ।।१३९।।

सवल नेमीश्वर जाणीय ग्राणीय मन माहि द्वेष ।
येय निमित्तयपासिए पूछ्यु वृत्तांत निःशेष ।। १४०।।

ग्राहे वसतमास तव ग्रावीयु भावीयु हृदय मझारि ।
वक पालक तव ग्राव्याए ल्याव्याए पुष्प प्रकार ।।१४१।।

ग्राहे मूंकीय कृष्ण ग्रागिल फलफूल समूह विशाल ।
पाय नमी कहि स्वामीय ग्राव्यु वसत ए काल ।।१४२।।

ग्राहे वस्त्र विभूषण दीध्यांए सीध्याए वनेश्वर काज ।
ग्र त.पुर जन तेडीय चाल्या कृष्ण महाराज ।।१४३।।

ग्राहे समुद्रविजय वसुदेव नरेश्वर पुहुता साथि ।
हलधर पूठि सचरया तेडीय श्री नेमिनाथ ।।

ग्राहे सोलसहस्र गोपांगना कृष्ण साथि मनोहारि
ग्राठ सहस्र ग्रती भली हलधर पूठि नारि ।।१४४।।

ग्राहे समुद्र विजय शिवादेवीयसाथि सोहियम इंद्र ।
विमल वदन वसुदेव सुसेविए स्त्री जन वृंद ।।१४५।।

रासु

यादव सघला टोलम लीया ।
वन क्रीडा करवा भल फलीया ।
देखी वन सु विशाल रे ।।

शीतल मलयानिल तिहां वाया
सरस विष्णुना फाग गवाया ।
ग्राया किंशुक नाल रे ।।१४६।।

चंपक जाई जूई कलयो ।
वालु बेल केवडा रलीया ।
फलीया श्री सहकार रे ॥१४७॥

श्रीफल ताल तमाल लवंग ।
नालिकेरी आवी मनरंग ॥
एला अतिहि सुरंग रे ।
सूकडि केसरना जिहां
वृक्षा करि सुगंध दिशाना पक्ष
हरि चदन उत्तंग रे ॥१४८॥

देवदारु कृष्णागर करणी ।
दाडिम बीजुरी अति तरणी ।
कमरख कदली वन्न रे ॥
वड पिप्पल निंबह अति निर्म्मल ।
पाडल बुलसरीना परिमल ।
जोता हरख्यां मन्न रे ॥१४९॥

माधवीना मडप उतंग ।
नाग लता दीसि बहु चग ।
सुदर सरस अशोक रे ॥
कोकिल वापीडा प्रियु जपि ।
सुणतां विरही जन मन कंपि ।
हरष्या यादव लोक रे ॥१५०॥

श्लोक

इत्थंगुण वनहृष्ट्वायादवो हर्ष पूरिवा ।
कृष्णादयोमहीनाला क्रीडां कर्त्तु समुत्सकाः ॥१५१॥
विष्णोरा देशमासाद्य बलि देवादाया नृपः ।
पुष्पभूता गता सर्वेसस्त्रीकाः क्रीडि तवान् ॥१५२॥

फागु

माहे सकल विमल गुणध्धारीय मांहि नरेश ।
मनरंगि क्रीडा करि पहिरीय उत्तम वेश ॥१५३॥
माहे चंदन वासी आछो कली मोकलो क्रीडि नारी ।
गान करि मधुर स्वरि अनुसरि देवमुरारि ॥१५४॥
माहे विविध विनोद हंसा करि मनिघरिप्रेम अपार ।
दिव्यवसने वरधारीय नारीय पहिरि शृंगार ॥१५५॥

आहे कर्ण्ण युगलवर ओटीय मोटीय पहिरीय रंगि ।
तिलक त्रिभुवन सोहिए मोहिए राय अनग ॥१५६॥

आहे नासिकाप्रमोतीय प्योतिए जीप्पा भाण ।
मणिमय हार उदार हृदय कमाल शुभ जाण ॥१५७॥

आहे हस्तयुगल मल रहित अनोपम अंगद बद ।
रत्न तणी रसना भली कटि तटि सुकृत सग ॥१५८॥

आहे रमझम करतां ए नूपुर चरण्ये कृत झणकार ।
चूआ चदन अतिमहमहि गहगहि वनहमझारि ॥१५९॥

आहे नेमि जिणिद नरेंदितया हारम षा तेडया जाण ।
खडो खली मांहि क्रीडा ए व्रीडाए रहित प्रमाण ॥१६०॥

श्लोक

राज्ञः सर्वाः समाहूय विष्णुनाक्षुद्र चेनमा
इहगिन्द वचन शक्त कौटिल्य' कोटिपूरित ॥१६१॥

भवतीमिरयं नेमिरुद्वाह् वचन चर ।
यद्य थांगी करोत्यैव तवा कर्त'व्य मित्यपि ॥१६२॥

दत्वा शिक्षाएता तासा ईहशीगतवान हरिः ।
गोपांगनाभिरा रव्व क्रीड नेमिना सहा ॥१६३॥

अढोइ

नेमीश्वर जिनराय । रमि ते राणी माहि ।
हासां बहू करिए । उदकं छांटी भरिए ॥१६४॥

कहि रुक्मिणी सुणिवात । भो देवर तुझ बहू ख्याति ।
एक ढोल खरुए । तम्हे अंगी करुए ॥१६५॥

तुझ बांधव बहु नारि । तू पुण बाल कुमार ।
इम युक्त नहिए । स्त्री परण्यू सहीए ॥१६६॥

स्त्री नरनु शृंगार । स्त्री ससार सुसार ।
स्त्री उत्तम सहीए । इम जाण्यु सहीए ॥१६७॥

बलतूं नेमि कुमार । ऊतर देइ अपार ।
सुणु गोपागनाए । जिसी हुइ अंगनाए ॥१६८॥

विट पूरित जस अंग । ते साथि सारग ।
मूत्रं गृहांगणुए । स्यू कहीइ घणुए ॥१६९॥

जीव राशि भूत देह । ते साथि सास्नेह ।
नरकनीस्स रहीए । मन मांहि वैरहीए ॥१७०॥

एह्वी जाणु नारि । शूं कहीइं वहु वारि ।
कुटिला जाणयोए । मनमाहि आणयोए ॥१७१॥

पुन रपि जपि नारि । सुणु ते नेमि कुमार ।
एक विवाहीइए । सवल न थाईइंए ॥१७२॥

वलि करी एक नारि । परणे वसु एक द्वार ।
अह्म कहचू की जीयिए । भवफल लीजोयिए ॥१७३॥

लाजि नेमि कुमार । तव भाण्यु नु कार ।
राणी रीझीया । हेयिवूझीयाए ॥१७४॥

क्रीडा करी जिणंद । हेयि धरी आणंद ।
वाहिरि निसरिए । स्त्री वाहिं धरिए ॥१७५॥

श्लोक

क्रीडा कृत्वा कुमारोपि मुक्तावस्त्रं जनार्द्रंत ।
भ्रातृ जावा मुवाचेद सगर्वा कुटिलासयां ॥१७६॥

मद्वस्त्रं भ्रातृजायेव विजल कुरुशीघ्रत. ।
तयोक्त भोजिनाधीश मावदपचर्निर्दिति ॥१७७॥

तस्याह मादा जलार्द्रं जल वर्जित ।
करोमि नाग शय्या या करोति सयन हियः ॥१७८॥

सारिंग धनुरारोप्य पाच जन्य चपूरयेत् ।
तस्याह वसन नीत्वा करोमि जल वर्जितं ॥१७९॥

रासु

ऐसां वचन सुण्या जिनदेव ।
आयुध शाला यिग्या हेव ।
पूर्यु शख विशाल रे ॥
नाग सय्या आरोहण कीधू ।
चरणां युष्टि काम्मुंक लीधूं ॥
आराहयूंत तत्काल रे ॥१८०॥

शंख शव्द कामुंक टंकारव ।
सुणतां केका कृतके कारव ।
जाण्यू गाज्यु मेघ रे ॥
अति असख्य सायर खलभल्लीयां ।
सेख नाक नाग मह चलीया ।
रलीया पर्वत श्रृंग रे ॥१८१॥

सभा मांहिथु कृष्णह ऊठ्यु ।
मुझ ऊपरि वीज्जु कु रूठउ ।
झुठु नेमि कुमार रे ॥
वेगि आयुधशाला पुहुतु ।
कोपि चड्यु नेमीश्वर जोतु ॥
पाय नमि मुरारि रे ॥१८२॥

स्वामीए किहि ऊपरि रीस ।
इम्म कहीनि नाम्यूं शीस ॥
करी प्रससा तास रे ।
स्त्री ने वचने कोप न कीजि ।
स्त्री वचने उत्तम नवि खोजि ।
स्त्रीय विरोध निवास रे ॥१८३॥

नेमीश्वरनु कोप निवारी ।
दुष्ट वयणे जांबुवती वारि ।
ग्यु तय निज आवास रे ॥
नेमि कुमर नूं वल तिहा जाण्यूं ।
वली वली मन माहि वखाण्यू ।
होउ अति निस्वास रे ॥१८४॥

अथ फागु

आहे एक दिवस शिवादेवीय पासिए ग्या कृष्ण राय ।
पाय नमी इम वोलिए नेमि विवाहु माय ॥१८५॥

आहे वल तू शिवा देवी जंपिए ए तम्ह वांधवमार ।
जांन हुइ परणावु एतां तह्मे लाज अपार ॥१८६॥

करु विवाह अनोपम जाणीयि भुवनमझारि ।
कन्या माग्रु अति रूअडी खोडन हुइं लगार ॥१८७॥

श्लोक

शिवादेवी वचः श्रुत्वा वभूवहर्षितानन: ।
वाह्य रूपेण कृष्णोपि न त्वोत्थित महा भुजः ॥१८८॥

सर्वेषां भू भुजा मध्ये उग्रसेनोग्रणी महान् ।
तस्या सीद्धारणी राज्ञी राजमती तितत्सुता ॥१८९॥

गत्वा कृष्णेन तद्गेहे याचिता राजिमत्यपि ।
नेमये दीपतां राजन् तव पुत्री विचक्षणा ॥१९०॥

विष्णु वाक्य समाकर्ण्य प्रोवाचभूपतिस्तदा ।
रत्नकांचनयोर्योगिक: पुमान्नेच्छतिध्रुव ॥१९१॥

नरायणोग्रसेनाभ्यांदत्वाचि तिंक परस्परं ।
विवाह निश्चय कृत्वा समागम द्गृहं हरिः ॥१९२॥

फागु

आहे नेमि विवाह सही करच मनि धरच हर्ष अपार ।
समुद्र विजय शिवादेवीय आनंद्या वहू नारि ॥१९३॥

आहे श्रावण मास विवाह महूर्त्त लीयु मनिरंगि ।
जाणी द्वारावती मांहिय घरि घरि उत्सव चंग ॥१९४॥

आहे रचीयाए मडप मोटाए खोटाए न हीयलगार ।
ऊपरि कनकमि कलश ए विलशिए लछी उदार ॥१९५॥

आहे पाखिल मोतीयमाल विशालए ध्वज लहि कति ।
घुघरिका घम घम करि सुस्वर घंट वाजति ॥१९६॥

आहे चीर चन्द्रोपक वांध्या सांध्याए पुप्पनाहार ।
रत्न जडित जिहां तोरण कोरणी सहित उदार ॥१९७॥

आहे कंकोतरी दिहु दिशि लिखी मोकली देश मझारि ।
सगासहू तह्य आवाय्या ल्यावय्यो निज परिवार ॥१९८॥

आहे यादव सघलाए मलीयाए कलीयाए वांछित काम ।
सेना चतुर्विध एकठी दीसिए अति अभिराम ॥१९९॥

आहे चालीय यादव जान सुमान हुइ सहू कोइ ।
अवधि उल्लघीय चालीनु जाणो समुद्रए होइ ॥२००॥

आहे नेमीश्वर रथि विठाए दीठाए सवि शणगार ।
रूप अनोपम सोहिए मोहिए देव कुमार ॥२०१॥

सकलाभरण अलंकरघा परवरचा यादव बृंद ।
एक ऊपरि छत्रह धरि जय कहि देव देवेंद्र ॥२०२॥

मस्तकि चामर ढालिए आलिए न हीय लगार ।
हय गय रथ पदादिक तेरनु लाभिन पार ॥२०३॥

आहे हय रेखा रव आरव गजनेन सुणीयि साद ।
रथ समरथ वहू दीठिए लागु विमान शूं वाद ॥२०४॥

कटक चालि दिहु दिशि जाणो सायरमेल्ही मर्यादि ।
वाजित्रह वहू वाजिए जाणेय मेघ निनाद ॥२०५॥

आहे माधव यादव दीणी परि पुहुता जीर्ण्ण प्राकार ।
नेमि जिनेश्वर हर्षता आव्याए तोरण वारि ॥२०६॥

आहे विमल वदन राजीमती वेगि पहिरीय शृंगार ।
गुखि रही अति हरषिए निरखिए निज भर्त्तार ॥२०७॥

आहे सखी मागिए वधामणी सोहामणी राजिलनारि ।
हीर चीर तस आपिए आपिए विविध शृंगार ॥२०८॥

आहे हर्ष भरी राजमती नेमि जोइ जिणी वार ।
दयावंत जिन जाणीय पशूए कीधु रे पोकार ॥२०९॥

तव जिन सारथी नि कहि किहि कुण कारण एह ।
जीव घणाए सा मेलीया विविध प्रकारना देह ॥२१०॥

बलतूंए सारथी भाखिए दाखिए सत्य वचन्न ।
गुर वहो सितह्म तणु जीव हणी शिर तन्न ॥२११॥

पुन रपि जिनवर जपिए कपिइंए मोरु अंग ।
धिग पडु रीणि परणेविए धिग पडु स्त्रीनि संगि ॥२१२॥

स्पंदन था जिन उतरी करि घरी जीवय यत्न ।
छिदीय बधन तेहना लेई मूक्या सहूं वन्नि ॥२१३॥

रथवाली पाछा चल्या खल भल्या यादव लोक ।
पाछाए वालवा आविए करताए मन मांहि शोक ॥२१४॥

आहे माततात निज तेडीय सहू परिवार ।
उत्तम क्षमा सहूं शूं करी मनि धरी वैराग्य सार ॥२१५॥

मूंकी ए मायाए मोह न कोह आण्यु ए लगार ।
टलवल नु सहू मूक्यूंए मूंकीय राजिल नारि ॥२१६॥

आपणपूं रथ चालीय पुहुताए श्री गिरिनारि ।
मारिगि चिंतिए जिनवर धन्य मोरु अवतार ॥२१७॥

धन्य दिवस अभि आज तुला जनुए नहिं काज ।
लेईय सयम निर्मल भोगवि सूं शिवराज ॥२१८॥

मडोउ

तव राजीमती नारि । दुःक्ख करि अपार ।
दैवि शू कीयूंए । मुझनि दुःख दीयूंए ॥२१९॥

पूरवला मुझ पाप । तेहनु हौउ व्याप ।
जीव घणा हण्याए । गुरमि अवगण्या ए ॥२२०॥

फाडी सरोवर पालि । परनि दीधी गालि ।
तेह भणी इमिथयुंए । मुझनि सुख गयुंए ॥ २२१॥

अ वा शिसु मयोग । तेहनु कीयु वियोग ।
मित्थात्वह भजीए । तेह भणीत्यजीएह ॥२२२॥

इम वदती राजलिल । आणी मन माहिं शिल्य ।
निज भुवनि रहिए । दुःख कहिनि कहिए ॥२२३॥

फागु

आहे तव जिन वैरागह धरि परिहरि च्यारि करवाय ।
लोकातिक सुर आवीया भावीया प्रणमि पाय ॥ २२४॥

आहे लोकातिक सुर जिनवर प्रति शुभ वोल्या वाणी ।
दीक्षा तणु एह अवसर सुर वर मांगि माण ॥२२५॥

आहे देवी यादवेय परवरघा जिसहि सावन ठाम ।
लीधुए सयम निम्मलु उच्चरी सिद्धिनु नाम ॥२२६॥

आहे दीक्षा दिवस श्रावण सुदि छट्टि अनोपम जाणि ।
सहस्र महीपति सहित सुसंयम कीधु प्रमाण ॥२२७॥

आहे राजीमती तिहा आवीय भावीय वैराग्यसार ।
चरण नमी जिनवर तणा लीधु सयम भार ॥२२८॥

आहे दीक्षा कल्याणक कीधूं सीधूए भवीयण काज ।
निज निज ठाम पुहुताए देवीय देव समाज ॥२२९॥

आहे नेमि जिनेश्वरि तप करी मनि धरी आतम ध्यान ।
छप्पन मि दिन पामीयूं स्वामीयि केवल ज्ञान ॥२३०॥

आहे ऊपनू जाणीय केवल ततक्षण आव्या देव ।
जय जय शब्द करताए विविध परि करि सेव ॥२३१॥

आहे पचेगाऊ लगि रचीयूं ए समव सरण उत्तंग ।
त्रिण्णि प्रकार अनोपम निरूपम सरोवर चग ॥२३२॥

आहे मानस्तभ अतिरूडाए कूडाए नहीय लगार ।
वापिका वाडीय सुंदर मदर सम गिरि सार ॥२३३॥

मध्य अनोपम वेदीय तेह ऊपरि सिंहासन्न ।
विविध प्रकारनी रचनाए पाखलि झलकि रतन्न ॥२३४॥

आहे तेह ऊपरी चतुरगुल अंतरि बिठा जिनेश ।
निम्मल केवल ज्ञान मि जाणेय ऊरपु दिनेश ॥२३५॥

आहे देव देवेंद्र नरेंद्र आगलि करिए वखाण ।
लोक अलोक स्वरूप प्रकासक अभिनवु भाण ॥२३६॥

आहे चतुर वदन जिनवाणीय प्राणी संबोध्या हेव ।
ज्ञान कल्याणक शुभ करी ठामि गया सहूं देव ॥२३७॥

आहे नेमि तणु परिवार सुसारहयु विख्यात ।
ईग्यारह गणधर हवा जाणिए त्रिभोवन वात ॥२३८॥

केवल ज्ञानीय ध्यानीय पन्नर सहस्रज होइ ।
वेक्रेयक विमलासय सहस्र एकादश जोइं ॥२३९॥

चौद पूरव धरव्या रिसि चतुरपणि जगि जाणि ।
अवधि मुनीश्वर पनर सहस्र तणुं परिमाण ॥२४०॥

नवसिए दश मनः पर्यय आठसि वादी प्रचड ।
च्यालीस सहसए आर्यिका सयम पालि अखंड ॥२४१॥

एक लक्ष श्रावक हवा श्राविका आण्णिज लक्ष ।
श्याम वर्णं जिन सोहिए मोहिए भवीयण पक्ष ॥२४२॥

श्लोक

अथात्र नेमिनाथेपिहत्वा कर्म्माष्टक महत ।
उग्रोग्र तपसा काम सयौ मोक्ष सुखास्पद ॥२४३॥

शिवालय गतोनेमो देशानां विष्टराण्यपि ।
कपितानि प्रभावाच्च तेच्चिन्हावगतं बुधिः ॥२४४॥

अत्युकृष्टं तप. कृत्वा हत्वा स्त्री लिंगमुत्कटं ।
राजीमती सती स्वर्गे संप्राप्ता तपसः फलात् ॥२४६॥

अन्येये मुनयः सर्वे तेप्पगुः स्वर्गं मोक्षयोः ।
स्वस्वध्यानानुसारेण निर्जितेंद्रिय पंचका ॥२४७॥

फागु

आहे काष्टाए संघ नदी तट गच्छ विद्यागण सार ।
सूरिवर विश्वसुसेनए शासन नाशणगार ॥२४८॥

विद्या भूषण तस शिष्य ए दक्ष पणि कृत फाग ।
एक मनां सहू सुणताए भणताए हुइं वैराग्य ॥२४९॥

आहे नेमि जिनेश्वर केरु ए फाग अनोपम जाण ।
पंच दशादिक अर्ण्यसि श्लोक तण्यूं परिमाण ॥२५०॥

श्लोक

वितव्या देवपत्न्या च पार्श्वस्य भुवनेमया ।
विद्याभूषण नाम्नैव रचितोयं वसतकः ॥२५१॥

श्लोक संख्या ३१५ ।।

संवत् १६१४ वर्षे कार्तिक मासे शुक्ल पक्षे ४ चतुर्थ्यां तिथौ भौम दिने लिखितं मिदं पुस्तक जयः ।। श्री काष्टासंघे नदी तट गच्छे विद्यागणे भट्टारक श्री विद्याभूषण तत्शिष्य ब्रह्म श्री तेजपाल पठनार्थं तथा परोपकरार्थं शुभं भवः ।। कल्याण भूयात् । शुभं भवतु ।।

रंग तरंग फागु

नेमिनाथ की कथा को आधार बनाते हुए 'नेमिनाथ नव रस फागु' अथवा 'रग सागर फागु' की काव्य की पद्धति पर 'रग तरग फागु' की रचना तीन खण्डो मे हेमविजय द्वारा हुई है :—

कमल विजय विबुध विबुध मुख्य ।
तेहनो सीस मुनि हेमविजय कहि ।।[1]

हेमविजय की गुरु परम्परा इस प्रकार रही है ।— तपागच्छाचार्य विजयदान सूरि→ हीरविजय सूरि→ विजयसेन सूरि→ कमलविजय सूरि→ हेमविजय ।[2]

रचनाकाल :—हीरविजय सूरि १७ वी शती के प्रारम्भ मे विद्यमान थे । इनकी गुरु-परम्परा का उल्लेख रामविजय की कृति 'शांतिनाथ रास' तथा सकलचँद की 'मृगावती' मे मिलता है ।[3] सकलचन्द्र कृत 'हीरविजय सूरि देशना सुखेलि' और 'साधु कल्पलता साधु वन्दना मुनिवर सुखेलि' से इस गुरु परम्परा की पुष्टि होती है ।[4] इससे सिद्ध होता है कि 'रङ्ग तरङ्ग फागु' की रचना १७ वी शती में हुई होगी । कृति की एक प्रति, जो मुनि श्री पुण्यविजय जी से प्राप्त हुई, उसका लेखन काल चैत्र सुदी १५, सं० १६३१ है, इसके प्रति लिपिकार कृष्णदास हैं ।[5] जो सम्भवतया हेमविजय के शिष्य रहे होगे । सम्भव है स० १६३१ ही रङ्ग-तरङ्ग फागु का रचनाकाल है ।

कृति का तथ्य ।— सस्कृत और हिन्दी में छन्दबद्ध यह रचना मिश्र छन्द-योजना से समन्वित और कथानक-रूढ़ियो की दृष्टि से 'नेमिनाथ-नव-रस फागु' की परिपाटी पर रची गई है । प्रत्येक वृत्त के बाद रासक, आन्दोला, फाग आदि छन्द

---

१. रग तरंग फागु, ४१ ।

२ वही, ३९, ४०, ४१ ।

३ जैन गुर्जर कविओ, तीसरा भाग, खण्ड १, पृ० ७३६ ।

४ वही, पृ० ७७१, ७७२, ७७३ ।

५. सवत् १६३१ वर्षे चैत्र सुदी १५ दने लषत । कृष्णदास लषत ।। पन्थन मध्ये।।
(रग तरग फाग)

आये हैं। जिन भावों की अभिव्यञ्जना कवि ने संस्कृत वृत्तो में की है उसी को व्याख्या शेष छन्दो मे की है।

प्रारम्भ मे कवि ने सरस्वती वन्दना की है। साथ ही सरस्वती के सौन्दर्य-बोध को भी रूपायित किया, परन्तु वह रूपांकन स्थूल और वाह्य होने के कारण निष्प्रभ है। समुद्रविजय और शिवादेवी का परिचय देते हुए कवि ने शिवादेवी के चौदह स्वप्नो का वर्णन किया है। नेमिनाथ के शैशव की क्रीडाओ सज्जाओ का जो सकेतांकन किया है वह मनोवैज्ञानिक तथा अनुभूतिपरक न होने के कारण प्रभावोत्पादक नही है। यद्यपि कवि ने नेमिनाथ के अवयव-सौंदर्य का निरूपण अलकृत शैली मे किया है, परन्तु उसके उपमान परम्परागत है; दूसरे नेमिनाथ नव-रस फागु' से इसके वर्णनो मे साम्य है। कृति गठन और वर्णन-शैली की दृष्टि से ये रचनाएँ एक दूसरे के समीप हैं।

रंग तरंग फागु

कल्याण केलिसदन मदनोन्मदकुम्भिकुम्भ केसरिणम् ।
जगदेकशरणमज्जन धाम्नि नेमिमहमीडे ॥ १ ॥

स्मृत्वा पुस्तकशस्तहस्तकमला श्रीशारदा सारदो ।
नत्वा चात्मगुरुं गुरुं गुणिगुरु प्रज्ञालचूडामणिम् ।
लीलोल्लासि विलास केलि निलय चेतश्चमत्कारकृत्,
कुर्वे रङ्गतरङ्ग सञ्ज्ञामनघं फागं नवं नेमिनः ॥२॥

॥ रासक ॥

सरसति समरसि शमरसि वाणी ।
कविकुलकमलदिणद समाणी ।
जे जगि मांहि वषाणी ॥
करि कच्छपी वजाडइं वीणा ।
नव नव तान मान तस झीणा ।
किंनर नर लया लीणा ॥ ३ ॥

करि ककण मणि किंकणि सारी ।
नयन निरूपम कज्जल सारी ।
सिरुवरि वेणि समारी ॥
हृम णमणि मणि मोती य हारा ।
क्रम कजि झांझर रणझणकारा ।
उगलि झालि झलकार ॥ ४ ॥

सार विशारद जननी जननी ।
सरसति सति सरस वचननी जननी ।
विरचउ रुचि मुझ मननी ॥
हरि कुल कमल मुकुल दिणइंदं ।
शुभकर करुणाकर सुख कद ।
[illegible] नेमि जिणंदं ॥ ५ ॥

॥ अंदोला ॥

भूमि भामिनी भाल भूषण घणुं विशाल ।
नयर सोरीपुरए सोहि सुंदरु ए ॥
अभिनव रतिपति रूप राज करइ तिहां भूप ।
समुद्रविजय वरुरा रूप पुरंदरु ए ॥ ६ ॥

तस पटराणी जाण रूपइ रंभ समाण ।
शिवादेवी गोरडी ए गुणमणि ओरडीए ।
इणि अवसरि जगदीश जीव अमर निशदीश ।
सवि सुख विलसतो रा आयु अपूरतोश ॥ ७ ॥
अपराजित जस नाम परिहरि सुरवर ठाम ।
कात्तिक वदि दिनु ए बहुल बारसी धतृ ए ॥
चविउ ते सुर धन्न शिवादेवी उअरि उपन्न ।
चउद सुपन कह्यां ए शिवादेवी ते कह्यां ए ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥

कुम्भीन्द्रो वृषभो हरिर्हरिवशा स्रक् शर्वरीवल्लभः ।
सूरः स्वर्गपति ध्वजश्च कलशः पद्माकरः सागरः ॥
रम्ये देवविमान-रत्ननिकरे निर्धूमधूमध्वजः ।
स्वप्नाश्चारु चतुर्दशेति वि शिवया दृष्टाः श्रियेसतुव ॥ ९ ॥

॥ फाग ॥

सहि पिहलि परिभमतो मत्तो कुंजर राज ।
वृषभ धवल कंठीख रव वारिय पशु-काज ॥ १० ॥
पुनरपि पेपइ पदिमनी पदिमनि वासिनी देवि ।
कुसुमदाम अवरोहिणी रोहिणीपति निरखेवो ॥ ११ ॥
तमहर दिणयर दीपतउ जीपतउ ग्रहगण कंति ।
धयवर अवर तिहां कणि किंकणि रण झणकंति ॥ १२ ॥
कलश अमल जल पूरिय दूरिय दुरित दुरंत ।
पदम सरोवर हसली हंसलीण जलवंत ॥ १३ ॥
मणि माणिक नो आगर सागर बहु पसरंत ।
देव विमान नुरयण नो रयण नो रंढ महंत ॥ १४ ॥
धूम रहित विश्वानर निरपीय लीला विलास ।
जागिय जगगुरु जननी जननी पूरिय आस ॥ १५ ॥

॥ काव्यम् ॥

एवं स्वप्नवरैरमीभिरघैं संसूचितः श्री शिवा—
देवी कुक्षिसरः सरोजक्षद्दशः श्यामाभिराम द्युतिः।
पञ्चम्या रजनी विराजि रजनी रत्नद्युती श्रावणे,
लेभे जन्म जगद्गुरुस्त्रिजगतामानन्द कन्दाऽङ्कुरम् ॥ १६ ॥

॥ रासक ॥

अंकुरियो जन मन आणंद, जनम्यो जवि जिन जादव चंद, चदन शीतल वाणी।
कंपित मासन दानव शासन, जनम्यो जिनपति भुवन विभासन शासन नायक जाणी ।१७

पचरूप परमेसर वहतो।
सुरवर मेरुशृंगि गहगहतो।
पुहुछो परमाणंदि ॥

जिनवर जनम न्हवणनो उत्सव।
करि अक स्वं तिहा नाटिक नव नव।
दानव युवती वृन्दि ॥ १८ ॥

॥ अन्दोला ॥

वृंदारक ना वृंद पाम्या परमाणंद।
जिनमुप निरसता ए मणि परि परिषता ए ॥
जिननी जननी पास जिन नी मूकी वास।
वासवि सवि गया ए मन्द मी गहगहयाए ॥ १९ ॥

॥ फाग ॥

गह गहो जादव राणि य जाणिय जनम जिणिंद।
घोलइ मञ्जुल मगल मगल पाठक वृन्द ॥
नाचइ चतुर वारांगना अ गना गान करंति ॥
ढम ढम ढोल न फेरी फेरी फेरी खति ॥ २० ॥

घरि घरि उच्छलि गूडिय सूढिय घदनमाल।
तोरण पूरण कलसतो विलसती झाक झमाल ॥ २१ ॥

दुंदुहि प वर गाजइ वाजइ घरि घरि तूर।
यादव सवि तव हरषीय जिन मुख नूर ॥ २२ ॥

॥ काव्यम् ॥

पौरामरैः शौरम्भामिर्दशार्हवरवासवैः।
श्रिया शौरीपुरेणोच्चैः पुरन्दर पुरायितम् ॥ २३ ॥

॥ रासक ॥

उत्सव करी करइ निज काम ।
नेमिकुमार इति अति अभिराम ।
नाम थापना जिन नी ॥

मणि माणिक सीरे स्युं जडिउं ।
पालणडु प्रभु नु न्ह नडिउं ।
घडिउं वर विज्ञानी ॥ २६ ॥

ऊपरि प्रवर झुंबणुं झूवइ ।
तिणि प्रभु दृष्ठि विनोद लक्ष्ूंवइ ।
लूवइं पिक माकद ॥

देव दुष्य ऊपरि ओढणडइ ।
मृदुल तलाइ तलि पोढणडइ ॥
पोढइ तिहां यदुचद ॥ २७ ॥

ऊपरि चतुर चदरुउ मोहइ ।
तिहां पोढया परमेसर सोहइ ।
सोहग गुण जग साखी ॥

अगुष्ठांमृतरस परि पीतो ।
वाधइ जिन दिन दिन दीपतो ।
जीपंतो सुरसाषी ॥ २८ ॥

खडी दडी मणि सुघडी गेडी ।
रमलि रामे कडला जिन जेडी ॥

तेड़ी माय क्रिडावइ ।
जिननि मुखि देती वाकडली ॥

जडिइ जडी सुघड वांकडली ।
कडली पगि पहिरावइ ॥ २९ ॥

॥ अन्दोलन ॥

पिहरावइ परभात नव नव भूषण मात ।
शिर आरोपती ए टोपी ओपती ए ॥

जिननी करी उच्छग करती नवं नव रग ।
मातर माडती ए रमति देपाडती ए ॥

पगि घूघर घर घमकार कानि कुंडल झलकार ॥
यदुकुल चन्दनो ए अमिय नो विदला ए ।

नान्ही नेमिकुमार चालइ चलणि लगार।
बालक परिवर्यो ए सकल कला वर्यो ए।। ३० ।।

।। फाग ।।

वर मुगताफल परघल गल कंदल तसहार।
घर जदु घरि परिभमतो रमतो राम ति सार।। ३१ ।।

मात मात ऊचरतो करतो परमाणंद।
ऊजल पषि गुण साधइ वाधइ जिन जिमचन्द ।। ३२।।

मा अलिगइं रगि स्युं अगि-सलूणो वी९ ।
यादद्रु जन मनरजन अंजन श्याम शरीर ।। ३३ ।।

।। श्लोक ।।

रमणीय गुणश्रेणि रमणीजन रञ्जनम्।
क्रमेण कलयामास पावन यौवन जिनः ।। ३४ ।।

।। रासक ।।

जिन क्रम कमल मुकुल दल कोमल।
सरल अगुली नख वलि निर्मल।
श्यामल रोम सराहैं ।।

साथल कदली थंभ मनोहरि।
कटि तटि लक पराजित केसरि।
सरस सुकोमल बाहु ।। ३५ ।।

पृथुल हृदय श्रीवत्स विभासइ।
अरुण पाणि पुट पदम प्रवासइ।
सासइ जित घनसार ।। ३६ ।।

मिली कली जिम हृद दाडिमनी।
दंत श्रेणि सोहइ तिम जिननी।
जननी मन सुषकास ।। ३७ ।।

।। अ बोला ।।

अरुण अधर झलकति वर विद्रुमनी कति।
बांकडी भमहडीए जेहवी घणु हडीए ।।

कंबु विडबक कंठ रवि जीपिय कलकंठ।
पुनिम चन्द लोए मुख नो मटक्र लोए ।। ३८ ।।

कज्जल जल रोलब श्यामल बाल प्रलब ।
अष्टमी शशिह रूप भाल मनोह (र) रूप ॥
अति उन्नत बिहु षंध सम चोरस तनु वध ।
पकज पापडीए सोहि आषडीए ॥ ३९ ॥

॥ फाग ॥

आषडी अति अति अणिआलि अकालीय कीकी जास ।
'तरुणि म अरुणि म जीहडी लीहडो न हि जगि जास ॥ ४० ॥

नासावश निरूपम उपम जस सुक चांच ।
रूप अनोपम जग गुरु गुरु उपम पल षांच ॥ ४१ ॥

॥ काव्यम् ॥

ललितमूर्त्तिरुदारमुखद्युति—
प्रहसितामृतदीधिति दीधतिः ।
अजनि नेमि जिनः श्रितयोवनः
स्मर इवापर मूर्त्तिरभीमहक् ॥४२ ॥

॥ रासक ॥

हवि अवसरि अवतरिउ वीर मथुरा नगरी साहस धीर ।
धीर धारि लघु भाइ वसुदेवि ते सुत सुख कंद ॥
आप्पो प्रछन्न वृत्ति आनद नद गोपी घर जाई ॥ ४३ ॥

गोकुल कुल पाघइ बलवतो ।
गोरस रस अति सरस पियतो ।
पयवतो जगि सूरो ॥
पीतांबर रर अंबर वान ।
वाइ वांसेली करतो गान ।
दान माम परिपूरी ॥ ४४ ॥

॥ अन्दोल ॥

दूरय प्रेम करेव तम पामि वलदेव ।
सेवक परिरहिये प्रीति परम वहिए ॥

गिरि तरु सिहरि चडंत अति चपलो वलवंत ।
रमणि करइ घणीए जमुना तरनिये ॥ ४५ ॥

माहीरिणी स्युं केलि करइ कान्ह रंग रेलि ।
दहिनी दोहिणीए डोल्इ रमनि भणीए ॥

नाथीय काली नाग जमुना जलि नइ ताग ।
बेहु सहोदरा ए राम दमोदरा ये ॥ ४६ ॥

॥ फाग ॥

दामोदर गुण मंदिर सुंदर राम सहाय ।
निज भुज बल गहगहतो पुहतो मथुरा राय ॥ ४७ ॥

कंस आगलि बल सोदर दामोदर वर सूर ।
माल प्रवन्न बल मुष्टिक मुष्टिक करी चकचूर ॥ ४८ ॥

चरण स्युं चाणूर चूचिय पूरिय सिंह नो छ्वान ।
छ्वंस करइ हवि कंस नुं वंस नो दीवो कान ॥ ४९ ॥

॥ काव्यम् ॥

कंस ध्वंस श्रवणकरणो रोपदुर्ल्लोपकोपा—
ऽऽटोपा स्फोट स्फुरदरुणदृक श्री जरासंध भुक्तुः ।
भीते भीतं यदुकुल मगात् पश्चिमोम्भोधिकूले,
दे वर्णोक्तं भुवनविदित शिष्टसेगेष्ट्रराष्टम् ॥ ५० ॥

॥ इति श्री रंगतरंग नाम्नि श्री नेमिनाथ फागे प्रथमं खण्ड ॥ १ ॥

॥ आर्या ॥

सहरिस सहस्सलोअण वयणं सुणिऊण तत्थ धणवइणा ।
धण रयण कणयनिचिआ विहिआ बारावईणयरी ॥ १ ॥

॥ रासक ॥

यदुकुल सकल तिहां कणि वसिउ ।
माहो माहि प्रेमरस रसिउं ।
हसिउ जिणइ सुरलोक ॥

नव नव मङ्गल धवल विलास ।
तरुणी रमणी दिइ रसि रास ।
भास नहिं जिहां शोक ॥२॥

ऊंचा चैत्य चतुर चित चमकइ ।
कनक कलस तस शिरवरि झलकइ ।
बहइ प्रवर पताका ।

शोभिर हरिमणी वर आंगण ।
चन्द्रबिंब ऊगया गयणांगणि ।
तिणि पुरि अहिनिशि राका ॥३॥

॥ अन्दोला ॥

गढ मढ मंदिर ओलि ।
घरि घरि पोढि पोलि ।
रयणना तोरणा ए ॥
मणिमत वारणा ए ॥
पूतली ना आरभ विटी दीसइरभ ।
कलसला तोरणइ ए वारणि वारणइ ए ॥४॥

अभिनव सोवन वान छांजइ छयल जुवान । (हु)
सोगठडा रमए इणि परि दिन गमए ॥
कनक कुंभ शिर लेवि पणिहारी पणकेवि ।
करइ टकोलडीए रूडी गोरडी ए ॥५॥

कञ्चण मणि मडाण कूआ वावि निवाण ।
रमलि करइ भली ए हंसला हमलीए ॥
अति मोटो प्राकार वोसीसो झलकार ।
रवि शशि विवलो ए उग्या अति भलो ए ॥६॥

॥ फाग ॥

अति भल पण भोगवता वर भोग ।
प्रिय प्रेमइं वीनवती युवती जन नो योग ॥७॥

पद्मरागमणि भीतडी रातडी अति रंग रोलि ।
अभिनव युवती फिरती करती रीसई टोलि ॥८॥

भोगि पुरन्दर केनर किंनर परि विलसंती !
हरित महीरुह पावन वनराजी दीसंति ॥९॥

॥ काव्यम् ॥

हर्म्यैः सुरम्यैः सुरवेश्मजित्वरैः
पुरी जनैनिर्जरराजजित्वरैः ।
दामी वयस्याः पुरतोऽमरावती,
द्वारावतीय नगरी वरीयसी ॥१०॥

॥ रासक ॥

पूरइ यावक जननी आश । दश विदसार करइ तिहांवास ।
वासवनी परिवीर रिपु कुल कुवलय कोक सहोदर ।
राज करइ तिहां भूप दमोदर । मदरगिरि जिन धीर ॥११॥

इणि अवसरे सिरि नेमि बाल ।
आल करइ आयुध साल ।
आल करइ आयुधनीइ ॥
गदा कदा जे हरि नवि हालइ ।
तेह झबकड कर घालइ ।
झालइ सारग धनु नइं ॥१२॥

॥ अंदोल ॥

नमिउ धनुष ततकाल जिमवर कमल नु नाल ।
पणच चढ़ावतो ए धनुष वजाउतो ए ॥
पुनरपि त्रिभुवननाथ शख लिइ निज हाथि (थ) ।
मुख स्युं पूरतो ए ध्वनि जगि पूरतो ए ॥१३॥
तिणि नादि शत खड त्रुट्ट ए ब्रह्मण्ड ।
मडल पल भल्याए आखंडल सवि मिल्या ए ॥
पण हडिया गिरि तुग रडवडिआ नस शृङ्ग ।
शृङ्ग कम्पावता ए बलद धुलावता ए । १४।
ठलठलिया कैंसालि झलहलिया जलराशि ।
रासडां त्रोडती ए महिषी त्राडतीए ॥
सलसलिआ उरगिंद टलवलिया रविचन्द ।
तारा तडतड्या ए नहयलि भडभडयांये ॥१५॥

॥ फाग ॥

भडभडिआ पञ्चानन काननि करइ विकार ।
नाडिया त्राठीअ कामिनी कामन करइ लगार ॥१६॥
सुणिअ सङ्ख रण झणक्यो चमक्यो मनि अत्यन्त ।
ततखिण तेडिय हलधर श्रीधर इम बोलन्त ॥१७॥
ए स्यो जगि कोलाहल हलधर कहो वृतत ।
तवि बोलइ लघु बाधव माधव सुणि एकन्त ॥ १८॥
प्रभु तुझ बाधव रूयडो लहुअडो नेमिकुमार ।
सङ्ख वजाडइ नेहनो तेह नउ ए विस्तार ॥१९॥
नेमिकुमार निज जेडिइ तेडिअ कमलानाह ।
जिन आगिली सुमनोहर हरि लम्बावइ बाह ॥२०॥
वालइ तस भुज जिन किम जिमवर कदली पान ।
वलगउ जिन भज शाखा शाखामृग परि कान्ह ॥२१॥

जिनपति निज भुज उंचव्यो हींचव्यो नवि चक्रपाणि ।
न नमइ तिणिइ चतुरभुज जिन भुज ते निरवाणि ॥२२॥

॥ काव्यम् ॥

चिन्ता चेतसि मा चतुर्भुज भवान् कार्षीदिमां यच्छिवा-
सूनुर्वीरिमधारिमैकनिनयो राज्यश्रिय लास्यति ।
नासौ राज्यजिघ्रक्षुरस्ति भगवान् योगीन्द्र चूडामणि-
लीला केलिमयी तदा दिविपदामेव न भोगीरभूत् ॥२३॥

॥ रासक ॥

हवि विमासइ हरि परि प्रेम ।
पाणिग्रहण करइ जो केम ।
नेमिकुमार तो वारू ॥

फल फूले लहिकी वनसपती ।
गह गहतो पुहतो ऋतु नु पती ।
रतिपति करइ विकारू ॥२४॥

दश दिश थी विकस्या सवितरुयर ।
झीलइ जलचर मिथुन सवे सरि ।
सर सरोरुहवती ॥

वकुल मुकुल दल परिमल लीणा ।
भमता भमर रवइ रसरीणा ।
वीणा जिम वाजन्ती ॥२५॥

कंदलि आवलि कदली कद ।
मह मह करइ फूल मुचुकंद ।
कुन्दकली विकसंती ॥

सेवंत्री परिमल पसरती ।
आपु भुवन भवन वासन्ती ।
वासंती विकसंती ॥२६॥

॥ अंदोला ॥

विकस्या सरस रसाल ।
वोलइ कोकिल वाल ।
डाल डोलावता ए ।
विरह जगावता ए ॥

नारी अधर ना रंग ।
रंग स्यु मधुकरी ए ।
तरुतरु तरवरी ए ॥२७॥

करती स्त्री स्तन पीज माहि नान्हृडिआ वीज ।
वीज ऊरी फली ए फूली सदा फली ए ॥

कुसुमि कुसुमि वर भृग लाल गुलाल सुरग ।
रंग स्यु रान [ज] डा ए दाडिमी फूलडा ए ॥२८॥

गहगहिआ कणवीर मह महिआ जवीर ।
कीर ते रूअडा ए करइ टहूकडा ए ॥

पावन पवन प्रकप करइ कामिनी चप ।
चपकनी कलीए वाटलीनी कलीए ॥२९॥

तरला ताल तमाल पसरी पाडल डाल ।
साल सुहामण ए पालविआ घणा ए ॥

फूली वेलि अमूल (सून) विकस्यां करर ीफूल ।
मूल घणु लहि ए मोगरो महि महि ए ॥३०॥

परि मलयां पुन्नाग तिहा भमर नो लाग ।
राग प्रवाल ना ए फूल जासून ना ए ॥

अरुणि मनु नहि रोके मोडच्या सरल अशोक ।
लोक मन रातडां ए पानडा रांनडां ए ॥३१॥

॥ फाग ॥

रातडां फूलडां किंशुक किंशुक मुख नो नूर ।
दश दिशि सरनि केवडी केवडी परिमल पूर ॥३२॥

मयण वहु शिरि रापडी फलिय उदार ।
अलिकुल सकुल विमणो दमणो विकस्यो सार ॥३३॥

मलयाचल नो प्रभंजन जन मनि करइ विकार ।
माजरि माजरि मधुकरं करइ मयण जयकार ॥३४॥

एक वधू तरु सींचती हींचती ए कर मति ।
तरु तरु रमता वानर नर नारी निरषति ॥३५॥

कुसुम गध अति सुरही विरहीजन मन वाम ।
पथिय पथ उतावला वावला चाल्या नाम ॥३६॥

मानिनी मन आनदन चंदन चरचरु चारु ।
नव पल्लव तरु कुसुमिय कुसुमायुध परिवारु ॥३७॥

॥ काव्यम् ॥

विस्मेरवल्लरिरसालरसासहाली,
सञ्चारिपट चरणचूर्णितचारुचूडम् ।
प्रासी सरत्प्रवर पुण्यपरागरागः
सन्भूषयन् वनमयं ममये वसन्त. ॥३८॥

॥ रासक ॥

इणि अवसरि मधुसूदन रमणी सा मही स ही सवे शिरुवरि मणी ।
रमवो मास वसत पदम पद कडी जडी मनोहर ।
उर वर हार विराजिय पयोहर दीहर टोडर लहिकइ ॥३९॥

करि ककण चूडी ऋमि नूपर ।
रयण जउण राषडी शिरूपरि ।
ऊपरि हीरा फलकइ ॥

कुच युग निर्जित कनक कमडलु ।
श्रवण युगल झलकइ वर कुंडल ।
मंडल जिम रवि शशिना ॥४०॥

॥ अदोला ॥

मुख शशि मडलमान तनु सोवन वन वान ।
गूथी मीढलीए ढोली अति भली ए ॥

अधर विद्रुम रङ्ग रोल मुखिवा वस्यो तम्बोल ।
कणय रयण जडीए करिवर मुद्रडीए ॥४१॥

शिरि सीदूर भरंति पिअलड़ी पिअल करति ।
अञ्जन रेहडी ए दीहर आखडीए ॥

बांहि 'बहरषा बन्ध बन्धुर बाहु बन्ध ।
सा वट्टक समस्या ए चरणो अति कस्या ए ॥४२॥

चन्दन चरचि शरीर पिहिरि जादर चीर ।
त्रिवली वलि भलीए विसती कांचलीए ॥

कटि मेषल खल कन्ति घीटलडी षटकन्ति ।
गलि मोती अडी ए लड लडकइ वडी ए ॥४३॥

॥ फाग ॥

वडी भातिनी फूलडी चूनडी चोलनो रंग ।
मस्तक गोफणो पोढो पीढचो जिस्यो भुअंग ॥४४॥

गालि झालि झलकइ परी सपरी फूली ताम ।
रण झणकइ पगि पीजण जण मणि जागइ काम ॥४५॥

इणि परिहरिनी कामिनी काम निवास नुं ठाम ।
करि सिणगार उतावली वावली चालि ताम ॥४६॥

साथ नेमिकुमार छइ नार छइ लइ नहि जाम ।
कान्ह वचनि गह गहिती पुहती ते आराम ॥४७॥

॥ काव्यम् ॥

हिम समीर समीरिन मन्मथे,
वरविलास समये समये मधो ।
स्वरमणी रमणीय सखः,
शिवा सुतयुतो रमते स्म स्म रमापति ॥४८॥

॥ रासक ॥

जगगुरु जिन जमलो गोविंद ।
साथि लेइ वर रमणी वृन्द ।
वृन्दावनि मां पुहुतो ॥

तव हरि रमणी हरिष करेव ।
पूजइ प्रथमि मनोभव देव ।
देव्रर सहित रमन्तु ॥४९।

चूआ चदन चरिच अ चोली ।
मिली सेव दइ भमर भोली ।
भोली रमलि करन्ती ॥

अलतइ कर रजिया सहना ।
तिणि ग्रही रही कमलिनी इना ।
ऊना नहि लगार ॥५०॥

॥ अ बोला ॥

नहिय लगार विलव जिनवर कर अवलंब ।
चिहुँदिसि मोकली ए झीलइ षडे (डो) कलीए ॥

लाल गुलाल अवीर वासु नेमि शरीर ।
चन्दन छांटतीए केसर वाटतीए ॥५१॥

कर ग्रही शीतल घोल कुंकम रस रगरोल ।
कम कमोकर करीए मणि सीगी भरीए ।

भेलिअ मृगमद पूर घोलिअ प्रवर कपूर ।
झलणी झीलती ए छंटई जिनपतीये ॥५२॥

हास विलाम विकार पीन पयोहर हार ।
नाभि दिपालतीए वाकु निहालती ए ॥

जिनपति पाणिग्रह विमोलइ जनपइसेवि ।
मोह दोपालतीए काम जागडती ए ॥ ५३॥

सलिल पोभखि नारि छाटो नेमिकुमार ।
नाठी उतावली ए पुनरपि ते मिला ए ॥
करि ग्रहि नलिनी नाल भरिग्र सलिल ततकाल ।
मूकइं सामहीरा जिन साहनी रही ए ॥५४॥ [साही ?]

॥ फाग ।

रही सवे ते साँकडी वांकडी भमहडी मार ।
सवि विचि राण्यो देवर देवरमणी अवतार ॥५५॥

सलिल रमलिकर नीकली साकली नेमिकुमार ।
बोलइ वचन सुरगना अंगना करइं ते विकार ॥५६॥

प्रभु परणेवुं मानि न माननो मन वालम्भ ।
घरिणी विणसु सोवन योवन पो आरम्भ ॥५७॥

नव भीनु जिणवर मण रमणी तणइ रे विलास ।
जिनपति अती नीरागी रागइ न करइ वास ॥५८॥

भोजाई रढ लगिग्र रागिग्र वचन चवंनि ।
देवर वर इक सुन्दरी सुन्दर सुख इम हुति ॥५९॥

मौनि रह्या जिन जाणि अ राणिग्र हरष धरंति ।
थई रे विवाह मजाई भोजाई मनि षति ॥६०॥

॥ काव्यम् ॥

सैस्तैर्विलासललितैर्वचनै स्तदीयै—
नार्द्रीकृत श्रितदय हृदय यदीयम् ।
नेमिर्विवेश वृष्णिनामधिपः स सत्य—
भामादिभिः परिवृतो नगरी मुरारेः ॥६१॥

इति श्री रंगतरगनाम्नित श्री नेमिनाथ फागे

॥ द्वितीयं खण्डम् ॥

तृतीयावाड

। आर्या ।

मामाइ वल्लहहि वल्लहपुग्ग्रो निवेइग्रं सयलं ।
जं नह तुह सहोदर इच्छइ परिणेउमेणत्थि ॥ १ ॥

॥ रासक ॥

मुणिअ वयण नारायण हरषइ
निज नगरी आवी तवि निरष ।
परिषइ कन्या जाची ॥

यदु राजा जोइ न अनयरी ।
अनुक्रमि उग्रसेननी कुमरी
अमरी सम जइ याची ॥ २ ॥

जाणा जोसी निपुण तेडावइ ।
वडइ वछेदि लगन गणावइ ।
आणावइ सज्जाई ॥

मडचा मण्डप वड आडंवर ।
पंच वन्न सोहइ तिहां अंवर ।
अवरि लागा जाई ॥ ३ ॥

॥ अ वोला ॥

लागा जाइ आकाश चीतरिआ आवास ।
केसव नी वहू ए केलवइ ते सहू ए ॥

सवि यादव सपरिवार आव्या माधव बार ।
द्वारावती पुरी ए सघरी नउ तरी ए ॥ ४ ॥

करती मगलि गान केलवइ सवि एक वान ।
वनगी अति भला ए खांडना खाजिला ए ॥

घेवर अवर करेवि मांडी मरकी सेवि ।
अमिअना गाडुआ ए रूडा लाडुआ ए ॥ ५ ॥

घर घृत धार अखड माहि मडोरी खंड ।
पोली पातली ए, केला कातली ए ॥

सरस सालजा पालि शालि दालि घृत नालि ।
साजन जन जिम ए हरि नइ इम गमए ॥ ६ ॥

॥ फाग ॥

इम गमइ सवे अ सुहासिणी हासिणी करइ रे विलास ।
मान दिइ यदु कोविद गोविंद हृदय उलास ॥ ७ ॥

एलचि लविंग जायफल श्रीफल फोफल पान ।
आपइ पान अडागर नागर जननइ कान्ह ॥ ८ ॥

सूकड केसर छाटणइ वाटणइ मांहि कपूर ।
घरि घरि उछव छाजइ वाजइ जय जय तूर ॥ ९ ॥

॥ काव्यम् ॥

जय जयेत्यभिवादि सुरव्रज—
द्विगुणितैयु^र्वतियु^र्दभिवृ^र्तः
उभयतोऽमर चोलित चामरो,
जिनवरोऽथ विवोढु मुपेयिवान् ॥ १० ॥

॥ रासक ॥

गयवर पधि चढउ जगदीसर ।
चमर धारिणी वीजइ चामर ।
अमर धरइ शिरि छत्र ॥
थाई अतुल धवल ध्वनि गान ।
मनवांछित दीजइ तिहां दान ।
तान मान वाजित्र ॥ ११ ॥
याचक जन आसा पूरतो ।
पगि पगि कनक रयण वरसतो ।
सति मूरति मन भाव्यो ॥
पूठइ वर अणुअर नारायण ।
अनुक्रमि उग्रसेन नृप बारण ।
तोरण जिनपति आव्यो ॥ १२ ॥

॥ अदोला ॥

आव्यो तोरण जाम करुणा रस अभिराम ।
जिनवर दृष्टि डिए पशु वाडइ पडीए ॥
सेवक प्रति पूछति कृपावत भगवत ।
स्युं पशु ए वडा ए वाध्या वापडा ए ॥ १३ ॥
सेवक बोलड स्वामि तुम्ह गोरवनइ कामि :
स्वांयद सग्रह्या ए वाडा माहि रह्या ए ॥
सुणिअ वयण जगदीश धूणइ वलि वलि सीश ।
धिग धिग परिणवु ए जिन इम चीतव्यु ए ॥ १४ ॥

॥ फाग ॥

चींतवइ भुवन पुरदर सुंदर इम जिन जाम ।
सहिर स्यु मनि हरषति निरपति राजलि ताम ॥ १५ ॥

रूप हरावइ मयण नुं रयण नो उरवर हार ।
पगि पहिरइ वर मोजडी जडी मुंद्रडी सार ॥ १६ ॥

धवल दिइ बहु इद्र नी इंद्रनील मणि वान ।
पूंप घूणालो शिरुवरि वर आरोग्या पान ॥ १७ ॥

राजलि वलि वलि जिनमुख समुख नवणा ठवति
जिनवर देषि सुनयणा नयणा अमिग्र ठरति ॥ १८ ॥

॥ श्लोक ॥

लावण्यरस भृगार: शृङ्गार इव मूर्त्तिमान ।
राजामत्या जिन' प्रेक्ष प्रेममथर याहशा ॥ १९ ॥

॥ रासक ॥

तोरण थी जिन वल्यो विचक्षण ।
निसुणि अ राजमिती ततक्षण ।
ईक्षण अ सु षिरती ॥
दैव दैव इति वदन वचन कहि ।
मूर्च्छी राजिल धरणि डलइ साही ।
साहिर सवि विलंपती ॥ २० ॥

परिअण सवितवि बोलइ बोलइ ।
कदली दल वीझण्डा ढोलइ ।
ढोलइ ऊपरी चदन ॥
स हिअर सवि छटइ शीतल जलि ।
ऊठी हग लहती कज्जलि ।
राजलि करइ आक्रदन ॥ २१ ॥

॥ अन्दोला ॥

आक्रंद करइ ते भूरि भूषण ना वइ दूरि ।
पीअल टालती ए नीचुं निहालती ए ॥
अडुड क स्व (स्य) शरीर मूकइ कचुक चीर ।
षिण षिण षीजती ए म सु भीजती ए ॥ २२ ॥

प्रिअतम विरह विषादी करइ काम उनमादि ।
चदन विगमइ ए शूनइ मनि भमइए ॥
नेमि नेमि जपि जाप करता विविध विलाप ।
प्रिय विरहातुरी ए राजलि कुंअरी ए ॥ २३ ॥

॥ फाग ॥

कुअरी कहि विण पिअढा हिअडा फाटि न आज ।
इम कहि राजलि भोजन भोजन तु नहि काज ॥ २४ ॥

कोकिल करइ टहुकडा ढुकडा काम न वाण ।
प्राण हरइ पापियडा वापियडा ए जाण ॥ २५ ॥

मूकइ घाड हीरइ जडी सेजडी रति न करन्ति ।
न गमइ सहिअर वातडी रातडी प्राण हरन्ति ॥ २६ ॥

सहि मुझ मनि करइ हिम कर मकरकेतु नोवास ।
स्थिति वांधी मि प्रेमनी नेमिनी हुँ छु दास ॥ २७ ॥

दान सवत्सर देइअ लेइअ सयमराज ।
अनुक्रमि कर्म कलुष हरइ विहरइ श्री जिनराज ॥ २८ ॥

॥ श्लोक ॥

आलोकिताऽखिला लोक लोकमोलोक भासुरम् ।
क्रमेण केवल ज्ञान जभे नेमिजिनेशितुः ॥ २९ ॥

रासक

अनुक्रमि भुवन विभासण भाण ।
जिनपति सकल वस्तु नो जाण ।
नाण लहि वर केवल ॥
समोसरण विरचइ तिहां देवा ।
करता जिनपद पकज सेवा ।
लवा शिवसुख निश्चल ॥ ३० ॥
जइ दिष्या लइ जिनपति हाथ ।
राजीमती तवि थइ सनाथ ।
नाथ शिष्या लइ सूधी ॥
राजलि तप तप करइ मुहेलु ।
पाप पंक म लटालिय विहलु ।
पिहलु प्रिय थी सीधी ॥ ३१ ॥

॥ अदोला ॥

सिद्धि रमणी वरहार ।
जिनिवर करइ विहार ।

अतिशय भासुरूए ।।
नमइ सुरासुरूए ।।
त्रिभुवन जन हितवंत ।
नेमिनाथ भगवत ।
शख लाछन धरूए ।
जग मंगल करुए ।। ३२ ।।

यादव कुल शृंगार ।
करुणा रस भृङ्गार ।
जग जन सारतो ए ।
महि अलि विहरता ए ।।
जाणि अनि जनि खाण ।
समय समय नो जाण ।
रेवतगिरि वरू ए ।
पुहुतो जगगुरू ए ।। ३३ ।।

।। फाग ।।

जग गुरु भुवन विभासन अशन (अणसन) करइ परिहार ।
सकल कर्म षय पामिअ स्वमिअ शिव सुख सार ।। ३४ ।।
जय जय मयण विहडण मंडण हरि कुल हार ।
रैवत गिरि शिरि भूषण दूषण नहि य लगार ।। ३५ ।।
शुभ सूरति जिनमूरति पूरति जन मन आस ।
जिन नामि घरि विमला कमला केलि निवास ।। ३६ ।।

।। काव्यम् ।।

अजनि यो गिरिनार महागिरे',
शिरसि मोलिरिवाऽद्भुत वैभवः ।
हरि कुलैक विभूषण नेमिनं,
नमन्त मगल केलि निकेतनम् ।। ३७।।

।। राग धन्यासी ।।

यादव वश विभूषण नेमिजिन ।
रंगतरंग वर फागबन्ध ।।
जे भणइ जे सुणइ श्रवण भणसु सुहकर
भजति त सम्पदा सत्य सथ (सघ) ।

यादवश० । द्रुपद ।। ३८ ।।

श्री तपागच्छ मंडाण विजय दान गुरु,
सूर शिरोमणि ब्रह्मचारी ।
तास पट प्रगट गयणंगणि रविसमो,
हीर विजय सूरि विजय कारी ।। यादव ।। ३९ ।।

यादव श्री विजयसेन सूरी श्वर सेहरू,
त्रिजग मंगल करू श्रवणराज ।
अभिनवो चन्द्र गच्छ जलनिही चंदलो,
समरतां संपइज सयल काज ।। यादव ।। ४० ।।

तास गच्छ सुविहित श्रमणराज र मडन,
कमलविजय विबुध विबुध मुख्य ।।
तेहनो सीस मुनि हेमविजय कहि,
नेमि जिन वदता सयल सुख्य ।। ४१ ।।

यादववश विभूषण नेमिजिन ।।

।। इति श्री रगतरंग नाम्नि श्री नेमिनाथ फाग ।।

।। तृतीय खण्डम् ।।

।। समाप्तम् ।। श्री ।। ६ ।। : ।। शुभवतु स० १६३१ वर्षे चैत सुदि १५ दनेलखत । कृष्णदास लखत ।। पत्तन मध्ये ।। ६ ।।

स्थूलिभद्र—कोशा प्रेम विलास फाग

स्थूलिभद्र-कोशा प्रेम-विलास फागु के सृजक जयवत सूरि हैं।[1] जयवत सूरि का शैशवीय सम्बोधन गुण सौभाग्य था। जयवत सूरि ने सम्वत् १६१४ मे शील वती सती के चरित पर आधारित 'शृ गार मजरी' नामक सुन्दर एव सुदीर्घ काव्य की रचना की थी। सम्वत् १६४२ मे ऋषिदत्तारास' की रचना की और तत्पश्चात् 'नेमराजुल बार मास', 'बेल प्रवन्ध' तथा 'सीमधर स्तवन' की रचना की थी।[2] इन कृतियो से ज्ञात होता है कि जयवत सूरि सृजनात्मक प्रतिभापूर्ण कवि थे, जिन्होने १७ वी शती के पूर्वार्द्ध मे ही सन्दर्भित फागु की रचना की थी। इनकी सृजन-प्रक्रिया विविध काव्य रूपो मे प्रतिफलित हुई है।

कृति के ४१ छंदो तक कोशा और स्थूलिभद्र का कोई उल्लेख नही आया कृति का समूचा परिवेश किसी लौकिक नायक के प्रवास-जन्य विरह से आतुर हुई विरहिणी की विरह-व्यजना से सम्बन्धित है। विरह का ऐसा सजीव एवं मार्मिक वर्णन किसी भी जैन फागु कृति मे उपलब्ध नही होता। इस फागु की कथा लोक विश्रुत आख्यान स्थूलिभद्र कोशा पर आवृत है। कथा के पूर्वार्द्ध मे स्थूलिभद्र अत्यन्त स्वरूपवान और विलासी थे। १२ वर्ष तक कोशा नामक वार वनिता से प्रेम करते रहे। बाद में प्रबुद्ध हुए। गुरु का आदेश पाकर चतुर्मास्य मे कोशा के गृह पर आये। अपने प्रेमी को आते हुए देखकर कोशा हर्षातिरेक से रोमांचित हो गई। सम्पूर्ण सज्जा और शृ गार के साथ स्थूलिभद्र को रिझाने के लिए प्रस्तुत हुई परन्तु उसका भ्रू-निक्षेप उसके अंगो की मासलता, और उसकी अप्रतिम रूप-राशि, मुनि स्थूलिभद्र पर कोई प्रभाव नही डाल सकी। यह उत्तरार्द्ध की कथा ही जिनपद्म सूरि कृत थूलिभद्र फाग' मे वर्णित हुई है। जयवत सूरि कृत 'स्थूलिभद्र-कोशा प्रेम विलास फागु' मे कोशा का प्रेषित पतिका के रूप मे प्रवास हेतुक विप्रयोग का प्रभावोत्पादक वर्णन हुआ है। काव्य-बोध की दृष्टि से यह अत्यन्त सुशक्त कृति है। कोशा के विरह-जन्य मार्मिक भावो की व्यञ्जना, जो

---

१ दिस दिन सजन मेलावडो ए गणता सुख होइ,
जयवत सूरि वर वाणी रे सवै सोहावणी होइ ॥

२. जैन गुर्जर कविओ, भाग १, पृ० १९३–१९८।

व्यथा के रस से सिक्त है स्रवित आसूओ से आर्द्र है, दीर्घ निश्वासो मे पोषित है, सुन्दर ढंग से हुई है।

विराहिणी कोशा को प्रियतम क्षण-क्षण मे स्वप्न-दर्शन दे रहा है। जब सखी जगाती है तब चित्रवत् प्रियतम लुप्त हो जाता है। वह पापी विरह रूपी फाँसी डाल गया है। जिससे शारीरिक-यत्रणा हो रही है :—

> कठिन कत करि आलि जमावइ, घडी घडी मुझ मुहणइ आवइ।
> जब जोउ तब जाइ नासी, पापीडा मुझ घालि म फासी ॥ १५ ॥

कोशा का प्रलाप निरन्तर बढ़ता ही रहता है । कभी वह पूर्व समागम के आनन्दबोध का स्मरण करती है, कभी कहती है कि रोहणि का रुख मनाते-मनाते उसका दिन बीत जाता है उसके बाद वह वैसी ही खोखली, सूनी, विजड़ित मनोवृत्ति वाली और कुंठित हो जाती है जैसे वैवाहिक कार्य सम्पन्न होने पर मण्डप की स्थिति हो जाती है .—

> रोहणिओ रुष मनावणो इम करतां दिन अत,
> वीवाह वनिओ माडवे तिम हूँ सूनी कत ॥ २० ॥

भाव-बोध की दृष्टि से भी यह उत्कृष्ट फागु कृति है। कला-पक्ष की दृष्टि से इसकी भाषा प्रवाहमयी और माधुर्यपूर्ण है । उसमे भाव-वहन करने की अपूर्व क्षमता है। शैली अलकृत है। कवि ने शब्दालकारो और अर्थालकारो मे से अनेक अलकारो का प्रयोग किया है। उपमा, यमक अनुप्रास रूपक, और उत्प्रेक्षा कवि के प्रिय अलकार रहे हैं। छन्दो की दृष्टि से कृति दूहा, फागनी ढाल, चाल और काव्य आदि मे निबद्ध है।

स्थूलिभद्र–कोशा प्रेम विलास फाग

रचनाकाल— सं० १६१४ आसपास

फागनी ढाल

सरसति सामिनि मनि धरी, समरी प्रेम विलास,
थूलिभद्र कोश्या गायसिउं, जिम मनि पुहचइ आस । १

ऋतु वसंत नवयौवनि यौवनि तरुणी वेश,
पापी विरह सतापइ तापइ पिउ परदेश । २

काव्य

ऋतु वसत वनि आव्यु गहमही, प्रेमकु पल कुसुमावलि महमही,
मलया वाय मनोहर वाइ, प्रिउनइं ऊडी मलउ इम थाइ । ३

चालि (फाग)

वनसपती सवि मोहरी रे, पसरी मयणनी आण.
विरहीनइ कहुंउ कहुउ करइ कोयलि मूकइ बाण । ४

तरुमरवेलि अलिगन देखिय सील सलाय,
नवयोवन प्रिय वेगलु पिण न विसारिओ जाइ । ५

काव्य

प्रियडउ तलवइ प्रदेशथी, रहइ गोरी मदिरमांहिथी,
वहु गुभवी हुतु रतिराज, रहइ रहइ पसरी धरी लाज । ६

चालि

वली रे कुपलडीय वेलडी, वली वली ऊगइ चद
पणि न वले गयु योवन प्रेमलतानु कंद । ७

सूकइ सरोवर जल विना, हसा किस्यु रे करेसि,
जस घरि गमतीय गोरडी, तस किम गमइ रे विदेश । ८

काव्यं

षिणी अ गणि षिणि ऊभी ओरडइ, प्रिउडा विना गोरी ओ रडइ,
झूरतां जाइ दिन रातडी, आंषि आंषि हूइ ऊजागरइ रातडी । ९

चालि

रे साजन जे तिइ करिउं ते मिइ कहिउं रे न जाइ,
वइरीडा वेध विलाई नइ ईम का अलगु थाय । १०

वीज पीडओ ते ऊपरि जे करी छातइ नेह,
विरहिइं वाल्यां माणस स्यु करइ वरसी मेह । ११

काव्य

प्रिउडइ सखि कामण कीधु, पापीइ चित चोरी लीधुं,
लोकलाज तिजीनइं माय, प्रिउ केडिइ भमुं इम थाय । १२

चालि

लीला गतिइ जे चाल्इ, बोलइ सुललित वाणि,
नयण सोभागी पातलो मोहन लक सुजाण । १३

ते साजन किम वीसरइ जस गुण वसिया चिति,
ऊघमाहि जु वीसरइ सुंहुणामाहि दीसति । १४

काव्य

कठिन कत करि सालि जगावइ, घडी घडी मुझ सुहणइ आवइ,
जव जोउ तव जाइ नासी, पापीडा मुझ घालि म फासी । १५

चालि

पापी रे भूतारां सुहणडां मुझ स्यु हासु छोडि
करइ विओह जगावीनइ सूतां मूकइ जोडि । १६

रे साजन तुझ मन तणी, पुहचसिइ सघली रुहाडि,
पणि नवि मोरा मन तणा जाणो तुम्हो रे पेलाडि । १७

काव्य

सखि फागुण मास सोभागी मलइ साजन जेणि सरागी,
वरसइ मेह नइं मेलावु होई, वेलि कोइलि चातक मोर । १८

चालि

रे साजन जव मुझ तुझ सगम हतो रे अपार,
तव मुझ आला लु वडे षिण नु हुतु परवार । १९

रोहणाओ रुष मनावणो इम करतां दिन जत,
वीवाह वीतओ माडवे तिम हू सूनी कत । २०

काव्यं

तेह ज मंदिर तेह ज सेरी, नवि गमइ सखी जोऊ फेरी,
ओल्हाव्या विण जाइ वणजारा गया चोरी चित्त लूटारा । २१

चालि

सखि मुझ न गमइ चदन, चद न करइ रे संतोस,
केलि म वीभस ही सही, सही न गमइ श्रम दोस । २२
जेणि कीधु मुझ कामण ते मुझ मेलि न आज,
आरति हुइ ऊतावली, ज्यु मुझ जीविइं काज । २३

काव्य

वसत देषी मोरु मन गहबरइ, पापिणी कोइलडी कोहउ कोहउं करइ,
तेहनइं सखी लवती वारउं, विरहिइ माहरानइं म मारउ । २४

चालि

परदेशीस्यु प्रीतडी हईडा मडइ काय,
वईरडओ वेध पुणीनइ वेध विलाई जाइ । २५
आज घालि गलि बाहडी परमइ पियारइ देखि,
जिम रानि रुष ज एकलां हईडा किस्यु रे करेशि । २६

काव्य

सजनीओ बुलावी हू वली गुण सभारी हूई अति आकुली,
आगणइ आव्या मेह वारे, गहबरी रही पोलि दुआरे । २७

चालि

ओसीसु अति दुष घरइ तालोबीली थाय,
ओसीसु अति तापव्यु, तडफडता निशि जाय । २८
कहिनइ सखी ए सेजडी सि जडी सजन विछोह,
कइ अगनि कइ काटडइ के करचा कइ लोह ।२९

काव्यं

मुझ शरीर सखि चीरइ चीर, लोह संकल समान झजीर,
रयणि जोवनिमाजरि महिमही, निसासे करी काया मिइ दही । ३०

चालि

हु सिइ न सरजी पषिणि, जिम भमती प्रीउ पासि,
हु सिइ न सरजी चदन, करती प्रियतनु वास ।३१
हुं मि न सरजी फूलडां, लेती आलिंगन जाण,
मुहि सुरग ज शोभता, हुँ सिइ न सरजी पान ।३२

काव्य

देह पडुर भई वियोगइं वईद कहइ एहनइ पिडरोग,
तुझ वियोग जे वेदन मइ सही, सजनीया ते कुण सकइ कही ।३३

चालि

सजन हवा रे देसाउरि संदेसे व्यवहार,
आहार जुहार ह मन तणो, कागल वांचिउ वारि । ३४
विरह ओ ता मिनवा तणो, किम जीवीइ रे सदेसि,
डील उपरि दुष आंगमी वाहला तुज्झ मिलेसि ।३५

दूहा

केसूडा पथि पालवे, सूडा दिउं तुझ लाप,
एक वार मुझ मेलि न सजन पसारी पांष ।३६
वइरीडा वयर वहइ घणु, विसमी वाट विदेश,
विसमु त्रालिभ वेषडु, इम दिन जाइ आदेश । ३७
वाई विण नवि वेदन न वरी वारो वारि,
व्यसनीनइ व्याप्सु वेघडो, वाल्हा विण न रहाइ । ३८
झूरि झूरि पजर थई, साजन ताहरइ काजि,
नीद न समरु, वींझडी न करइ मोरी मार । ३९
भूष तरस सुख नीदडी, देह तणी सान वान,
जीव सांपिडे मइ तुझ देउ, थोडइ घणु स्युं जाणि । ४०
ए मुझ परि मइ तुझ कहीं, हवइ मुझ करिन संभाल,
मलि कइ उत्तर आपनइ, आला लु वओ टालि ।४१
कोश्या वेघ वलूघडी एक ओलंभा देइ,
एहवइ गुरु आदेशडइ थूलिभद्र मुनि आवेइ । ४२
कत देषी कोश्या फूवडी हईडा कमल विकास,
जिम वनराई माधवओ पामी अधिक उल्हास । ४३
थूलिभद्र कोश्या केरडो गायु प्रेम विलास,
फाग गाइ सवि गोरडी जब आवइ मधुमास । ४४
दिन दिन सजन मेलावडो ए गणतां सुख होइ,
जयवंतसूरि वर वाणी रे सेव सोहामणी होइ । ४५

स्थूलिभद्र फाग (मालदेव)

१७ वी शती मे रचित इस फागु कृति के रचयिता मालदेव हैं, जो प्रसिद्ध तपागच्छानाचार्य भावदेव सूरि के शिष्य थे। इनका निवास-स्थान बीकानेर था। मालदेव द्वारा रचित 'पुरदरकुमार रास' स० १६५२ मे रचित कृति है। यह बहुत लोकप्रिय कृति है। इस कृतित्व के आधार पर खम्भात के कवि ऋषभ-दास ने 'कुमारपाल रास' में पूर्वकालीन कवियो में श्री मालदेव का नाम सम्मान-पूर्वक लिया है। बडौदा ज्ञान मन्दिर से 'स्थूलिभद्र फागु' की सम्वत् १६५० की लिखी हुई प्रति मिली है। अत इस कृति का रचनाकाल सम्वत् १६५० ही रहा होगा, ऐसा अनुमान किया जा सकता है।

कृति मे लोक प्रचलित आख्यान स्थूलिभद्र-कोशा को किञ्चित हेर-फेर के साथ प्रस्तुत किया गया है। इसमे वररुचि, शकटार और नन्द की कथा को भी अधिकारिक कथा के साथ नत्थी कर दिया गया है। कृति धर्म-निरुपण, विशिष्ट-तया नारी संगति टालने और शील महाव्रत धारण कराने के महात्म्य को प्रकट करने के लिए लिखी गई है। अत उसमे धर्म प्रबल है, काव्य गौण है। सन्दर्भित फागु का सशक्त, काव्य-स्थल कोशा का सौंदर्य-निरूपण है। कवि की सशक्त उक्तियो और उपमानो की अभिनव सयोजना ने इस सौंदर्य-बोध को मांज दिया है। एक स्थल पर कोशा का सौंदर्य-निरुपण करते हुए कहा है कि उसके विकसित कमल-नयन ऐसे आभासित हो रहे थे जैसे काम-बाण के अनी हो, उन पच बाणो को भौंह रूपी कमान पर घर कर कामी जन रूपी मृगो के मन को बीधा जा रहा हो।—

विकसित कमलनयन वनि, कामवाण अनिया रे।
पाचइ भमुह कमान शु, कामी मृग-मनमारि रे। ३९

भाव और सौंदर्य काव्य के मेरूदड होते हैं। भावो को विविधता में सदैव सत्य की खोज होती रही है। इस कवि ने उस खोज से नया माध्यम अपनाया और भाव-पक्ष को ही अधिक शक्ति से पकडने का प्रयास किया है क्योकि उसी मे आगत और अनागत सत्ता का एकीकरण सर्वाधिक रूप से हुआ है। इस कवि ने सहज-जीवन की आसक्ति को परखा है तथा उदात्त के प्रति भावो को

ममाखियो की तरह संजो कर रख दिया है। निस्सन्देह कवि की कल्पनाए अत्यन्त मोहक हैं।

मालदेव की भाषा निखरी, मजी, परिमार्जित और साफ-सुथरी है। उसका सहज प्रवाह, माधुर्य एव प्रसाद गुणो का सामन्जस्य उसके व्यञ्जना-कौशल को वृद्धिगत करने मे सहवर्त्ती रहे हैं। भाषा मे लोकोक्तियो के समावेश से भाव सौंदर्य मणि-काचन योग हो गया है :—

वेश कुमारि जुआरीइ दूरजन प्रतिहि विगोवइ रे,
अग्नि साप राजा योगी, कबहूं मीत न होवइ रे।
सो कचण क्या पहिरीइ, जु कानेहुं तु तोरइ रे।
जइ परमेस्वर रुसई, नाऊ घालि कूटि रे।
सहि साथ कुआनि पाग्इ ठामि रहइ चुमासइ रे।
चित पराइ जो दुष देवइ, तिन्ह मुष कीजि कालो रे ॥ १७,
१९,२५,२७,४८ ॥

शैली पूर्णतया अलकृत और प्रभावोत्पादक है। अलंकारों मे रूपक, उपमा, उत्प्रेक्षा, व्यतिरेक और अनुप्रास कवि के विशेष प्रिय हैं।

मालदेव कृत स्थूलिभद्र फाग

रचनाकाल—सवत् १६५० से पूर्व

पास जिणंद जुहारीइ, समरु सारद माया रे,
गाउ फाग सोहामणु, थूलिभद्र मुनिराया रे ।१

लाल मोहन मेरे जीउ वसई, थूलिभद्र पीउ पाया रे,
तन मन उछा अति करू, बहुत दिन प्रीउ पाया रे । आंचली

पाडलपुर रलीआमणु, नन्द करि तिहा राजो रे,
लोक प्रजा सब सुपइ वसि, सारि सहूना काजो रे,
लाल मोहन मेरे जीउ वसइ । २

च्यारि बुद्धि-गुणे दीपतु, महितु तस सकडालो रे,
तासु नारि लिषमी जिसी, दोइ कुल कीउ जयकारो रे । लाल० । ३

थूलिभद्र शरीउ दोउ पुत्र होऊ तिणि जाया रे,
जाण कि दोऊ देवता भोगनकु आया रे । लाल० । ४

कोश्या वेश्याकइ रहि, थूलिभद्र सुष वास्या रे,
बार वरस लगइ भोगवइ, पूरी सवि मन आस्या रे । लाल० । ५

तिहां एक बंभण गुणी, वररुचि पडित आया रे,
कीरति राजा नदकी, करि सदा मनि भाया रे । लाल० । ६

मत्री कीउ मंत्री तव, वेटी सात सुजाना रे,
राजसभामाहि पंडिउ वररुचि कीउ अभिमाना रे । लाल० । ७

वररुचि पडित तु पीछइ, गगकु जस गावइ रे,
यत्र करी कल-कोथली, द्रव्य भरी सो पावि रे । लाल० । ८

नंद नृप सकडाल शु, गगा तटि मिली आया रे,
मत्री दूजो वार तिहां, बभण नाम गमाया रे । लाल० । ९

वररुचि पडित कोपीउ, मंत्र कोउ आलोचइ रे,
मंत्री मुशु वयर कीउ, अहिनिसि मनहि सोचि रे । लाल० । १०

पग शुं धूलि उछालीइ, सर ऊपरि आइ लागइ रे,
इशु यानि जीऊ आपणइ, पडित काहे न जागइ रे । लाल० । ११

वररुचि माडी लेषसाला, पडित छात्र पठावि रे,
छीलर जल यू हमलु, कारणि किउंहूं आवि रे । लाल० । १२

शरीया कइ वीहवा समइ, चामर छत्र समारया रे,
पण्डित अवसर पाइउ, वररुचि वइर चीतारयु रे । लाल० । १३

एक कीउ तिरिण दूहरु, सवि वालकक़ु सीषावइ रे,
चाचर चुहटि सवि गली, राजलोकक़ुं सुणावइ रे । लाल० । १४

मूरख लोक न जाणही. यू सकडाल करेसी रे,
नदराय मारी करी, शरीउ राज ठवेसी रे । लाल० । १५

नदराय कुणइ घोइ सुण्यु, कोप धरिउ तिणि चिंता रे,
मत्री चित्ति विचारिउ, राजा किमका मित्ता रे । लाल० । १६

वेश कुनारि जूआरीइं, दूरजन अतिहिं विगोवइ रे,
अगनि साप राजा योगी, कवहू न मीत होवइ रे । लाल० । १७

कुल राषणकु आपणु, मत्री मत्र उपायो रे ।
शरीइ मत्री मारीउ, राजसभा जव आयो रे । लाल० । १८

सो कचण वषा पहिरीइ, जु कानहु तुं तोरइ रे,
मंत्री सोइ जाणीय, जु राजा किहु लाडि रे । लाल० ।१९

शरीया केरे वोल पणी वोलि राजा नदो रे,
तु मेरि मत्री सरु, करि मनमाहि आणदो रे । लाल० । २०

थूलिभद्र सुणी चीतवइ, ए ससार असारो रे,
माता पिताकु काहू नही, नही कोऊ परिवारो रे । लाल० । २१

थूलिभद्र दीख्या लेइ श्री सभूति सुमीस रे,
गुरु शु सयम पालोउ वहइ रे सो निसदीम रे । लाल० । २२

सरीउ कोश्याके घरे, वचि वचि आवइ जावइ रे,
मारण वररुचि के ताइ, कोऊ मत्र ऊपावइ रे । लाल० । २३

वहिनर कोश्या वेश्याकी. तास्यु वररुचि रातु रे,
त्यजी आचार सु आपणु, रहइ सदा मनि मातु रे । लाल० । २४

जइ परमेश्वर रूसीइ, नाऊ घालि कूटि रे,
कि वेस्या-घरि मोलकइ, कि खेलावइ जूइ रे । लाल० । २५

बुद्धि कोई एहवी कीइ, नद कोप्यु सो हकारिउ रे,
सभामाहि तन मद वधु. वररुचि पण्डित मारिउ रे । लाल० । २६

श्री सम्भूतिविजय आगइ, तीनि यती यू भासइ रे,
सीह सापं कूआनि पासइं, ठामि रहइ चुमासइ रे । लाल० । २७

सहि गुरु-वचन लही ते त्रिणि पुहता आपणइ ठामि रे,
थूलिभद्र मनि चीतवइ, गुरु चरणे सीस नामि रे । लाल० । २८

वचन तुम्हारु जइ लहू, कोशा घरि वरसालु रे,
च्यारि मास लगइ तिहा रहू, सील महाव्रत पालु रे । लाल० । २९

गुरु-आज्ञा पामी करी, थूलिभद्र विकसता रे,
कोश्या देषी चीतवइ, मुझ घरि आयउ कता रे । लाल० । ३०

चित्रसाली तुह्म इहां रहु, तन धन एह तुम्हारा रे,
वार वरसकु नेहलु, प्रीऊ तह्म चीति चीतारु रे । लाल० । ३१

पावस आवी ऊनयु, झिरिमरि वरसि मेहो रे ।
ते माहि चमकि वीजूरी, जागइ दीप सनेहो रे । लाल० । ३२

प्रीऊ-प्रीऊ चातक वोलता, मोर झकार सुनायो रे,
कहू कहू विचि कोकिला, बोलइ शब्द सुहावइ रे । लाल० । ३३

घनकारी घटा अम्बर छायु, वरसे रम घन गाजि रे,
साझ समइ कोशा वेश्या, सवि शणगार ते साजि रे । लाल० । ३४

रूप देषि सव कोश्याकु, जानु की अपच्छर लाजि रे,
सरगि लोकि छानी रही, रति उपमा तसु छाजइ रे । लाल० । ३५

केश श्याम अति सोहता, गूथे फूल अपारा रे,
श्याम रयणमाहि चमकता, योति सहित तनु तारि रे । लाल० । ३६

निलवटि सोभा देषता, आठमि-ससि याणे दीपइ रे,
मष पूनिमकु चन्द्रमा, उ कलक नु छीपइ रे । लाल० । ३७

वेहू अधर अमृत भरे, प्रीति रग तनु रातु रे,
दाडिम शरिषा दांतला, देषि चित्ति सुहावइ रे । लाल० । ३८

विकसित कमलनयन वनि, कामवाण अनिया रे,
षाचइ भमुइ कमान शु, कामी मृग-मन मारि रे । लाल० । ३९

कानहि कुंडल धारती, जानु मदन की जाली रे,
स्यान भुयगी यूं वेणी, यौवन धन रपवाली रे । लाल० । ४०

दोऊ कुच ऊपरि कुंचकी, जानु की उठंभा दीया रे,
थंभ दोऊ ऊचे वनइं, वास मदन तिहां लोउ रे । लाल० । ४१

कुच ऊपरि नवसर वण्यु, मोतीहार सोहावइ रे,
परवत ति जन ऊतरती, गंग नदी जल आवइ रे । लाल० । ४२

रोमावलि रेषा वणी जानु की दीमि थंभो रे,
कुचभारि नमसइ कवइ याणि कि दीउ उठंभो रे । लाल० । ४३

नाभि गभीर सोभावणी जानु की मदन-परोवर रे,
कामीजन तृसना मिटि, देषित रूप मनोहर रे । लाल० । ४४

कटि तटि जीतु मृगराजा, जानु लीउ वनि वासो रे,
रंभ थंभ जसी वणी, उर युगल प्रकासो रे । लाल० । ४५

कमल चरण की मोभा ति, जाइ छपिउ सिर मोही रे,
रगत समोकल देपी कि, मानु हम हि को नाहि रे लाल० । ४६

कोश्या कर ग्रही आरमी, मृगमद-तिलक वणावइ रे,
हाथे साकली ए जानु, कामि कइ आण मनावइ रे । लाल० । ४७

नयनिहिं कज्जल सारीउ, याने अ वेरु (उ) जयालो रे,
चित्त परांइ जो दुप देवइ, तिन्ह मुप कोजि कालो रे । लाल० । ४८

सरि उढी तिणि चूनरी, कामधजा जनु लहकइ रे,
चूआ चंदन कस्तूरी, अति सुवास महमहकि रे । लाल० । ४९

मलपति गज-गति-गामिनी, हंस तणी परि चालइ रे,
अवतरी याणे पदमनी, सुर नरपति मनि टालि रे । लाल० । ५०

झणणि झणणि कटि मेपला, चरणि नेउर साजि रे,
मदनराय के उवारणइ जाणु दमामा वाजि रे । लाल० । ५१

नव सत साजे कामिनी, थूलभद्र पासि आवइ रे,
सपी संग मली कोश्या, प्रीयशु प्रीति जगावइ रे । लाल० ५२

नयन काम-रस लावति बोलि बोल रसाला रे,
काहे न बोलु प्रीय ! मोशुं तुह्म तु दीनदयाला रे । लाल० । ५३

उलू सनेह बारह वरसी, काहे न चित्ति विचारु रे,
थूलभद्र प्रीअ ! मोषुं, तुहि कंगन धारा रे । लाल० । ५४

एक अ गकइ नेहरइ, कछू न होवइ रंगो रे,
दीवा के चित्ति माहे नही, जलि जलि मरि पतगो रे । लाल० । ५५

रे मन प्रीति न कीजीइ, कीजइ एकगी काहो रे,
पाणी के मनही नही, मीन मरि षणि माहिउ रे । लाल० । ५६

एक अ गकु नेहरु, मूरषि मधुकरि कीनु रे,
केतकी के मनही नही, भमर मरि रस-लीणु रे । लाल० । ५७

प्रीति एकगी जइ कीजि, तु सव किछू न लूहीइ रे,
होअ चकर दोषत रहइ, चांदु सुथिर न रहाई रे । लाल० । ५८

पूर कमलको सोमही, कमल सूर मुष जीवि रे,
एक अ गकइ नेहरइ रग किछू नही होवइ रे । लाल० । ५९

नेह एकग न कीजीइ, जिउ चातक घन नीरो रे,
सारग पीउ पीउ मुषि बोलि, मेह न जानइ पीरो रे । लाल० । ६०

चित्ति विकार देषावती, हावभाव मुषि बोलइ रे,
नयणकी साण सवि जाणती, घूंघट के पट उलि रे । लाल० । ६१

वीणा पग वजावती, कोश्या रंगि राचि रे,
ताल मृदग तिहा बाजि, नृत्य करि मन साचि रे । लाल० । ६२

राग छत्तीस अलावती, सिंगारो पद गावि रे,
चुसट्ठि गुण जाणइ कला सवि सगीत सुणावइ रे । लाल० । ६३

गीत त्य बहू तिणि कीनी, कोश्या मन पछतावि रे,
थूलिभद्र डोलि नही, धर्मध्यानि लाइ लाइ रे । लाल० । ६४

कोश्या तु इम वोलती, धन धन तु मुनिराया रे,
नारी सग न जुडरिउ, वदुं तेरे पाया रे । लाल० । ६५

नारी कुण न पडीआ, भोज मुज दस सीसो रे,
ने नारी वसि नवि पडया, नित हू नामु सीसो रे । लाल० । ६६

कान्ह पडयुं वसि कामकइ, काम विगोयु ईसो रे
पारवती आगलि नाच्यु, भरतकला निसिदीसो रे । लाल० । ६७

सुरपति कामि बिटबीउ, आइ आहिल्या रामइ रे,
विश्वामित्र पारासर तापस पडीआ कामइ रे । लाल० । ६८

नंदिषेण मुनि ते नम्यु, कामिहि आर्द्र कुमारो रे,
जिणि रहनेमि डोलईउ, वोले कामविकारो रे । लाल० । ६९

काम सुभट जिरिण जीतीउ ते धन्न धन्न वषाणु रे'
ये नर काम न वसि कीउ, थूलिभद्र सो जाणो रे । लाल० । ७०

मन बचन काया भावशु, थूलिभद्र गुन गावि रे,
चरम विद्यात जे को कीउ सा अपराध षमावइ रे । लाल० । ७१

थूलिभद्र मुनि उपदेस्यु, देम-विरति तिरिण लीणी रे,
जिन लिखमी के नंदना, वेश्या श्राविका कीनी रे । लाल० । ७२

चुमासु पूरु करी, जाइ सगुरु-पद वंदि रे,
दुःष्कर दुःष्कर तव कीउ, साह्मा साह्मा ऊठि आणंदि रे । लाल० । ७३

त्रिहू साधु मच्छर कीनु, ते त्रण्हि मति मूढा रे,
सीह गुफा जु मनि रहिउ, क्रोध धरि चित्ति कूडा रे । लाल० । ७४

तिवइ मुनि सहिगुरु पूछीउ, जइ तुह्म आयस पाउ रे,
कोश्या वेश्याकइ घरे हूं चुमासुं ठावुं रे । लाल० । ७५

श्रुतज्ञानी गुरु इम कहि, थूलिभद्र सम होवइ रे,
सो कोशाके घरि रहइ, जु निज सील न षोवइ रे । लाल० । ७६

सो मुनि गजपति वरजतां कोशाकि घरि पासइ रे,
करु परीक्षा एहरी, वेश्या तित्ति विमासइ रे । लाल० । ७७

करि शरणगार सव्या समइ, जु मुनि पासइ आई रे,
देषत हा चित्त लाईउ सुद्धि रही नही कांई रें । लाल० । ७८

कोशा कहि न मानीइ धन विरण इहां कोई रे,
धरमलाभ कहीइ नाही, अरथ-लाभ इहां होई रे । लाल० । ७९

चुमासइ विषया-वसइ देस गयु नेपालि रे,
रतन कवल आण्यु तिरिण, कोशा चोषलि घालि रे । लाल० । ८०

शीत-रतन-कवल षोयु, तिं मतिमूढ मयांणा रे.
होड न कीजि पारकी, थूलिभद्र शुं माना रे । लाल० । ८१

आट्ठि तरति देषति काग रतन कहूं षाया रे,
होड पराड जे करि, तलि शर ऊपरि पाया रे । लाल० । ८२

सीष देई प्रतिबूझव्यु, सो मुनिवइ गुरु पासइ रे,
आलोयरण तपू तिरिण लीउ, रहिउ सगु तुलि पासइ रे । लाल० । ८३

एक दिवसे कोशा घरे, राज-मारथी आयु रे,
आंब उतारउ बाण शुं, गुण आपणुं दिषाड्यु रे । लाल० । ८४

कोशा मान उतारती, सूई ऊपरि नाचि रे,
वोलि बोल सुभामिनी, कवण कला इन साचि रे । लाल० । ८५

कला वही थूलिभद्र की, जिनि निज सील न षंडिउ रे,
नारी सगतिमाहि वस्यु, भूमंडलि जसु मंडिउ रे । लाल० । ८६

अगनि जिहां नेडो वलइ घृत तिहाकुं दीजि रे,
एहकु घन वूठउ किणि, तूलिभद्र विनु कीजि रे । लाल० ८७

इणु वचन कहि सारथी, चित्ति विरागी कीउ रे,
थलिभद्र गुण चीतवतु, वइरागइं चारित लीनु रे । लाल० । ८८

बार वरस कुशमि समइ, सवि मिली संघ विमासइ रे,
सुष निरवाह आजीविका, गया समुद्रतट पासइ रे । लाल० । ८९

जु सुभक्ष हूउ तवइ, संघ पाटलपूरि आवइ रे,
अ ग इग्यारह मेलीआ, कही कही तइ पाया रे । लाल० । ९०

थूलिभद्र देवइ कइ सवि मिली संघ विमासइं रे,
पूरव पाढिवा मोकलिउ भद्रबाहू गुरु पासइ रे । लाल० । ९१

दस पूरव श्रुत जु गुण्या, सात वहिनि आणंदे रे
दीष लेइ ते वहिरती, भद्रवाहू गुरु वदि रे । लाल० । ९२

थूलिभद्र मनि चीतवी, सिंहरूप धरी विठउ रे,
गुरुवचनि जाई वदीउ, एहू अचितम दीठउ रे । लाल० । ९३

जक्खा वहिनि महासती, वोलि बोल सुहाता रे,
थूलिभद्र धु सवि कही, सयमकी निज वाता रे । लाल० । ९४

सरीआ की सवि वातडी, भाइ प्रति सुणावइ रे,
महाविदेहि वदीउ, सीमंधर जिनराई रे । लाल० । ९५

सीमधर सउ मुषि कहिउ, दोष नही तुझ लगारो रे,
धरमवुद्धि तइकीउ, शरीआकुं उपगारो रे । लाल० । ९६

इम कहि सात महासती, वाचि गई निज ठामि रे,
थूलिभद्र मुनि वाचना, गुरु पासइ नही पामइ रे । लाल० । ९७

थूलिभद्र चरणिहि लागु, निज अपराध षमावइ रे,
वीनती करवा गुरु आगइ, सघ मिली सवि आवइ रे । लाल० । ९८

सघ वचनतइ सूत्रथी, पूरव च्यारि पढाया रे,
चऊद पूरवधर विहरता, थूलिभद्र गुरुराया रे । लाल० । ९९

त्रविक लोक प्रति बोधता, महीमंडलि उपगारी रे,
शील शरोमणि गुणनिलु, पच महाव्रत धारी रे। लाल०। १००

अवर मुनीश्वर वनि वसइ, सील महाव्रत पालइ रे,
थूलिभद्र कोशा घरे, साध्यु मदन वदीतु रे। लाल०। १०१

वेगे त्यजि जउ उपइ यती, तु होवइ व्रतचारी रे,
दूलिभद्र रहिउ सील शु नितु षटरस आहारी रे। लाल०। १०२

नेमिनाथ परवत लीइ, काम सुभट येणि जीतु रे,
थूलिभद्र कोशा घरे, साध्यु मदन वदीतु रे। लाल०। १०३

थूलिभद्रकु जस रहिउ, चुरासी चुवीसी रे,
सील इम जु पालीइ, तु उपमा पाइसी रे। लाल०। १०४

ब्रह्मचर्य पालइ जि के, ते व्रत च्यारि आराधइ रे,
नरय-तरी ना दुख लहि, नर सुर सुष सिव साधइ रे। लाल०। १०५

धर अडोल तुहीं रहइ, जइ निश्चल हुइ थभो रे,
धरम महिलकु जाणीइ, सील सबल उठभो रे। लाल०। १०६

मालदेव मुनि वीनवइ नारी-सगति टालु रे,
थूलिभद्र मुनिनी परि, सील महाव्रत पालु रे। लाल०। १०७

मंगल कलश फाग

खरतर गच्छनाचार्य अमर माणिक्य के शिष्य वाचक कनकसोम[1] द्वारा मंगल कलश फाग की रचना मुलतान[2] मे सम्वत् १६४९[3] मार्गशीर्ष सुदी का हुई थी। इस कृति की पुष्पिका मे कृति के फागु होने का उल्लेख है।[4] परन्तु कही-कही मगल कलश चरित के नाम से रचना को सम्बोधित किया गया है। एक स्थल पर मगल कलश प्रबध और फागु दोनो का सहवर्ती उल्लेख किया गया है।[6] वस्तुत: यह कृति प्रबध के रूप मे निबद्ध आख्यानात्मक फागु है। यह दीर्घकाय फागु १६६ छन्दो मे निबद्ध है। इस फागु के अतिरिक्त वाचक कनकसोम ने सम्वत् १६३८ मे, खभात मे, 'आसाढभूति रास' और सम्वत् १६४४ में मारवाड के अमरसर मे 'आद्रकुमार–चौपाई' की रचनाए की हैं।[7]

मगल कलश फाग की वर्ण्य वस्तु सुप्रसिद्ध जैन कथा है। इस कथानक मे सम्बन्धित अनेक गद्य-पद्य रचनाए संस्कृत और जूनी गुजराती मे लिखी गई हैं। सन्दर्भित कृति मे उज्जयिनी के श्रेष्ठि धनदत्त और सत्यभामा के पुत्र मगल कलश और चपा के सुरसुंदर नाम राजा की पुत्री त्रैलोक्य सुदरी के अप्रत्याशित मिलन, विवाह, वियोग और पुर्नमिलन की कथा सुन्दर ढग से व्यञ्जित है।

---

१. खरतर गच्छि सुहागनिधि अमरमाणिक गुरुसीस,
   कनकसोम वाचक कहइ मगल चरित जगीस ॥ (मगल कलश फाग, १६६)

२ मूलताण माहि ए कीयउ मर्गसिर सुदि उल्लास। (मगल कलश फाग, १६४)

३ सवत सोलहसइ ऊपरि गुण पचासि।
   ए कीधउ मगल कलश चरित्र विलासि ॥ (मगल कलश फाग, १६३)

४. इति मगल कलश फाग समाप्त. ॥

५. मगल कलश फाग १६३,१६६।

६. मंगल कलस तणउ प्रबंध, करवा मुझ राग,
   शातिनाथ जिनचरित्र थकी उधारिस्यु फाग ॥ (मगल कलश फाग, २)

७ जैन गुर्जर कविओ, भाग १, पृ० २४५–४७।

यद्यपि कथा बहुत ही रोचक, सुन्दर एवं प्रवन्ध रचने योग्य है किन्तु कवि ने कृति मे किस्सा भर कहा है। कृति में काव्यात्मक दृष्टि से ऐसा कोई स्थल नही है जो विवेचनीय और विचारणीय हो। जैन पुराणो से चली आई कथा को सामान्य रूप से पद्यबद्ध किया गया है। त्रैलोक्य सुंदरी के सौन्दर्य का वर्णन भी अनुभूतिहीन है।

भाषा अवश्य सरल तथा कथानुकूल है। बीच-बीच मे लोक जीवन मे प्रचलित लोकोक्तियो को भी प्रयुक्त किया गया है, जो भाषा की सौंदर्य-वृद्धि में सहायक रही हैं।

मंगल कलश फाग

रचनाकाल – सम्वत् १६४६

ढाल फाग

सासणदेवी सामिणी ए, मुझ सांनिधि कीजइ,
पुण्य तणा फल गाइयइ ए, सूणतां मन रीजइ ॥१॥

मगल कलश तणउ प्रबध, करिवा मुझ राग,
शांतिनाथ जिन चरित्र थकी ऊधरिस्यु फाग ॥२॥

उज्जयणी नगरी विसाल, इणि भरति-पुराणी,
वइरसिंह तिहा भूपती ए, सोमचद्रा राणी ॥३॥

सेठि तिहा धनदत्त वसइ, श्रावणगुण जुत्तउ,
धर्म्मंतथा सुविनीत, शील गुणगणहि पवित्तउ ॥४॥

दयादानसनमानभली, सत्यभामा नारी,
रूपवती गुणवती सती, पियपेमपियारी ॥५॥

पिणि तेहनइ सतान नही, वड एवड षोड,
सेठि देषि चिंता करई ए, मनमहि मुषमोड ॥६॥

परमेसरि धन रूप दीयउ, पणि सुत नवि दीनउ,
तिणि सुत विणि गृहवास, जिसउ मुख नयण विहीणउ ॥७॥

नाचि नाच जिम मोर चलण देषीनइ रोवइ,
झणि पंर सेठि हियइ विचारी नारी मुख जोवई ॥८॥

सुणि सुणि नदन ए ढाल

प्रीयमुख देषी मणमणउ, रमणी कहि भरतार,
दुषकारण तुम्हनई किउ, ते मुझ कहूउ ए विचार ॥९॥

सुणि सुणि प्रीतम वालहा, ए ससारि मझारि,
नरभवि जिनध्रम दोहिलउ, लाधउ जनम म-हारि । सु० ॥१०॥

सेठि कहइ नारी ! सुणउ, तुम्हनइ नहीय संतान,
इम चीतवता अहिनिसिइ मुझ चिति वसई न आन । सु० ॥११॥

सतिभामा रमणी कहइ, पुन्यइं वछित होवं,
धन सतान समाधि सुं, सूप विलसइ सब कोइ । सु० ॥१२॥

तिहि ज पुन्य करउ तुम्हे, देव सुगुरुपदसेव,
घउ तुम्हि दान सुपात्रनइ, आरावउ जिनदेव । सु० ॥१३॥

इम करता जउ सुत हुवइ, तउ अति भलउ विचारि,
वहीतरि परलोक साधिवा, करि उद्यम भरतार । सु० ॥१४॥

हरषित सेठि कहइ इमइ, मनभावत उपदेश,
ते मुझनइ हित चीतवइ, नारि भली मति देसि । सु० ॥१५॥

जिनवर प्रतिमा पूजिवा, वनमालीनइ हकारि,
पुष्फ भणी धन घई घणउ, आंपण जाइ सवार । सु० ॥१६॥

पूजिय जिन प्रतिमा घरइं, देवहरइ जिनराइ,
सेव करी निज भगतिस्युं प्रणमइ सहगुरुपाय । सु ॥१७॥

ढाल जिन पूजनानि तु करह इणि पर

सुणि वखाण सुसाधुनउ, पचखाण करि सुअतिथिनइ,
प्रतिलाभ ल्यइ धनलाभनउ, दुइ काल आवश्यक करइ । १८

.... नितु साहम्मीवच्छल करइ,
इणि परइ शासनदेवि त्रूठि, पुत्रनउ ते वर वरइ ।१९

धनदत्त हरषित मन थयउ, धरम त्रषइ परभावि,
सोवन कलस सुपनइ लहचउ, नारि कहइ निसि आवि । २०

प्रिय कन्हइ आवी सुपन कहती, उपरि पुत्ररतन धर्यउ,
नव मास अधिक पुत्र जायउ, नाम मगलकलस करचउ । २१

चन्द्रमानी परि कला ग्रहतउ, आठ वरष थया जिसइ,
दिन प्रतउ तात ! किहा सिधारउ ? सुणउ पुत्र ! कहइ तिसइ । २२

दूहा

वच्छ ! अम्हे आरामना, पुष्फ लेवा काजि,
दिन प्रति देहरासरि जइ पूजउं श्री जिनराज । २३

हूं पिणि आविसु साथि तुम्ह, जोएवा आराम,
गयउ साथि आरामि कइं, दीठां फल अभिराम । २४

चउपई

फल लेई ढोवा जिणहरइ, कुलआचार लघुवय पणि करइ,
वीजइ दिनि कहइ, हू आणिस्युं तुम्हे रहउ वइठा ध्यानरयउं । २५

अति आग्रहि मान्यउ तसु वचन्न, दिन प्रति आणइ कुअर ते सम,
धम्मभ्यास करइ इणि परिइ, थयउ वृतात तिणइं अवसरइ । २६

भरतक्षेत्रि चपामहापुरी, अमरापुरी जाणे अवतरी,
सुरसुदर नामइ भूपाल गुणावली राणी ससिभाल । २७

कल्पलता दीठी सुपनमइं राइ विचार कीयउ मन गमइ,
सुताजनम होस्यइं मुझ घरइ, देषत मुष नयणाणि सुखकरइ । २८

अनुक्रमि जाई गुण सुदरी, दीयउनाम त्रैलोक्य सुदरी,
लवणिम रूप तणी उवरी, जोवनइ अपछर अवतरी । २९

मृगलोयण मुष चद समान, नासा कीर कोकिला वाणि,
उज्जल दसन, अधर अति रग, जघन वयण थन पीन उतग । ३०

केहृग्लिक हतगामिनी, सोल शृगार धरइ कामिनी,
नरपति देषि चितवइ इसउ, पुन्य जोगि प्रिय मिलिस्यइ किसउ ? ३१

राणी ! सुणउ कुमरी केहनइ, तुम्हे कहउ आपउ तेहनइं,
जीवतव्य हूती वल्लही परदेसइं ए देस्यां नही । ३२

आपणा मत्रिपुत्र तेहनइ, परणावउ कुमरी एहनइ,
सुबुद्धि मत्रिनइ बोलावीयउ, हरषित रायघरइ आवीयउ । ३३

मत्री ! सुणि, ताहरा पुत्रनइ, मइ बेटी दीधी इकमनइ,
मुहतउ कहइ, सुणउ नरराय ! एह वातह मनावइराय । ३४

मिरषड कुलि राजसुत भणी, परणावीयइ कुवरि आपणि,
राजा कहइ, मइ दीधी सही, मेरी सउ स वोलिवउ नही । ३५

मुहवउ घरि आवी चीतवइ, किसी ? विमासण कीजइ हिवइ ?
कुष्टरोग दूषित मम पुत्त, किम परणावउ एह अजुत्त । ३६

राजानउ आग्रह एतलउ, आगइ नही पाछइ वाघलउ,
आणीजउ जउ कुवरी घरइ, तउ लषमी आवइ बहु परइ । ३७

ढाल धन धन ते जगि जाणीयइ

मनि चीतनयइ इणि परइ, मत्री लाधउ एक उपाय,
कुलदेवी आराधिसु, मनवछित करिस्यइ आय ।
सुवुधि भली मुझ ऊपनीजी, इणि बुद्धइ होयास्यइ माणद । सु० आं० । ३८

विधि आराधी देवता, ते परषि आवी पासि,
किरिण काजइ समरी तुम्हे ? ते कहिज्यो होजिम आगू रासि । सु० । ३९

तू समरथ जाणइ सहू, अम्ह पुत्रनउ जे रोग,
तिम करउ आणी कृपा, जिम थायइ ए सुन नीरोग । सु० । ४०

कहइ देवत, मंत्री ! सुणउ, नवि कर्म्म छूटइ कोइ,
कोटि ऊपाय करउ घणा, विण भोगव्या हो ते अंत न होइ । सु० । ४१

मंत्रि कहइ, देवी ! सुणउ रूपवंत आणउ कोइ,
ते विहाई कुंवरी, हु आपिसु हो निज पुत्रनइ जोइ । सु० । ४२

आणिसु हू परदेसथी, पुर पोलिनइ जु दुवारि,
बालिनइ लेई करी, तुम्हि करिज्यो हो काम विचारि । सु० । ४३

मंत्रीसर हरषित थयउ, वीवाह करिवा काजि,
हयपालनइ सदेस कहि, रषवालउ हो राष्यउ मंत्रिराज । सु० । ४४

उज्जयणी नगरी जिहां जी, कुलदेमति तिहा जाइ,
मंगलकलश जिणि मारगइ जी, तिणि ते सबद कहाइ । ४५

धन धन त्रिलोक्य सुंदरी जी, जहनइ एहवउ जी भरतार,
भाडइ परणेस्यइ जाइ जी, चंपानगरि मझारि । धन धन० । ४६

वाणि सुणी संसइ धरइ जी, कहिसु पितानइ वात,
बीजइ दिनि वलि इम सुण्यउ आज जणाइसु तात । धन० । ४७

इम चींतवता कुमरनइ जी, वाउलि ताणी जाइ,
ऊपाडी आण्यउ तिहां जी, चंपानयरी ठाइ । धन० । ४८

पथ भयतृषित सरोवरइ, करि अमृतजलपान,
नगरी परिसरि ते गयउ जी, सध्यासमय निदानि । धन० । ४९

सकेती वर ले गया जी, मुहता मंदिर वाडि,
न्हवण वसन भोजन करयउ जी, वेसास्यउ मन माडि । धन० । ५०

किणि कारणि मुझनइ सदा जी, भगति करेउ धरि भाउ,
परदेसीनइं कुण करइ जी ? अम्हवइ ते समझाउ । धन० । ५१

कुण नयरी कुण देस ए जी, कुण राजा कुण तुम्ह ?
काम किसउ तुम्हारइ कहउ जी ? ते समझावउ अम्ह । धन० । ५२

मंत्री कहइ, चंपापुरीजी, अंगदेष अभिराम,
सुरसुंदर नरपति इहा जी, मंत्री सुबुद्धि मुझनाम । धन० । ५३

राजसुता अति सु दरी जी, माहरा सुतनव काजि दीधी,
ते सुत कोढीयउ जी, किम परणावु आज ? धन० । ५४

ते परणी मुझ पुत्रनइ जी, देई तुम्ह घरि जाउ,
इणि अरथइ आण्यउ तुनइ जी, कुलदेवी लहि दाउ । धन० । ५५

मंगल कहइ, किहा हासिणी जी, सग जिसउ किह का
तिम रोगी सुत कोढीयउ जी, रूपवती नही लाग । धन० । ५५

एह अकारिज नही करू' जी, ए कुकर्म चडाल,
मन्त्री कहइ तुझ मारिसु' जी, काढी षडग कराल । धन० । ५७

साहस धरि मगल भणइ जी, मरिवउ छइ इक वार,
एहु कर्म्म करिस्यु' नही जी, लहि श्रावक अवतार । धन० । ५८

विचि पराबन पुरुष पडया जी, मगलनइ समझाइ,
वणिगबुद्धि निज केलवी जी, पहिलउ भाडउ ल्याइ । धन० । ५९

राजा जे द्यइ दाइजउ जी, ते मुझ द्यउ मंत्रीस,
परणी अम्हारी राषिज्यो जी, हम तुम्ह विचि जगदीस । धन० । ६०

उज्जयणी पुहचाविज्यो जी, वित्तसु अम्ह द्यउ बोल,
मुहत मान्यउ वचन ते जी, रंग रली चित्र षोलि । धन० । ६१

ढाल ऊलाला

स्नान करावीय रग, कुमरनइ धरि उच्छरगइ,
कीधला विविध शृंगार, वस्त्राभरण प्रकार । धन० । ६२

गजवरपधि आरोहइ, रूपइ' (ज) नमन मोहइ,
जाणे कामकुमार, सुन्दरी जोग भरता (र) । धन० । ६३

राजा अधिक आणंद बोलाव्या नरवृ द,
गावइ मगल गीत, सधव वधू कुल रीत । धन० । ६४

च्यारे मगल मडी, कृपण कुरीत ते छडी,
दीधा वस्त्र अनेक, आभरणादि विवेक । धन० । ६५

थाल अ वालू कचोला, मणिमाणिक रथ घोडा,
कुमरीनइ हथ लेवइ, प्रीतइ नरपति देवइ । धन० । ६६
अश्व पच तिणि दीधा, हथ मुकलावा कीधा,
वाजित्र वाजि, ते तूरि, दान दीया जन भूरि । ६७
मगल वहू ले आव्यउ, घरमाहि पूषि वधाव्यउ,
मगल सु दरीय बेवि, सुणिहर आव्या हेवि । ६८

मुहतउ भाव जणावइ, मगल बाहिर आवइ,
जोरि न काढयउ ए जावइ, राजानै मनि भावइ । ६९

चलचित निज पति पेषी, कारण कउण विशेषइ,
पतिनउ पास न छडइ, कुमरी दृष्टि षडइ । ७०

देहचिंता मिसि ऊठयउ, सु दरी न मेल्हइ ते पूठउ,
राग धरी नवि बोलइ, सूनइ चिति घरि डोलइ । ७१

कहउ कुहार ! काई बावइ ? क्षुधा दीपइ त्रिण पाधइ,
रुचता मोदक अणावड, स्वामी ! ल्यउ तुम्ह भावइ । ७२

मगल भाव जणावइ, एतउ मोदक भावइ,
उज्जयणी जल पावइ, तउ हम परउं सुहावइ । ७३

चमकी चित्ति कुमारी, अघटत रात विचारी,
मातानउ घर होस्यइ, अवती नाम ते लेस्यइ । ७४

दीधा पच तमोल, सध्याकाल अवोल,
निकस्यउ ते मिस लेई, आवि सु सहिय वलेई । ७५

मदिर थकीय नीकलयउ, जाइ साथनइ मिलीयउ,
दीधी वस्तु सभाली, हय रथ सोवनथाली । ७६

मुहतउ ते मुकलाव्यउ, उजयणी पथि आव्यउ,
पूछी निश्चय कीधड, जै दीवड तेइ लीधड । ७७

ढाल तूं वडउ लेसालीयउ ए ढाल

मातापिता मगल तणा ए, वहु विधि करीय ते सोग,
ते दुक्खरहित थया ए, मगल तणइ संजोग । ७८

निज कुसलि घरि आवीया ए, पूरव पुन्यसंयोगि,
मगलकलश आवीया ए, रथ उपरि चडयउ घर भणी ए । ७९

आवतउ देषीयउ मात, पिणि उलष्यउ तिणि-नही ए,
मारग नही इहां जात, निज कुसलि घरि आवीया ए । ८०

तउ पिणि पोलि माहे गयउ ए, माय कहइ सेठिनइ जाइ;
ते सेठि साम्हउ थयउ ए, देषि सुन उलष्यउ ताइ । ८१

आलगी षोलइ लियउ ए मातपिता धरि राग,
मनि आणद अति थयउ ए, धन धन पुत्र सोभाग । नि० । ८२

हरिषित माय पूछइ इसउ ए, किहा रहयउ किण विरतंत ?
ए रिद्धि किहां लही ए, अचरिज ए महत । नि० । ८३

वात माडीमइ सवि कही ए, अहो अहो पुत्रनउ भाग,
हिव मञ्व बंध्या तिहा ए, जिहा केहनउ नही लाग । नि० । ८४

सर्व कला भणिस्यु अम्हे ए, पाटकनइ घरि जाइ,
नित पढत गुणत रहइ ए, करत अभ्यास बुधि थाइ । नि० । ८५

पाछिली वाते कहियइ हिवइ ए, संभलिज्यो चित लाइ,
तिणि मत्रि किमु कीयउ ए, पुत्रनइ लीयउ वोलाइ । नि० । ८६

ढाल साधु न धंसीयइ

मत्रीपुत्र तिहा गयउ, सेज आरुढउ जाम,
देख्यउ ते नर कोढीयउ, मनमाहि सको तामो रे,
कर्मद ा फनी धिग् धिग् कर्म्म अकामो रे । कर्म्मदसा फनी, आ । ८७

करफरमण करिवा भणी उद्यत हूवउ जाय,
कुमरी वाहिर नीकली, दासी पूछइ तामो रे । क० । ८८

कहि सखि ! तु काइ दूमणी ? सुणि सखि ! गायउ भरतार,
कामरूप मनमोहनु, तजि मुझनइ निरधारो रे । क० । ८९

कहि हिवसाइ कोई कोढीयउ आव्यउ मुझ आवासि,
ते परि जाणी परिहरी, आवी छु तुम्ह पासो रे । क० । ९०

दासीमाहे सुइ रही, राति विहाणी ताम,
पीहरि पाहुती सुदरी, मुहुतउ जाण्यउ अकामो रे । क० । ९१

दुर्बुधी राजा कहइ, वइठउ करि मुख साम,
पूछइ राइ विषावादस्यउ, तुम्ह मनि हरषनइ डामो रे । क० । ९२

कर्म तणी गति स्यु कहू ? कहिवा जोग न राज,
कुमर जे देख्यउ ते तिसउ, विणि ते थयउ काजो रे । क० । ९३

कुमरीनइ सयोगथी, कोढी थयउ कुमार,
हा हा रव भूपति करइ, हूयउ कुण रतन विणासो रे । क० । ९४

निश्चय नय जिनवर कहयउ सुप दुष करइ न कोइ,
पिणि व्यवहारइ नयइ करी, देषि सुतानइ होइ रे । क० । ९५

जइ मइ हूंत नही सुता, तउ किम हुत विकार ?
दोष नही स्वामी ! तुम्हा, थयउ गुणकरमह माहारो रे । क० । ९६

इम प्रपच करि ते गयउ, सुदरि चढयउ रे कलक,
इष्ट अनिष्ट थई सुता, राजानइ मनि सको रे । क० । ९७

नवि बोलावइ कुमारीनइ, नवि जोवइ धरि राग,
एकई धूणई पडि रही, मातानइ गृह भागो रे। क० । ९८

चीतवती मनमइ इखउ, पूरव भव दुःकर्म्म,
जे मुझ पति छाडी गयउ, उदय थयउ ते अधर्मो रे। क०। ९९

कुल कलक पाम्यउ इमइ, किसउ करु, किहां जाउं ?
व्यसन पडी, करमइ नडी, देव विडवी साउ रे। क०। १००

इम चीतावतां सभरयउ, पति उज्जेणी वचन्न,
सही तिहां पहुतउ हुस्यउ, कुमरी बुद्धि उपन्नो रे। क०। १०१

करिण उपाइ तिहा जई, उलषि निज भर्तार,
ए कलक ऊतारिसु, जिम जाणइ ससारो रे। क०। १०२

एक वार माता मुंनइ, जउ वोलावइ तात,
कान देनइ सांभलइ, माहरा मननी वातो रे। क०। १०३

माता देषि निरादर, आयउ सीह सामन्त,
तेहनइ पिणि वीनति करी, ते कहि, होइ निचंतो रे। क०। १०४

राजानइ तिणि वीनव्यउ, छोरु इम सीदाइ,
दान मान दूरइ रहउ, वचनइं स्वामि वोलायउ रे। क०। १०५

एक सषी सुणि परिहरी, कुमरी विण आप धार,
आज माहरइ आग्रहइ, वोलावउ इक वारो रे। क०। १०६

दूहा

वोलावी आवी कुमरि, करि प्रणाम, सुणि तात,
पुरुष वेष द्यउ मुझ तुम्हे, पछइ जणइसु वात। १०७

वेष कीयउ तिणि पुरुषनउ, द्यउ मुझ सिघ सघाति.
उज्जेणी नगरी (भ) णी भेजउ मुझनउ, तात। १०८

तिम करिजो जिम वसनइ, रती न लागइ षोडि,
सुंदरी चलीय प्रयाण करि, करि प्रणाम कर जोडि। १०९

ढाल सब सेन लिय साथि

त्रैलोक्सुदरि सिह सामतइ परिवरी ए,
सुषि अषड प्रयाण देता, चालता पहुता उज्जणीपुरी ए। ११०

वइरसिह सुणि राय आयउ, सनमुष चपापति नदन सुणी ए,
जुगति भगति करि आणी निज मदिर भलइ भोजन देई गुण घुणी ए। १११

कुण कामइ इणि नयरि आव्या, ते कहउ, नगर कुतूहल देषिवा ए,
सिप्रानइ उरकठि महलइं ते रह्यउ, जोवइ तुरगम एहवा ए। ११२

तेहि ज तुरगम देषि आपण उलख्या, चर भेज्या, पूठिइं गया ए,
गृहपति नाम सुठाम, सघली सुधि लही,
सुणी कुमर हरषित थया ए। ११३

सिह बोलाव्यउ नाम, माहरउ पति इहां कलाचार्य पासइ पठइ ए,
तेहनइ इहां निमत्रि छात्र सहित,
हित तुम्हे जाइ आणउ अठइ ए। ११४

आव्यउ देषि भरतार, अति आणद करी आसन भोजन उपचर्यउ ए,
छात्र थकी सुविशेष वस्त्र अनोपम, मगलनइ रागइ वर्यउ ए। ११५

पाठक ! कहावउ वात इण चटडा कन्हा, चटडां बोल्या कुमरनइ ए,
कथा कहेस्यइ एह, जे तुम्हनइ अति रागदृष्टि सूघरइ मनइ ए। ११६

मगल कहइ कुमार, कहउं कथानिक, आपण वीतउ, तुम्ह सुणउ ए,
ए तेहि ज नारि भाडइ परणीय, पुरुषवेष कारण कुणइ ए? ११७

एहवउ निश्चय जाणि वात कही तिम जिम परणी छडी गयउ ए,
माहरी छइ तिहा मागि चपानयरीय, ए अचरिज मुझनइ थयउ ए ॥११८॥

चा रे झूठी वात, झालउ एहनइ, अम्हरइ घरि ए किहां रह्यउ ए?
पुरुषै झालयउ जाय, नाठा छात्र ते धन्न सेठिनइ जाई कहउ ए ॥११९॥

चउपई

मगल कलश मांहि आवीयउ, ऊचइ आसणि वइसाणीयउ,
सिह ! सुणउ, मइ परिछाणीयउ, परण्यउपति मुझ मनि मानीयउ ॥१२०॥

सुणउ सिह ! जइ ससउ होइ, थाल कचोला जाई जोइ,
एहनइ घरि पहूचउ सहु कोइ, धनदत्तइ आण्या सब ढोइ ॥१२१॥

ते धनदत्त चित्त सकाइ जाइ, परमेसर ! स्युं थाइ,
सिहइ कही वात समझाउ, बेटी वहू होइ घरि ल्याउ ।१२२॥

सिह कुमरि पासि आवीयउ, स्त्रीना भेष लेइ धावीयउ,
पुरुषवेष ते दूरइ करी, आवी पति पासइ सुदरी ॥१२३॥

पइसारइ निज घरि आवीया, जाणे अभिनव परणावीया,
नगरई राय ते बोलावीया, सुणी देषि अचरिज भावीया॥ २४॥

मगलकलस घरि करइ विलास, त्रिलोक सुदरी पूगी आस,
सिह लेई कुमरना वेष, चपायइ बीनटयउ नरेस ॥१२५॥

वली सिह भेज्यउ तेडिवा, मगलनइ मसउ पेडिवा,
मगल सुंदरी आव्या पासि, राजा हियई धरीय उल्हास ॥१२६॥

भलइ भलइ सुदरिनी बुद्धि, देपउ मुहता तणी कुबुद्धि,
विना दोष पुत्री दूहवी, मिटयउ कलक, रिधि पामी नवी ॥१२७॥

कुबुद्धी नई काढयउ मारिवा, मगल आव्यउ ऊगारिवा,
मुहतानई द्यउ जीवियदान, राजन ! आपउ अम्हन इ मान ॥१२८॥

राजा मान्यउ, निज करि पुत्र, मूल पिता वोलाव्यउ अत्र,
मगलनइ दीधउ निज राज, पुण्यपसाइ सीधा जां काज ॥१२९॥

ढाल आढीयानी

यशोभद्र गुरु आवीया, गाईया मिलि नरनारि,
सुरसुदर नरपति गणपति, पदवदन कारि ॥१३०॥

देसण सुणि तिवूवला लीधला चारित प्रसार
भविक जीव निस्तारिवा करिवा उग्र विहार ॥१३१॥

सीमाला भूपाल न मानइ मगल आण
वणिकपुत्र ए स्यु करिस्यइ सग्राम अजाण ? ॥१३२॥

ऊदालीनइ राज हरिस्यु इणि अभिमान
चतुरग सेन लेई चढयउ मगलकलस प्रधान ॥१३३॥

पुण्य पसायइ ते अरि भागा लागा पाइ
जिनवर प्रतिमा पूजि करइ ते निज घरि आइ ॥१३४।

जिन प्रसाद अनेक करावइ अ वइ लोग,
जैनधर्म्म इम साचवइ साचवइ राग सयोग ॥१३५॥

अन्य दिवसि उद्यानइ आय्या जइसिंघसूरि
वदन चाल्यउ सुमगल, मगल वाजइ तूर ॥१३६॥

गुरुजी ! अम्ह मनि ससय एह विटबन देषि
भाउइ परणी आणी, दूषण लहीय विशेषि ॥१३७॥

ए कुण कम अम्हारउ ? पूरव भववृत्त त,
न्यानि करी सव जाणउ वपाणउ मनि पति ॥१३८॥

सूरि कहइ सभालीयइ राजन ! आपाणे कर्म
उदयागत भोगवीयइ जोगवीयइ जिनधर्म्म ॥१३९॥

ढाल वालूडानी

इणि भरति सुषेत्रइ षिति प्रतिष्ठ परठामि
घन धन्नउ समृद्धउ सोमचद्र इणि नामि ॥१४०॥

श्रीदेवी तेहनइ नारी अति अभिराम
प्रीतइं संतोषइ जाणे रति नइ काम ॥१४१॥

सोमचद्र प्रकृति गुण माननीक जस ठामि
पति रमणि संजोगइ सरिषइ सरिषउ पामि ॥१४२॥

जिनदेव सुश्रावक तिहकणि वसमान
तिण माहोमाहे मैत्री भावप्रधान ॥१४३॥

जिनदेव देसंतरि धनइ कारजि चलंत
निज मित्र बोलावी बइठा मिलि एकंत ॥१४४॥

भाई ! मुझ ए धन सहस मान दीनार
परचेज्यो साते क्षेत्रे करीय विचार ॥१४५॥

सामग्री मेरी साचविज्यो धरि राग
इम सीष देईनइ कुसल चले निज माग ॥१४६॥

सोमचंद्र हिवइ धन षरचइ आपण मेलि
अनुमोदइ घरणी धरम भणी करि केलि ॥१४७॥

तिणि पुरि एहनी सखि भद्रा नामइ जाणि
देवदत्त तणी जे नारीसु पहिचाणि ॥१४८॥

परचइ मेरउ पति धरमारथि धन कोडि
संभलि श्रीदेवी भाषइ मुह मचकोडि ॥१४९॥

तेरी सगति ए कोटी किम षरचेस्यइ ?
फोकटणी फोकइ काइ तू गरव करेस्यइ ? ॥१५०॥

तिषि वचनि कठोरइ मुष विलषउ अति कीधउ
वलि हास करीनइ मिच्छा दुक्कउ लीधउ ॥१५१॥

ते सोमचंद्रनइ श्रीदेवी सघाति
श्रावकना व्रत ल्यइ साधु संगति मनि भात ॥१५२॥

ति थया समाधइ चविनइ सुरा सोधर्मि
स्थिति पच पल्योपम आयु भोगवी कर्म्म ॥१५३॥

सोमचंद्रना आतम हुआ तुम्हे भूपाल
श्रीदेवी सुंदरि थई नारि ते बाल ॥१५४॥

परद्रव्यइ जे तुम्ह कीधउ पुण्य रसाल
तिणि भाउइ परणी वली मिली ततकाल ॥१५५॥

हासइ श्रीदेवी भद्रानइ दीधउ आल
इणि भवि तिणि पाम्यउ एह कलंक कराल ॥१५६॥

इम सुणीय विरत्तउ मंगलकलस नरिंद
सुंदरिना सुतनइ दीधउ राज आणंद ॥१५७॥

राजा राणीसु भावइ सहगुरु पासि
लीधउ चारित्रव्रत पालइ धरीय उल्हास ॥१५८॥

क्रमि रायरिसी ते भणइ सकल सिद्धंत,
गुरु आचारिजपदि थाप्यउ जाणि महंत ॥१५९॥

त्रिलोक्य सुंदरी थई पवित्तणि नारि
पाली चरित वर ऊणसण करि उच्चार ॥१६०॥

पंचम सुरलोकइं पहुता करि ध्यान
पामी नरभव वलि पद लहिस्यइ निरवाणि ॥१६१॥

इम जाणी पूजा जिनप्रतिमानी कीजइ
मानवभव पामी पुण्य तणा फल लीजइ ॥१६२॥

संवत सोलहसइ ऊपरि गुण पचासि
ए कीधउ मंगलकलस चरित्र विलासि ॥१६३॥

दूहा

अधिकउ ऊणउ जे कह्यउ मिच्छा दुक्कड तास
मूलताण मांहि ए कीयउ मगसिर सुदि उल्लास ॥१६४॥

श्री [जि] निचंदसुरिंद गुरु वर्तमान गणधार
सुविहित मुनि चूडामणी जुग प्रधान अवतार ॥१६५॥

खरतरगच्छि सुहागनिधि अमरमाणिक गुरुसीस
कनकसोम वाचक कहइ मंगलचरित जगीस ॥१६६॥

सुमतिसुन्दर सूरि फागु

कृति के अन्तःसाक्ष्य के आधार पर किसी भी सर्जक का उल्लेख नहीं मिलता। अनुमान है कि कृति का रचयिता श्री सुमतिसुन्दर की शिष्य-प्रशिष्य परम्परा मे कोई रहा है क्योकि कृति में सुमति सुन्दर की अभ्यर्थना गुरु रूप मे ही की है। श्री कान्तिलाल व्यास ने कृति का रचनाकाल स० १५२५ दिया है।[१] लेकिन सम्वत् १५१८ मे सुमति सुन्दर आचार्य हुए थे और सं० १५५१ मे इनका देहावसान हुआ, अतः इसी मध्य यह कृति लिखी गई है। सम्भवत' १५४० के आस पास।

यह फागु व्यक्ति निष्ठ फागु की कोटि मे आता है, क्योकि उक्त फागु मे जैन तपागच्छाचार्य सुमतिसुन्दर की चारित्रिक निष्ठा एव सयम का वर्णन किया गया है। पुष्पिका के अन्त मे दिया गया है—'इति श्री सुमति सुन्दर सूरि राज.-धिराज फागः सम्पूर्णः।' श्री सुमति सुन्दर सोमसुन्दर सूरि की शिष्य परम्परा मे आते हैं। इनका जन्म मेवाड के जवर ग्राम मे स० १४९४ को हुआ था। दीक्षा के उपरान्त इन्हे सुमति साधु नाम मिला।[२] आबू मे उपाध्याय पद प्राप्त करने के बाद सुमतिसुन्दर हो गये।[३] स० १४१८ मे इन्हे आचार्य पद मिल गया।[४] इन्होने अर्बुदाचल के ऊपर अचलगढ मे चतुर्मुं ज प्रासाद बनवाया और १२० मन पीतल की जिन-प्रतिमा प्रतिष्ठित कराई। इस अवसर पर इन्होंने ६०० साधुओ को दीक्षा दी।[५] इन्ही सुमति सुन्दर के सयम-माहात्म्य को दिखलाने के लिए ही इस कृति की रचना हुई है। कृतिकार का लक्ष्य सुमतिसुन्दर द्वारा काम को पराजित कराना रहा है।

---

१ पदरमा शतकनां चार फागु काव्यो, प्रस्तावना, पृ० ५० ।

२ मोहनलाल देसाई जैन गुर्जर कविओ, भाग २, पृ० ७२२।

३ मोहनलाल देसाई, जैन साहित्यनो सक्षिप्त इतिहास, पृ० ४०८।

४ ,, ,, ,, पृ० ४९९।

५ ,, ,, जैन गुर्जर कविओ, भाग २, पृ० ७२३।

कृति का काव्य-ग्रोव सशक्त नही है। इस कृति का काव्य-सौंदर्य इसकी शैली के सहज प्रवाह में है। कवि ने 'फागु' नाम सार्थक कराने के लिए वसन्त निरूपण भी किया है किन्तु उसकी दृष्टि वाह्य उपकरणो पर अटक कर रह गई। इसी वासन्तिक पारिप्रेक्ष्य मे युवक-युवतियो की क्रीडा का भी वर्णन किया गया है। यद्यपि इस क्रीड़ा वर्णन मे 'वसन्त विलासीय' गरिमा नही है।

कृति मिश्र छन्दो मे निबद्ध है।

सुमतिसुन्दर सूरि फागु

रचनाकाल——१६ वी शती का पूर्वार्द्ध

शार्दूल विक्रीडित

ॐकार श्रुति पूरती करियली वीणा भली धारती,
विघ्नश्रेणी निवारती जन तणी वाछा मने सारती।
विद्यावल्लि वधारती भविकना अज्ञान सचूरती,
देवी हंसिइ चालती मझ मती दिउ देवता भारती ॥१॥

[फाग]

समरिय सामिणि सरसति, सरस तिसी दिइ वाणि।
जिणि करीहुँ रससागर, फाग रचउं मडाणि ॥२॥
सिरितवगणवरकाननि, पचाननह समाण।
जाणइ अर्थ विचक्षण, लक्षण छद प्रमाण ॥३॥

मुनिवर केरु नायक, दायक सुखसभार।
महिमावासित वसुमति, सुमति सुन्दर गणधार ॥४॥

[अढईउ]

दिनदिन अधिक प्रतापिइ दीपइ, जीयइ वादी अवृंद रे।
निअवाणीरसि नरपति रजइ, भजइ पातक कन्द रे ॥५॥
चारित निरतीचर अरूनिइ, रूपिइ अभिनव इद रे।
'मन्मथमथन' ए विरूद धरावइ, भाविइ नमइं नरिंद रे ॥६॥
महिमलि निसुणीअ जयवत यतिपति, रतिपति करइ विचार रे।
"कुण ए मुणिवर माहरइ तोलइ," बोलइ करी हुकार रे ॥७॥

[अवोला]

बोलइ करी हुंकार, "कुण ए सिरि गणधार"।
विरुद बोलावतु ए, "महीअलि दीपतु ए" ॥८॥

[शार्दूल विक्रीडित]

हुँ-हुँकार करी अनग-वइरी कोपिइ करी चितवइ,
'सूतु पुण केसरी मुझ समु पाए करी जगवाइ" ।
हिंदू माण धरी कहइ- "कुण अरी, हेनिइ करी जिपिवा,
जाउ सेन करी, यतीश्वर सिरि दृष्टिइ करी देखिगा" ॥९॥

[फाग]

तताखिणि मयण मेलइ ए, हेलइ ए कटक अनत ।
सेन सहित तेडावइ ए, आवइ ए माझि वसति ॥१०॥

तिणि अवसरि सवि तरुअडा, रूअडा अति दीसंति ।
ते जोवा भणी आवती, युवती गेलि करति ॥११॥

[अढईउ]

सुरभि समीर करी महिमहतु, पुहतु मास वसत रे ।
आपणा प्रिय सिउ रसभरि कामिनी, कामनी वात करति रे ॥१२॥

एक कहइ-"सामी क्रीडा कीजइ, लीजइ जनमइ लाइ रे" ।
एक कहइ-"खडोखलीए रमीइ, गमीइ इम दिन नाहु रे ॥१३॥

झाकझमाली पहिरी फाली, आलि करई वरनारि ए ।
निज हेजिई प्रिअसरिसी रमइ ते नमइ पयोहरभारि रे ॥१४॥

[आँदोला]

नमइ पयोहरभारि, विलसइ सुख सभारि ।
सभारती घणु ए नेहलु आणु ए ॥१५॥

[शार्दूल विक्रीडित]

रूपिइं मानव मोहती, गजगती, सिणगार सिउ सोहती,
जोवा काननि आवती सुयुवती, तंबोल आस्वादती ।
आवइ मास वसति तेह, हसती आनदि आलिगती,
स्वामी सिउ रमती, टकोल करती, जोम्र ति ते मालती ॥१६॥

[फाग]

सामी जईइ काननि, माननि इम बोलति ।
अठार भार वन विहसतां, हसता तुम्ह तेडति ॥१७॥

वन जोतो प्रिय साथिइ, हाथिइ ताली दिति ।
पुहचइ गजगतिगामिनी, कामिनी हरष धरत ॥१८॥

[रासु]

कनक केरी बइठी जिहि पांखडी, एहवी सोहइ सीसिहिं राखडी ।
आंखडी अतिहिं रसाल ॥
मुद्रडीइ सोहइ सारमणी, नवरंग वेस करइ सा रमणी ।
रमणी जोइ साल तु, जयु जयु ॥१९॥

जोवा कारणि मांहि करणी, विजुरी खज्जूरी करणी ।
करणी तेह करति ॥
मुह गाइ ते रूअडा फागह, माहि अवतारइ एहवा रागइ ।
नागह रंजिअ जेण तु, जयु जयु ॥२०॥

फल भारिइ करी करइ अच्छरायण, कोमल कदली आंबारायण ।
रायाणि रति पामति ॥
जोइ ततरिवणि काननि दमणु, परिमल आलइ अतिहिं विमणु ।
रे मणु गेलि करत तु; जयु जय ॥२१॥

[शार्दूल विक्रीडित]

देखी काननि द्राखडी, खउहली लागइ भली भूखडी,
देखी नीली सूखडी, अति घणी गाढी गलइ दाढडी ।
सामी सिउ, करइ गेलडी, मणि जडी सोहइ भली राखडी,
वाली तेवड तेवडी, रडत्र डी जोइ ति ते केवडी ॥२२॥

[फाग]

रमणी आघी जाती, जातीफल खाइ ति ।
पनि पयोधर भारिलची, एलची मुहि मेल्हति ॥२३॥
इण परिवारासिउ परिवरिउ, तरवरिउ मास वसत ।
जव आविउ तव मयण रे, वयण रे इम बोलत ॥२४॥

[अढईउ]

"ईणइ मूरखि गुरु जीपवा कारणी, रणि मंडिउ अति जग रे ।
सज्ज करीइ तव मलयाचल, चचल बाउ तुरग रे ॥२५॥
गाजत माणगइ दि चडीजइ, लीजइ करि हथीआर रे" ।
तव पुहचइ रतिवर पोआ (णइ), आणइ मनि अहंकार रे ॥२६॥

[आंदोला]

आणइ मनि अहकार : 'कुण ए सिरि गणधार" ।
परिमल इतलु ए, पाठविउ अति भलु ए ॥२७॥

इत षहुतउ जाम, सुहगुरु बोलइ ताम ।
"कहिं न रे, कुण अरी ए, आविउ मद धरी ए" ॥२८॥

[मालिनी]

निअ मणि मदपूरी, बुल्लए ताम सूरी,
"कुण छइ मझ वइरी, वातडी ए नवेरी ।
इम कहि तु जाई, 'होइ छु तुज्झ काई,
समरि समरि थाई—आवि तु वेगि धाई' ॥२९॥

[रासु]

सजम मलपत मयगल चडीइ, सुहगुरु मयणराय सिउ भडीइ ।
नडीइ रतिपति सेननु जउर ॥
उवसम घोडा तिहि पाखरीइ, सहि गुरु तवसज्झाई करीइ ।
हरी मयणह माण ॥३०॥

[आंदोला]

हरीइ मयण माण, दीजइ आगम दाण ।
दानव सम वलिइ ए, अगो अंगि मिलइ ए ॥३१।

[मालिनी]

तव विहुं दल केरी वाजती ते भलेरी,
समरिहि रणभेरी, दडवडीनइ नफेरी ।
जव रणि सरणाई वाण हारेहि व ई,
ततरिवणि गुरिजाई–जीतुजई काम धाई ॥३२॥

[फाग]

जव गुरु देमवदीत, जीतु रतिभरतार ।
इम गाइं चदाननी, मानिनी जयजयकार ॥३३॥
सिरि तवगच्छनु मडण, खडण वादी माण ।
एह गुरु ममणनिवारण, कारण सुख सम्माण ॥३४॥

[आंदोला]

तवगच्छि महिमावंत, महीअलि अति गुणवत ।
सोमदेव सुहगुरु ए, बुद्धिइ सुरगुरु ए ॥३५॥
तासु सीस सूरिंद, भत्तिइं नमइं नरिंद ।
सुमति सुन्दर गुरु ए, जगि जयवत पूरू ए ॥३६॥

[गीतिका]

सिरिवद्ध माणजिणिंदसासणि सयल गच्छह म डणो,
परवादिगजण अभिअवारिणी सयल सज्जण रजणो ।
श्री सुमतिसुन्दर सूरि राजा सयल सघ आणदणो,
पखरि सिउ जयवत वरतु जांभ मेरू सनदणो ॥३७॥

(इति श्री सुमति सुन्दर सूरि राजाधिराज फाग. सम्पूर्ण·)

पंदरमा शतकनां चार फागु काव्यो, स० प्रो० कान्तिलाल बलदेवराम व्यास,
फार्वस गुजराती सभा ग्रथावली–५८, फार्वस गुजराती सभा बम्बई–४, १९५५

सालिभद्र फाग

१६वीं शती मे रचित यह काव्य कृति व्यक्तिनिष्ठ फागुग्रो की कोटि मे आती है। मुनि शालिभद्र की कीर्त्ति का ही इस कृति मे वर्णन किया गया है। इस कृति मे कृतिकार का स्पष्ट उल्लेख नही हुआ है, किन्तु कृति की अन्तिम पक्ति है :--

एक मनाजे सांभलि, सालिभद्रन रास।
कर जोडी सेवक भणि, करसि लीलाविलास ॥७२॥

'सेवक' शब्द पे यहा यदि शिष्य का अर्थ नही तो १६वी शती के उत्तरार्द्ध मे विद्यमान सेवक नाम कवि से इसका आशय लिया जा सकता है। सेवक अ चल विधि गच्छ गुणनिधान सूरि का शिष्य था, जिसने सम्वत् १५९० मे 'आदिनाथ देवरास धवल'[1] सम्वत् १५९० मे ही 'ऋषभदेव विवाहलु धवल वध'[2] और 'सीमधर स्वामि शोभा तरग'[3] 'आर्द्रकुमार विवाहलउ'[4] 'नेमिनाथ ना चद्राउला'[5] आदि कृतियो का सृजन किया है।

सेवक का रचनाकाल १६वी शती का उत्तरार्द्ध, विशिष्टतया सम्वत् १९९० के आसपास रहा है, अत विवेच्य कृति का भी सृजन सम्वत् १५९० के लगभग हुआ।

---

१ जैन गुर्जर कविओ, भाग ३ खण्ड २, पृ० ५८१
२. ,, ,, ,, पृ० ५८२
३ ,, ,, ,, पृ० ५८४
४. ,, ,, ,, पृ० ५८५
५. ,, ,, ,, ,,

कृति मे राजगृह नगरी के साथ-साथ शालिभद्र के ऐश्वर्य और सौंदर्य का वर्णन किया गया है। शालिभद्र की कीर्त्ति को सुनकर चिलणा रानी ने श्रेणी नरिंद से उसके बारे मे कहा। राजा अपना ताम-झाम लेकर शालिभद्र से मिलने चल दिया। दोनो का मिलन सूरज और चाद के मिलन के समान हुआ। बाद मे शालिभद्र अपना समस्त व्यापार छोडकर वैरागी हो गये। सम्वत् १५२० मे सोजीमा नामक नगर के देव भवन मे 'प्रतिमा की स्थापना' की और सम्वत् १५२५ मे अर्बुदागिरि मे आदीश्वर की स्थापना की।

कृति साक्ष्य से ज्ञात होता है शालिभद्र लक्ष्मीसागर (सुप्रसिद्ध तपागच्छाचार्य) के शिष्य थे :–

> तपगच्छ केउ राजिउ, लिरुमी सागर राय।
> तासु सीसि गुण वर्णव्या, प्रणमु सदगुर पाइ ॥७८॥

कृति, काव्यत्व की दृष्टि से सामान्य है। काव्य-सवेदनाओ से अछूती है।

सालिभद्र फाग

रचनाकाल–१६वी शती

गोयम गरण निधि गरणनिलु, लवधि तरणु भडार ॥
नामि नव निधि पामीइ, वछित फल दातार ॥ १

सरसति स्वामिनि पाए नमू, मागू अविरल वाणि, ॥
सालिभद्र गुण वर्णवू, ते चड्यो सुप्रमाणि; ॥२॥

नगरी वर्णन--

राजगृह नयरी भली, चिहु दिशे आराम; ॥
वापी कूप सरोवर, मुनि जन ना विश्राम, ॥३॥

अढार भार वनसपती, कहिता न लहू पार,
बाघ शघ क्रीडा करि, नी झरना झणकार; ॥४॥

वृक्ष फूल वर्णन--

आबा जावू आंबिली, वड पीपल नि नीब, ॥
बाउल बीली बोरडी, केसू कुठ कदांब, ॥५॥

हरडि बहिडा आमला, राइण द्राख खजूर; ॥
सरस साग सासवि तणा, महू पीपरि कपूर; ॥६॥

केलि सदा फल फालसा, करणी नि अजीर, ॥
नारिंगी अति रगनी, कमरख नि जबीर, ॥७॥

श्री फल सोपारी खरी, कमक कसुभु वांस, ॥
पाडल पीलू पोइणा, याहा नही सूर्य प्रकाश; ॥८॥

वालु दमणु सेवत्री, मरुउ नि मकरद, ॥
चापु पारधि मोगरू, पारु जातिक मचकद, ॥९॥

अथ पाणि वर्णनम्--

मान सरोवर थी भला, निर्मल गगा वारि; ॥
हस सारस क्रीड़ा करि, अवर नही ससारि, ॥१०॥

पावडीआ सोना तणा, तेहनु न लहूं पार; ।।
पदमिनि प्रेमि प्रीणीउ, भ्रमर करि गुंजार, ।।११

अथ पखी वर्णनम्—

राजहंस रलीआ मणा, तेतर तूसि देवि, ।।
दरशन चास तणू करूं, सारस सरोवर सेवि, ।।१२

कोइलि करि टहूकडा, कुक्कट नी कुंभार; ।।
बापी यडु प्रीय प्रीय करि, यम विरूहणी भरथार; ।।१३

चक्रवाक प्रीति भला, पारेवा चक्कोर, ।।
सूड़ा रूडा बोलता, सघारा वासि मोर ।।१४

अथ नगरी —

गढ गिरूउ रूपा तणु, कासीसा सोवित्र; ।।
दरवाजा दस दसि तणा, रहि छि ते धन धन्य ।।१५

धर्मवत राजा तिहां, विनयवंत तलार; ।।
राज भार सव निर्वहि, मंत्री अभय कुमार ।।१६

सीमडा सेवा करि, भूपति आपि दण्ड, ।।
पायक पाला साचरि, इम साधि षट खंड़ ।।१७

मेगल वद्धा वारणि, दल भजण दलपत्ति, ।।
मेघनाद गर्जित करि, जिम मेगल गजपति ।।१८

ताजी तुरगम पाखरचा, पल्लाए पासुर पिंग, ।
काछ देस ना कालूआ, अवलख नवनव रंगि, ।।१९

अथ प्रासाद -

सखिरवद्ध सोहामणा, सोविनमि प्रासाद, ।।
कोसीसा हीरे जडचा, जाता मनि आहलाद, ।।२०

पाखली फरती पूतली, मणि मि रचीआ थंभ, ।।
सुर कुमरी नृत्य करि, नाचि नाटारभ; ।।२१

आभ्रण अंगि अलकरचा, झलकि कुंडल कानि ।।
आदि जिनेश्वर पूजीइ, स्वामि सोवन वानि, ।।२२

शांतिनाथ जिन सोलमुं, पाइ करि तु सशेव, ।।
चक्रवर्ति ते पाचमु, शांति करि सो देव, ।।२३

राजलि स्वामि सोहामणु, रूअडु नेम जिणंद, ।।
सुर नर सवि सेवा करि, बावीसमुय जिणंद, ।।२४

जोराउलु जगि जाणीइ, स्तंभ नयर श्रीपास; ।।
वरकाणु वंछित दीइ, नव खड पूरि श्रास, ।।२५

गुखि गुखि मत वारणा, सात खणा श्रावास, ।।
पुण्यवत वासि वसि, जाणे ते कैलास ।।२६

कोटी धज कहू केतला, लाख तणा नही पार, ।।
सहस तणी सख्या नही, घरि घरि सत्तूकार, । २७

हाट शेर सोहामणी, रुडा दोसी हाट, ।।
लाभि पीतावर भला, भिख शालू पाट, ।।२८

नगर का बाजार वर्णन —

कलथि कानि कापडा, फालि फोफल भाति, ।।
खीरोदक ना धोतीया डोटी दक्षण जाति, ।।२६

गाधी हट मेवे भरचा, खारिक द्राख खजूर, ।।
वरसोला वति पति मणा, पारू नि सीदूर, ।।३०

पिस्ता जरगोजा घणा, शघोडा, वदाम, ।।
सालिभद्र नि भेटणा, जेहनू उत्तम नाम; ।।३१

सालिभद्र मदिर हवि, सुणयो ते विस्तार, ।।
देवलोक पाहि भला, रधि तणु नही भार, ।।३२

देवलोकि थी देवता, पूरि नित नवा भोग; ।।
खीर खांड मुनिवर लहूं, पाम्या ते संयोग, ।। ३३

गुखि गुखि रलह तणा, दीवा ते झाउकति; ।।
यम श्राकासि तारिका, रयणी तिम शोभति, ।।३४
कल्पवृक्ष घरि श्र गणि, कामु दुद्या दूझति, ।।
घोड़ा हीसा रव करि, गज सार सीश्र करति, ।।३५
दरीयाई दीसी घणा पचरतन कोसोर, ।।

ऐश्वर्य मे कल्पना विलास —

दरीयाई दीसी घणा, पच रतन कोसोर, ।।
नीला पीला हासला, करडा किहिहा वोर, ।।३६।।
मेघ करि नितु छांटणा, दक्षण वा वाजति; ।।
श्रपछरा तिहा निर्त्तक करि, इद्र भवन दीसति, ।।३७।।

वालु वत्रीस लक्षणु, लहुड लीलावंत, ।।
सुभद्रा कुखि ऊपनु, सालिभद्र गुणवंत, ।।३८।।

रूपि मयण मनोहर, कि अश्विनीअ कुमार, ।।
विद्याधर के सुरपति, के वसु देवि कुमार; ।।३९।।
काने कुंडल सोहिए, उरि एकाउलि हार; ।।
हाथे सोहि वहिरखा, वीटी न लहु पार; ।।४०।।
खीरोदक ना घोतीया, माहि फिरगी भाति, ।।
भमर तली नी पाघडी, डोटी दक्षण जाति, ।।४१।।

अथ स्त्रीनू--

इंद्र तणी की बेटडी, कि कहू नाग कुमारि, ।।
विद्याधर की किन्नरी, कि कहू राजकुमारि, ।।४२।।
गुणवती गूजरात नी, कि मरहठ नी नारि,
पूरवणी कि कनडी, मांडव गढ नी च्यारि, ।।४३।
एक हरावि हस नि, एक हरिअ मयक, ।।
एक कुरगी लोचने, चुधी केसर लक, ।।४४।।
कठि नगोदर लहिकिए, उरि एकाउ लिहार, ।।
विरूहणी वर वछित मिल्यु, सालिभद्र सुकमार, ।।४५।।
माधव मास सोहामणु, वाली खेलि फाग, ।।
मधुर स्वर करि आलवि, अनुपम गुडो राग, ।।४६।।
एक हनी दि ताली, वाली अनोपम रूप, ।।
देखी पीन पयोहर (?), मोहि सुरनर भूप, ।।४७।।
एक कटाक्ष समारिए, मूंकि मन मथ वाण, ।।
सालिभद्र मन वेधिए, काम उतारि माण; ।।४८।।
हसगति १ चद्रवदनी २ मृगलोचनी ३ केशरीसिंह करिलकि ।।
रतनकत्रलि जव निरखी, हरषी सुभद्रा ताम, ।।
विणजारा सतोपिया, दीधा अति वहुमान, ।।४९।।
वीस लाख आपी करी, फाडी विमणी कीध, ।।
वत्रिसी अ तेडरी, पग लूहण ते दीध, ।।५०।।
चिलणा राणी इम भणि, सुणि श्रेणीअ नरिंद, ।।
सालिभद्र गुण साभलु, य (जि) म पामु आंनद, ।।५१।।
राजा मनि इम चीतवी, तेडाव्या परिवार, ।।
राज कमर सवि सज थया, हस्ती नि तोषार; ।।५२।।
तबल दमामा दडदडी, पच सवद वायत्र, ।।
मस्तकि मुगट हीरा तणु, उपरि धरीयां छत्र, ।।५३।।

सालिभद्र नइ भेटवा, चाल्यो नरवर राय, ।।
मत्री अभय कुमार शू, प्रणमी सुभद्रा माइ, ।५४।।

जणूणी सुभद्रा इम भणि, सालिभद्र सुण वीर; ।।
राउ पहुतु वारणि, पहिरु नवरग चीर, ।।५५।।

वलतु वीर वचन कहि, माइ म पूछसि मुझ, ।।
राउ वखारि पु (ह) रजे, जु मन मानि तुझ; ।।५६।।

वलतू माडी वीनवि, किरीयाणउ नविराय, ।।
राजगृही नयरी धणी, प्रणमीजि जसु पाय, ।।५७।।

पच वर्ण सिरि मोलीग्रां, कोटि नवसर हार, ।।
चाल्यु नरवर भेटवा, सालिभद्र सुकुमार, ।।५८।।

रानि कूअर भेटीया, हूउ अति आनद, ।।
एह अस भव साभलु, मिलीया सूरिजचंद, ।।५९।.

शघासन हीरे जड्यां, मूंकाणा आसन्न, ।।
परि परि केरी रसवती, नीपाई वितपन्न, ।।६०।।

साकरवाणी साचरचा, प्रीसाणा पकवान, ।।
खीर खाड घी घालणां, सालि दालि ना अन्न, ।।६१।।

वासी पाणी निमलां, सथरा दही नु घोल, ।।
लिवंग सोपारी एलची, पान तणा तबोल, ।।६२।।

आरोगी सतोषीउ, तूठउ नरवर राय, ।।
वार गाम गाढ़ा भला, कीधा त्याहां पसाउ, ।।६३।।

रानि कीधू भेटणूं, रतन अमूलिक सार, ।।
चीणी किनखा तामसा, हस्ती नि तोषार, ।।६४।।

वीर हवुं विरागीउ, छंडु सवि व्यापार, ।।
वीर जिनेश्वर वदीया, लीधु संयम भार; ।।६५।।

काशमीर कासी समु, मूल नायक श्री पास, ।।
चिंतामणि श्री साभलु, वछित पूरी आस, ।।६६।।

मालिभद्र वीजउ सुणु, सुद्रतन गदराज, ।।
गूजर न्याति कुल तिलु, कीधा उत्तम काज, ।।६७।।

सवत पंनर वीसमि, नयर सोजीत्रा मध्य, ।।
देव भवन पद विमणा, विंव प्रतिष्ठा कीध, ।।६८।।

संवत पंनर पंचवीसमि, भीमसाहू प्रासादि, ।।
अर्बुदगिरि श्री आदि जिन, थाप्या श्री गदराजि, ।।६९।।
तप गच्छ केरू राजीउ, लिखमीसागर राय, ।।
तासु सीसि गुण वर्णव्या, प्रणमुं सदगुर पाइ, ।।७०।।
भणतां भल पण पामीइ, सुणतां संपति होइ; ।।
सालिभद्र मुनिवर समु, अवर न वीजउ कोइ, ।।७१।।
एक मनां जे सांभलि, सालिभद्र नु रास, ।।
कर जोडी सेवक भणि, करसि लील विलास, ।।७२।।

इति श्री सालिभद्रनु फाग सम्पूर्णम् ।। छः ।।

(ऑरियण्टल इन्स्टीच्यूट, वडोदा प्रति नं० १८५५२ पत्र ३)

आदीश्वर फाग

पुष्पिका और अन्त साक्ष्य से विदित होता है कि इसके रचियता भट्टारक ज्ञानभूषण हैं। ज्ञानभूषण नाम के चार भट्टारक हुए हैं। चारो ही मूलसंघ, सरस्वतीगच्छ और वलात्कारगण मे सम्बन्धित थे, किन्तु उनकी शाखाएं भिन्न-भिन्न थी। इस कृति के रचियता भट्टारक ज्ञानभूषण गुजरात के निवासी थे। उनकी प्रसिद्धि चतुर्दिक व्याप्त थी। उन्होने केवल मन्दिरो का निर्माण, मूर्त्तियो की प्रतिष्ठा और विविध तीर्थ-क्षेत्रो की यात्राए ही नही की थी, अपितु विभिन्न प्रदेशो की जनता को अध्यात्म रस का पान कराया। वे व्याकरण, छन्द-अलकार साहित्य, तर्क और अध्यात्म रूपी कमलो पर विहार करने वाले राजहस थे और शुद्ध ध्यानामृत की उन्हे लालसा थी। आदीश्वर फाग के अतिरिक्त उन्होने 'नन्दि-सघ–पदावली', 'जैन सिद्धान्त भास्कर', 'चौथी किरण', 'परमार्थोपदेश', 'आत्म-सम्वोधन' और 'तत्त्व ज्ञान तरगिणी' आदि कृतियाँ भी लिखी हैं। भट्टारक ज्ञानभूषण की गुरु-शिष्य परम्परा इस प्रकार रही है :–

पद्मनदि → सकलकीर्ति → भुवनकीर्ति → ज्ञानभूषण → विजयकीर्त्ति।

आदीश्वर फागु की रचना वि० सम्वत् १५५२ मे हुई थी :—

आहे एकाणउ अधिकाशत पचमलोक प्रमाण।
सूछउ भणिसिइ लिखिसइ ते नर अतिहिं सुजाण ॥२६२॥

आदीश्वर फागु की रचना सस्कृत पद्य और हिन्दी पद्य दोनो में हुई है। पहले सस्कृत श्लोक आये हैं साथ ही हिन्दी मे उनका भावानुवाद भी। इस कृति मे आदीश्वर का सम्पूर्ण जीवन वृत्त वर्णित हुआ है। प्रत्येक तीर्थङ्कर का जीवन पच कल्याणको मे विभक्त है और इसी रूप मे उपस्थित करने की परम्परा पहले से चली आ रही थी। आदीश्वर फाग भी इसी शैली मे लिखा गया था।

अनुपम वाल वर्णन मे भट्टारक ज्ञानभूषण अत्यन्त दक्ष थे। ऐसा प्रभावोत्पादक वर्णन दूसरे फागुकारो ने नही किया है। भट्टारक ज्ञानभूषण ने तीर्थङ्कर के गर्भ और जन्म से सम्वन्धित अनेक मनोरम चित्रो का अङ्कन किया है। इस अवसर पर होने वाले विविध उत्सवो के सौन्दर्य को भी उद्घाटित किया है।

इस कृति मे ग्रादीश्वर के जीवन सम्बन्धी ग्रलौकिक तथा चमत्कारिक चित्रो को भी उपस्थित किया गया है। इसके अतिरिक्त कवि ने माता के भावो का मनोवैज्ञानिक ढग पर चित्रण किया है। मातृलालसा ग्रौर उत्कण्ठा के साथ-साथ कवि ने वालक के ग्रवयव-सौदर्य का भी वर्णन किया है।

वात्सल्य रस में निमग्न यह फागु ग्रन्य जैन फागुग्रो के समान शान्त रस मे पर्यवसित हो जाता है। इसे जीवन चरितात्मक फागुग्रो की कोटि मे रखा जा सकता है।

आदीश्वर फाग

रचनाकाल—सम्वत् १५५१

आहे प्रणमीय भगवति सरसति जगति विवोधन माय।
गाइस्यूं आदि जिणंद सुरिंद वि वंदित पाय ॥१॥

आहे आदिम दीव अतीव मनोहर सोहइ चंग।
भारतवरिष हरिष कर कोशल देश अभंग ॥२॥

आहे केतन सहित निकेतन संतति संचित वास।
साकेतन पुर सुंदर सुंदर भोग विलास ॥३॥

आहे तस पति नाभि नरेश सुरेश समान सरूप।
शील दया गुण सेवक सेव करइ बहु भूप ॥४॥

आहे तस घरि मरुदेवी रमणीय रमणीय गुणखाणि।
रूपिइं नही कोई तोलइ बोलइ मधुरीय वाणि ॥५॥

आहे शील शिरोमणि सोहइ मोहइ नाभि नरिंद।
पुण्य तणइं फलिइ पामीय पामीउ परमानंद ॥६॥

आहे सम मति सम गति सम रति सम तसु हाव विभाव।
नारीय नर सुंदर तु कुइ हुइ एकस भाव ॥७॥

आहे तस घरि सुरवरि जाण्यउ जिनवर नु अवतार।
देवी पठेवीय निरतीय करतीय जय जयकार ॥८॥

आहे इन्द्र आदेसिइ आवीय देवीय छपन कुमारि।
नाभि नरेसर प्रणमीउ प्रणमीय मरुदेवी नारि ॥९॥

आहे तीरथ पाणीय आणीय खोलि करावइ एक।
एक पहिरावइ फालीय चोलीय बहुत विवेक ॥१०॥

आहे रत्न जडित अति मोटीय ओतीय ऊपरि नाग।
पहिरावइ खरी खोटली बीटली नह नही माग ॥११॥

आहे पहिरावइ देई आखडी राखडी मस्तिकि सार ।
कोटइं मोटा मोतीय नव तर नवसर हार ॥१२॥

आहे मणिमय टीलीय ढीलीय चहुडीय सोहि ललाट ।
मोटलीइ वेहू घूघरी घूघरीयालीय घाट ॥१३॥

आहे शोभातणी जिसी उरडी मोरडी विइ बिहु पासि ।
रइथइ जमलीय देत्रीय देवीय हुई सहू दासि ॥१४॥

आहे निगलि निगोदर मेदुर रतन जडित अतिचग ।
बाहुतणा बहुभूषण सारिसिउ कीधउ सग ॥१५॥

आहे मोतीयनु बर रुडउ चूडउ ऊजल वेख ।
कालीय चोलीय उपरि चहुडीय सोवन रेख ॥१६॥

आहे एक कटी तटि बांधइ हसतीय रसना लेवि ।
नेउर कांबीय लात्रीय एक पहिरावइ देवि ॥१७॥

आहे अगुलीइं पगि वीछीया वीछुयनु आकार ।
पहिरावइ अगूवला अगूठइ शणगार ॥१८॥

आहे कमलतणी जिसी पाखडी आखडी आंजइ एक ।
सीदूर घालइ मइथइ गूथइ वेणी एक ॥१९॥

आहे देवीय तव्ड तेवडी केवडी ना लेई फूल ।
प्रगट मुकट रचना करइ तेह तणू नही भूल ॥२०॥

आहे एक करइ दल पोडीय बीडीय चूनउ लेवि ।
एक सोपारीय सारीय भांजीय आपइ देवि ॥२ ॥

आहे एक कपूरज पूदह पूरइ एक लिवग ।
एकज सरतर वाटइ छाटइ सूकइ अग ॥२२॥

आहे एकज सोहि रसोहि करतीय देव कुमारि ।
एकनि पाणीय ठाणीय आणीय आपइ नारि ॥२३॥

आहे पगि पगि लूण उतारइ वारइ विघन विशाल ।
जय जय जीव भणतीय जमलीय चालइ वाल ॥२४॥

आहे ढलकती ढालइ चामर रदलकती ककणवलि ।
एक अरीसउ उर्पाय प्रापइ हरखयि हेलि ॥२५॥

आहे एक उहाडइ वाउलु वाउलु घातइ देवि ।
फूल तणु मन हरतउ फिरतउ वीजणु लेवि । २६॥

आहे एक उतारइ आतप आतप वारण लेवि ।
एक करइ पगि पउंछणा लुंछणां हरखीय देवि ॥२७॥

आहे एकजि वासइ वासइ अंग ऊखेवइ धूए ।
एकहि न्याल्लीय न्याल्लीय जमलीय जो अइरूऐ ॥२८॥

आहे वीणा वंश वजावइ गावइ गीत विचारि ।
तवनीय ताल कसाल वजाडइ देव कुमारि ॥२९॥

आहे एक मृदग वजाइइ ताडइ भेरीय नाद ।
एक कटी तट मरडीय नाचइ चालइ पाद ॥३०॥

आहे एक कहइ मइं देवउ मेवउ एहज काज ।
एक भणइ हऊ चंदन चूअउ आपिसि आज ॥३१॥

आहे एक न चूकइ मूकइ चउरस चाउर पाट ।
कोमल लेई तलाईय पाथरइ हीडोलाट ॥३२॥

आहे जाईय जूईय चंपक सेवत्रडीयना फूल ।
एक कंवोडउ जेहुइ ऋवुण करइ तस मूल ॥३३॥

आहे देवीय लोक उलोक करीलइ पूछइ वात ।
एक सहयलीय पेल्हीय घालीय रंजवइ मात ॥३४॥

आहे एक हलावइ आवइ लेईय नर नउ रूप ।
दूरथकुं सुरू वालीय जो अइ भूप ॥३५॥

आहे एक वधावइ त्यांवइ मोती पूरीय थाल ।
एक गलइ अनजाणीय आणीय घालइ माल ॥३६॥

आहे एक सोघर सोवइ गरल निवास ।
पूरइ मननीय आस ॥३७॥

आहे एकजि जमलीय आयुध लीवइ राखइ अ ग ।
एकजि भोगुप भोग तणु क्षण न करत भंग ॥३८॥

आहे एततिइं काकडमाल त्रिकाल वरीसइ मेह ।
नाभि नरेसर मंदिरि पुण्य तणउ फल एह ॥३९॥

आहे जाणीय हालीय चालीय आवीउ सरग निवास ।
एणी परिइं नित नित देवीइ सेवीय मात सुभास ॥४०॥

आहे एक दिवसि निसि सूतीय हुतीय देखइ वाल ।
सेजि महासुत सूवहु ऊक सपन विशाल ॥४१॥

आहे दीठउ गज निज मंदिरि सुंदर मदर मान ।
चालतु वली वली कान ।।४२।।

आहे दीठउ वृष वृषभाचल सरिखउ ऊजल वान ।
चालतु सासतु सासतु घासतु घरतउ मान ।।४३।।

आहे दीठउ वर पचानन काननि करतउ नाद ।
ऊपरि पु छ उछालतु तालउ वली वली पाद ।।४४।।

आहे बइठीय दीठीय कमला कमलासनि वर अंग ।
हाथीय हाथ विवाउता तुलसा कलश अभग ।।४५।।

आहे दीठीव फूल तणी वर माल विशाल सुगध ।
मयणगणि किल करतीय अलि कुल सिउ सबध ।।४६।।

आहे अमृत तणु जिस्यु खिड अखडज दीठउ चद ।
गगनि वईठउ दीठउ फुयनु मनि आनद ।।४७।।

आहे तपन तपतउ सतउ करतउ नयनानद ।
दीठउ जडिम निवारतु वारतु तिमिर अमद ।।४८ ।

आहे कलश युगल कलधूत तणा दीठा सुविशाल ।
अमृत भसा मुखि कमल विमल मुक्ताफल साल ।।४९।।

आहे मान सरोवरि मीन अहउतणु युग दीठ ।
कमलनि वासित निरमल वारि मझारि वईठ ।।५०।।

आहे दीठउ सार सरोवर सुंदर तीर गभीर ।
नीरज नीरज राजि विराजित निरमल नीर ।।५१।।

आहे मणि मुगताफल आगर सागर दीठउ चग ।
सु दर तीर गंभीर सुनीर तणा बहु भंग ।।५२।।

आहे दीठउं वर सिहासन भासन वासन मूल ।
माणिक राजि विराजित राज रमानूं मूल ।।५३।।

आहे दीठउ एक अनेक पताक सुनाक विमान ।
देवतणी बहु नारि मझारि करतीय गान ।।५४।।

आहे नाग भवन मनरंजन दीठउ स्वप्न मझारि ।
वली वली निरखीय परखीय हरखीय मरुदेवी नारि ।।५५।।

आहे रतनु रतन धन राशि विभासित किरण कलाप ।
दीठउ वर घर अंगणि धरठउ सुरपति चाप ।।५६।।

आहे धूम रहित धग धग तउ लगतउ पावक सार ।
दीठउ जाडिम हरतउ करतउ तिमिर निवार ॥५७॥

आहे देखीय सोल सपन घन सोभन हियडइ जाणि ।
पूछीउ पति तेहनू फल कोमल बोलि वाणि ॥५८॥

आहे उत्तरापाढ आषाढ तणी वदि बीज सुवार ।
पुण्यइ दीघउ सुरभि गरभि अवतार ॥५९॥

आहे इन्द्र सिंहासन कपीयु जपीयु जय जयकार ।
अवधि सहित तस प्राणीयु जाणीयु जिन अवतार ॥६०॥

आहे इंद्र इंद्राणीय चालीय चालीयु सवि परिवार ।
पार न लावइ देवीय देव करचा सिणगार ॥६१॥

आहे दीधउ नाभि नरेस सुरेश वरवाणइ अंग ।
एहवु रूप सरूप न होऊइ एह अनग ॥६२॥

आहे जमलीय वइठीय दीठीय सिंहासनि मरुदेवि ।
निर्जर निर्जर नायक प्रणमीया श्री फल लेवि ॥६३॥

आहे नाभि नरेसर पूजीयु पूजीयु मरुदेवी मात ।
कीरति वली वली कीधीय तेह तणी सुणउ वात ॥६४॥

आहे धिन धिन मन्दिर तम्ह तणू धिन २ तम्ह तणउ वंश ।
धिन धिन रूप तुम्हारहुँ दोष तणु नही अंश ॥६५॥

आहे तम्ह घरि घरणीय कूखइ जिनवरिइं कस्यउ निवास ।
तेणइ आवीय देवीय देव हवा तम्ह दास ॥६६॥

आहे भुगति मुगति फलदायक नायक अम्ह तणउ देव ।
जनम हुसिइ तम तम्ह घरि तीणइं करं धूं सेव ॥६७॥

आहे तम्ह गुण देखीय हरखीय अम्ह मन आजि ।
सुरभि गरभि जिन अवतरचा तेणइ अम्ह सरीया काजि ॥६८॥

आहे पंच शबद घरि वाजइ गाजइ अंवरि नाद ।
जय जय रव बहु कीधउ दीधउ सुणीउ नसाद ॥६९॥

आहे गरभ कल्याणिक कीधउ सीधउ पुण्य बहूत ।
देवीय देव सु सेव करी निज ठामि पहूत ॥७०॥
आहे ते वसी देव कुमारीय सेव करइ नव मास,
पूरविला थकी अधिकीय अधिकीय पूरइ आस ॥७१॥

आहे जिम जिम गरभजि वाधइ तिम तिम रंग
उत्सव मंगल घरि घरि उदरि न त्रिवली भंग ॥७२॥

आहे चैत्र तणी वदि नवमीय सुंदर वार अपार ।
रवि जन मीतइ जनमीया करइ जय जयकार ॥७३॥

आहे लगनादि करयू वरणवू जेणइ जनम्या देव ।
बाल पणइ जस सुर नर आव्या करवा सेव ॥७४॥

आहे घंटा रव तव वाजीउ गाजीउ अंबरिनाद ।
जिनवर जनम सु सीधउ दीधउ सघलइ साद ॥७५॥

आहे एरावण गज सज कर्यू सज कर्या वाहन सर्व ।
निज निज घरि थका नीकल्या कुणइ न कीधउ गर्व्व ॥७६॥

आहे नाभि नरेसर अंगण नइ गगण गण देश ।
देवीय देवइ पूरीयु नहीय किहीय प्रवेश ॥७७॥

आहे माहिमई इंद्राणीय आणीय शप्पउ बाल ।
इंद्र तणइ करि सुंदरि गावइ गीत विशाल ॥७८॥

आहे छत्र चमर करि धरता करता जय जयकार ।
गिरिवर शिखिर पहूत वहूत न लागीय वार ॥७९॥

आहे दीठउ पंडुक कानन वर पचानन पीठ ।
तिहां जिन थापीय आखलि पाखलि इंद्र वईठ ॥८०॥

आहे रतन जडित अति मोटाउ मोटाउ लीधउ कुंभ ।
क्षीर समुद्र थकू पूरीय पूरीय आणीयू अंभ ॥८१॥

आहे कुंभ अदभ पणइ लेई ढल्या सहस नई आठ ।
कंकण करि रण भणतइं भणनइं जय जय पाठ ॥८२॥

आहे दुमि दुमि तवलीय वज्जइ धुमि २ मद्दलनाद ।
हणण हणण टंकारव भिणि भिणि भल्लर साद ॥८३॥

आहे अभिनव पूरउ सीधउ कीधउ अंगि विलेप ।
मागीय अंगि कार वाउ कीधउ नहू अक्षेप ॥८४॥

आहे आणीय बहुत विभूषण दूषण रहीत अभंग ।
पहिराव्या ते मनि रत्नीवली वली जोअइ अंग ॥८५॥

आहे नाम वृषभ जिन दीधउ कीधउ नाटक चंग ।
रूप निरुपम देखीय हरखिइं भरीया अंग ॥८६॥

आहे आगलि पाछलि केईय केईयजमला देव ।
लेईय जिनपति, सुरपति चालीउ करतउ सेव ॥८७॥

आहे भवीया गगन गमनि नवि लागीय वार तगार ।
नाभि घरगणि देवीय देव न लाभइ पार ॥८८॥

आहे नाभि पिता सखि वइढउ वइठीय मरुदेवी मात ।
खोलइ मूकीय बाल विशाल कही सहू वास ॥८९॥

आहे आपीय साटक हाटक नाटक नाचइ इंद ।
नरखइ पागति परखइ हरखइ नाभि नरिंद ॥९०॥

आहे जन्म महोत्सव कीधउ दीधउ भोग कदव ।
देव बया नृप प्रणमीय प्रणमीय जिनवर अंब ॥९१॥

आहे दिनि २ लालक वाधइ बीज तणु जिम चंद ।
रद्धि विर्बुद्धि विशुद्धि समाधि लता कुल कंद ॥९२॥

आहे देवकुभार रशाउइ मात जमाउइ क्षीर ।
एक धरइ मुख आगलि आणीय निरमल नीर ॥९३॥

आहे एक हसावइ ल्यावइ कइडि चडावीय बाल ।
नीति नहीय नहीय सलेखन नइ मुखि लाल ॥९४॥

आहे आंगीय अंगि अनोरम उपम रहित शरीर ।
होपीय उपीय मस्तकि वालक छइ पणवीर ॥९५॥

आहे कानेय कुंडल झलकइ खलकइ नेउर पाइ ।
जिम जिम निरखइ हरखइ हियडइ तिम तिम माइ ॥९६॥

आहे सोहइ हाटकनूं शुभ घाटि ललाटि ललाम ।
सहूम वधावा नइ मिसिजोवा आवइ गाम ॥९७॥

आहे कोटइ गोटा मोतीयनु रहिराव्यु हार ।
पहिरीयां भूषण रंगिन अंगि लगा रज भार ॥९८॥

आहे करि पहिरावइ साकली सांकली आपइ हाथि ।
रीखतुं दोखुत चालइ चालइ जननी साथि ॥९९॥

आहे कटि कटि मेखल वांधइ वांधइ अंगद एक ।
कटक मुकट पहिरावइ जाणइ बहुत विवेक ॥१००॥

आहे घ्रण घूघरी वाजइ हेम तणी विहुपाइ ।
तिम तिम नरपति हरखइ हरखइ मरुदेवी माइ ॥१०१॥

आहे वगनाउ वगनाउ मगनाउ लाडूआ मूंकइ आणि ।
थाल भरी नइ गमताउ गमताउ लिइ निजपाणि ॥१०२॥

आहे क्षिणि जोवइ क्षिणि सोवइ रोवइ लही अलगार ।
आलि करइ कर मोडइ त्रोडइ नवसर हार ॥१०३॥

आहे आवइ एक अकाल रसाल तणी करि साख ।
एक खवारइ खारिकि खरमाउ दाडिम द्राख ॥१०४॥

आहे आगलि मूंकइ एक अनेक अखोड बदाम ।
लईय आवइ ठाकर साकर नाव्हु ठाम ॥१०५॥

आहे आवइं जे नर तेवर घेवर आपिइ हाथि ।
जिम जिम बालक बाधइ तिम तिम बांधइ आथि ॥१०६॥

आह अवर वतूं सहूं छाडीय माडीय मरकीय लेवि ।
आपइ थापइ आगलि रमति बहु मरुदेवि ॥१०७॥

आहे खाड मिलीय गलीय तलीय खवारइ सेव ।
सरगि थका नित सेवाउ जोवाउ आवउ देव ॥१०८।

खांड मिली हरखिइं तली गली खवारइ सेव ।
कई आवइं सेविवा केई जोवा देव ॥१०९॥

आहे आपइ एक अहीणीय फीणीय झीणीय रेख ।
आवीय देवीय देवतणी देखाउइ देख ॥११०॥

आपइ फीणी मनिरली माहइ झीणी रेख ।
देवी आवइ सरगिथि देखाउइ ने देख ॥१११॥

आहे कोई न आणइ अमख कमरख मूंकइ पासि ।
वेलांइ वेलांइ सूनेला के लानी वहूरासि ॥११२॥

सूनेलां केलां भला का ठेलानी रासि ।
केइ ल्यावइं फूकणां कमरख मूकइ पासि ॥११३॥

आहे एक वजावई वाजाउ निवजाउ आपई एक ।
गावइ गायण रावण आपई एक अनेक ॥११४॥

वाजइं वाजा अति घणा निवजा एक अनेक ।
आपइ रायण कोकडी पाका रायण एक ॥११५॥

आहे गूंदतल्यउ गुरु गूंद वडां वर गूद विपाक ।
आपइ फूलिरि चोलीय चोलीय आणीय चाक ॥११६॥

आगइ गूंद वडा वडां सरिस्यु गूंदाविपाक ।
गूंद तलिउ कूलेरि तगउ चोली आगइवाक ।।११७।।

आहे एक आगइ घर सोलाउ कोहलां केरउ पाक ।
आंगिग आगीय वावइं एक अनेक पताक ।।११८।।

आहे आगइ साकर दूध विसूधउ दूध विपाक ।
आपइ एक जगी घगी खाड तगी वर चाक ।।११९।।

साकर दूध कचोलडी सूधउ दूध विपाक ।
आगइ एक जगी धगी खाड तगी वर चाक ।।१२०।।

आहे कोनल कोमल कमल तगां फल आपइ सार ।
नहीय दहीय दहीयथरांनउ धोक लगार ।।१२१।।

कमल तगा फल टोपरा पस्ता आपइ सार ।
दहीय दहीयथ रातगु वाक नहीय लगार ।।१२२।।

आहे वूरइं पूरइ पस तस खस खस आपइ एक ।
उन्हऊ पाणीय आगीय अंगि करइ नित सेक ।।१२३।।

आपइं वूरू खाडनू खसखस आहइ एक ।
चापेल वडइ चोपडी अंगि करइ जल सेक ।।१२४।।

आहे कोठइ मोटां मोतीय मोतीय लाडू हाथि ।
जोवाउ नित नित आवई इंद्र इद्राणि साथि ।।१२५।।

कोटइं मोती अतिभला मोती लाडू हाथि ।
जोवानइ आवइ वली इन्द्र सची नेहु साथि ।।१२६।।

आहे चारउ लीनी वाचकी साकची आपइ एक ।
एक आपइ गुड वीजीय वीजीय फगस अनेक ।।१२७।।

आहे माथइ कूचीय ढीलीय नीलीय आपइ द्राख ।
नित मित लूंग ऊतारइ जे मन लागइ चाख ।।१२८।।

चार तगा फल साकची सूका केला एक ।
पहू आगुड वीजी घणी आपइ फनस अनेक ।।१२९।।

सिरि कूची मोती भरी हाथिइ नीली द्राख ।
लूग ऊतारइ माडली जेमन लागइ चाख ।।१३०।।

आहे मात तगीया साहेलडी सेलडी आपइ नारि ।
छोलीय छोलीय आपइ वइठीय रहइ घर बारि ।।१३१।।

आहे जादरीया काकरीया घरीया लाडूआ हाथि ।
सेवईया मेवईया आपइ सिलवट साथि ॥१३२॥

सेव तणा आदिइ करी लाडू मूकइ हाथि ।
आणइ गुलमेला करी आपइ तिलवट साथि ॥१३३॥

आहे तीगण काईय आईय माणीय आपइ हाथि ।
तेवड तेवडा बालक जमला चालइ साथि ॥१३४॥

नालिकेर नीला भला माडी आपइ हाथि ।
जमला तेवड तेवडा बालक चालइ साथि ॥१३५॥

आहे आपइ लीबुअ वीजाउ वीजउरा जंबीर ।
जोईय जोईय मूकइ जिनवर बावन वीर ॥१३६॥

आपइ लीवू अतिभला वीजुरा जवीर ।
हाथि लेई जोअइ रमइ जिनवर बावन वीर ॥१३७॥

आहे साजाउ खाजाउ करेउ कीघउ चूर खतूर ।
आपइ केईथ जोअइ गाअइ वाअइ तूर ॥१३८॥

आपइ फलद खजुरणु केई खाजा चूर ।
केई गावइ गीतडा एक पजाइइ तूर ॥१३९॥

आहे श्रीयुत नित नित आवइ देव तणउ संघात ।
अमिरित आपइ आणीय क्षाणीयनी कुण वात ॥१४०॥

लेई निज वाहन दूध आवइ सुर सघात ।
आणी अमिय रस घाणीनी कुण वात ॥१४१॥

आहे बालक बाल दिवाकर सरिखउ होउ कुमार ।
बुद्धि सुरु गुरु जीतउ जीतउ रूपिइ सार ॥१४२॥

आहे झगमग झलकइ अलक मिरिसि जिसी मोहण वेलि ।
नित नित नवीनवी रमति रमइ हांउइ निज गेलि ॥१४३॥

आहे मुख जिसु पूनिम चंद नरिंदन मित पद पीठ ।
त्रिभुवन भवन मझारि सरीखरवउ कोई न दीठ ॥१४४॥

आहे नयन कमल दल सम किल कोमल बोलइ वाणि ।
शरद सरोवर निरमल सकल अकल गुण खाणि ॥१४५॥

आहे कर सुरतरु वर शाख समान सजानु प्रमाण ।
तेह सरीखउ लह किही भूप सरुप जाणि ॥१४६॥

आहे हाटक गिरि तट निघट सुघट वक्षस्थल देश ।
सुर नरपति मन रजत नाभि नाभि निवेश ।।१४७।।

अ हे ऊरु युगल किल कदलीय कोमल सबल सरुप ।
हाटक घटित मनोहर जाणे परुहण कूप ।।१४८।।

आहे चरण कमल अति कोमल कमल निवासि नीवास ।
प्रणमइ त्रिभुवन त्रिभुवन नायक पूरइ आस ।।१४९।।

आहे जिनवर नख निरखइ मुख देखइ आपणू इन्द्र ।
जाणे करि नख मिषि पग सेव करइ छइ चंद्र ।।१५०।।

आहे पामीय योवन घन वन क्रीडन करइ अपार ।
जलि थलि रमताउ हींडइ जमला देव कुमार ।।१५१।।

आहे परणाव्या सतीय यसवती अपर सुनंदा नाम ।
जननीयनी मननी रली पहुतीय हरखिऊ गाम ।।१५२।।

आहे कुमर तणइ पदि पूरां पूरवना लक्ष वीस ।
आयु गयु विरहयु यस प्रौढ हवा जगदीस ।।१५३।।

आहे नाभि नरेश सुरेश मिलीनइ दीधउ राज ।
सर्व प्रजा व्रज हरखीउ हरखीउ देव समाज ।।१५४।।

आहे सिंहासन अति भासन चासन माडइ देव ।
वरसर स्वामीय स्वामीय सरग तणां करइ सेव ।।१५५।।

आहे चमर अमर कर वालइ ढालइ जिनवर अंगि ।
छत्र विचित्र धरइ धरणीपति बइसइ रंगि ।।१५६।।

आहे असि मिसि कृसि पशुपालननी देखा डीय वाट ।
वणिज वणि गजन सीखव्या कहयु तम्हयो मांडल हाट ।।१५७।।

आहे अंग नइ वंग तिलंग बहू परिथाप्या देश ।
कीधउ द्रोण नगेर पुर पत्तन ग्राम निवेश ।।१५८।।

आहे सेनापति अतिमति युत थापीयु थापीय नीति ।
राज करत अप्रीति कुरीति न नीपनी ईति ।।१५९।।

आहे मुगतिहिं गामीय स्वामीय इन सुत शत नइ एक ।
हउ आउ लहूआउ अनुक्रमि सीख्याउ बहुत विवेक ।।१६०।।

आहे एक सुता हवी ब्राह्मीय ब्राह्मीय सम शुभ वाणि ।
बीजीय पुत्रीय सुंदरी सुंदर गण गुण खाणि ।।१६१।।

आेह अइसठि लक्ष अपूरव पूरव कीघउ राज ।
अ व कुटवं मटनं प्रजाजन सरीया काज ॥१६२॥

आहे एक दिवसि नीलंजसा सरस करतीय नाच ।
मानसं हरतीय मरतीय देखीय बोल्याउ वाच ॥१६३॥

आहे धिग २ इह ससार वेकार अपार असार ।
नही सम मार समान कुमार रमा परिवार ॥१६४॥

आहे घर पुर नगर नही निज रज सम राज अकाज ।
हय गय पयदल चल मल सरिखउ नारि समाज ॥१६५॥

आहे आयु कमल दल सम चचल चपल शरीर ।
यौवन घन इव अथिर करम जिम करतल नीर ॥१६६॥

आहे भोग वियोग समन्नित रोग तणूं घर अंग ।
मोह महा मुनि निंदित निंदित नारीय सग ॥१६७॥

आहे छेदन भेदन वेदन दीठीय नगर मझारि ।
भामिनी भोग तणइ फलितउ किम वांछइ नारि ॥१६८॥

आहे कूड कपट नट विटनीय सगति करताउ जीव ।
जल थल चर तिरियग माहि देखइ दुख अतीव ॥१६९॥

आहे नरभवि इष्ट अविष्ट तणु सयोग वियोग ।
अंगुलि अंगुलि छन्नउ निवसइ रोग ॥१७०॥

आहे सुरगति दुरमति अति घणी ऊपजइ आयुनइ अति ।
देखीय देव महर्द्धिक मानस दुख तिहा सति ॥१७१॥

आहे चिहु गतिमाहि किही नही सोख्य निराकुल रूप ।
आकुल व्याकुल लक्षण दु ख तणु भव कूप ॥१७२॥

आहे काल अनंत भमत हवा मझ इह ससारि ।
परणीय परणीय परवसि मूकीय मरता नारि ॥१७३॥

आहे माणस नइ भवि अव्याउ चाव्यउ मातनू थान ।
ते सहु नीरधि नीरथकू अधिकेरउ मान ॥१७४॥

आहे एह कुटंब विटंबन कारणि मिलीयउ आज ।
सोमवि मु कई चूकइ ता निज आतम काज ॥१७५॥

अ हे एह ज देह तणू फल जे तप कीजइ सार ।
मूकीय मोह असंयम करम मरम मद मार । १७६॥

आहे काल अनतउ देखीय देह सनेहज कीध ।
तेणइ जनमि जनमि मइ एह कलेवर लीध ॥१७७॥

आहे निंदित खात कुघातज दीसइ देह मंझारि ।
मूत्र मलादि किइं पूरीय तउ किम रूडीय नारि ॥१७८॥

आहे देखीय नारीयनु मुख को सुख मानइ मूढ ।
दीटइ निवृत्ति लायक पावक मिवसइ गूढ ॥१७९॥

आहे पुत्र कलत्र सुमित्र तणीय घणीय छइ आथि ।
तेह मझारि विचारि कहु कुण आवइ साथि ॥१८०॥

आहे वस्त्र विभूषण दुखण सरिखाउ भीसइ आजि ।
जेणइ एणइ पहिरिइ केहउ आतम काज ॥१८१॥

आहे मोहीय जीव अतीव न जाणइ सार असार ।
अंमि वहइ मणि हेम तणउवि घणउ नित भार ॥१८२॥

आहे रति भरया जे अंगि करइं छइं चंदन लेप ।
ते सहू दुरमति दुरगति जावा नउ आक्षेप ॥१८३॥

आहे रसना रसि पट रस रसतां सुख केहउ होइ ।
जड रसना अवगत रस स्वादन जाणइ कोइ ॥१८४॥

आहे अंगि अडाडइ रागीय भोगीय चोअड चद ।
ते निज काजि वधारइ पाप लता नउ कद ॥१८५॥

आहे कुसुम असम परिमल लीयधइ कहु के हउसार ।
आतम नइ नही लाभ शरीरि न पुष्टि लगार ॥१८६॥

आहे टीलाउं टीलीय आदि करी सिणगारइ अंग ।
ते निज काज समाज तणउ घणु आणइ भंग ॥१८७॥

आहे मोह महा सट जीपइ जीपइ ते महु कर्म ।
मुगति अचल फल साधवा मूलगु एहज मर्म ॥१८८॥

आहे मोह सहू नउ छाडीय छांडीय सघलउ संग ।
दुरधर व्रत नर धरीय करिसि तप वार अभग ॥१८९॥

आहे लोकांतिक तव आवीय जय २ करता एव ।
वीवनइ वली वली निरमलो दीक्षाउ ल्यउ तुम्हे देव ॥१९०॥

आहे इंद्रादिक तव आवीया आवीया भूप अनेक ।
तीरथ पाणीय आणीय कीधव वर अभिषेक ॥१९१॥

आहे अंगि विलेपन कीधउ दीधउ भरतनइ राज ।
पालखी वइसीय सचरचा सरसु देव समाज ॥१९२॥

आहे नारीय वारीय नरहइ करतीय हा हा कार ।
पुंठिइ चालीय पडतीय रडतीय त्रोडती हार ॥१९३॥

आहे एक कहई कहउ कउणंउ फेरवोयु मभनाथ ।
जउ जासि वनवासि तु अम्ह नइ एहज साथ ।१९४॥

आहे परणीय घरणीय घर परिवार काइं छाडउ देव ।
जिम किम तुम्हे अम्ह कहिसिउ तिम अम्हे करिस्यू सेव ॥१९५॥

अहे दलवलती अबला मू किइ कहु केहउ लाभ ।
आज अम्हारइ सासइ त्रुटीय घडीयउ आभ ॥१९६॥

आहे कंतनइ कहउ साहेलडी वेलडी जिम निरधार ।
नरहइ तिम दुख किम सहुं किम रहू विण भरतार ॥१९७॥

आहे कत कहउ कुण कारणि अरूचि वही तुम्ह राजि ।
जउ इम सू कवा मन हतूं तउ परणी कुणराजि ॥१९८॥

आहे अगनि अंगूठइ मू कयि कहु किम लहिस्यूं पार ।
एक विरह पर जालइ बीजइ दुंधर मार ॥१९९॥

आहे जा तम्यो नीद्रन करता उहू न सूतीय तांइ ।
एक सनेह नही तउ देव दया नाही काइ ॥२००॥

आहे आज लगइ तम्ह भूख्या मइ नवि लीधू अन्न ।
तु तृण नीपरि मूंकता केम वहइठइ मन ॥२०१॥

आहे सारीय नारीय मू कीय मूंकीय अभिनव राज ।
कहु वन माहि जई नइ कहू करिस्यउ काज ॥२०२॥

आहे जउ अम्ह केरउ कांईय दीठउ हुअइ दोष ।
तु अम्ह ऊपरि साचू करिवउ आवइ रोष ॥२०३॥

आहे जउ अम्ह अपरिराग नही तुम्ह चित्त मझारि ।
तउ घरि आवीय नइ परणउ बीजी बहु नारि ॥२०४॥

आहे रहु रहु स्वामीय वली वली हु तुम्ह केरीय दासि ।
इम विल विलतीय मू कीय का चाल्या वन वासि ॥२०५॥

आहे जउ सावे परिघर मूंकोय वनि जास्यउ देव ।
तउ अम्ह नइ सरसी लेई जाग्रउ करवा सेव ॥२०६॥

आहे जे जे गुण अवलोकीय तें ५ुंह दीसइ अंगि ।
एहन दोष जे चालीय मू कीय मझ कंने रंगि ।।२०७।।

आहे थासिइं आज पछी अम्ह नइ दिन वरस समान ।
तुम्ह विण आज पछी अम्ह नइं कुण देसिइ मान ।।२०८।।

आहे दुख न दीठउ आज लगइ अम्हयो एक लगार ।
एकइं वारइ आव्यउ दुःख तणउ इर्वइ भार ।।२०९।।

आहे आज लगइ तुम्ह नइ गनती अम्हयो बोलीय भास ।
तउ हवडा इम काइ मू कउ छउ कत विरास ।।२१०।।

आहे राति विभाति न चंद्र विना जिम एक लगार ।
नारीय नांह विना तिम जांणउ एह विचार ।।२११।।

आहे इन्द्रादिक आव्या छइजे हवडां तुम्ह पासि ।
वे निज निज घरि जासिइं मू कीय नइ वन वासि ।।२१२।।

आहे देव कहइ छइ नारीय मूंकइ पुण्य अपार ।
तउ निज निज देवीनउ कों न करइ परिहार ।।२१३।।

आहे इन्द्रादिक लेई चालीया करता जय २ कार ।
ते अम्ह नइ पर जलतां लागइ अंगार ।।२१४।।

आहे जउ रडतीं अवलां व्यजतां हरख्या सुरलोक ।
देव दया विण देवपणू एहनू तउ फोक ।।२१५।।

आहे इन्द्राणीय तह्यो का हरख्या मझ मूकत दीठ ।
नारीय नारि तणी कहु कोइं न जांणइ नीठ ।।२१६।।

आहे आज लगइ मइ नाह प्रसादिइं कीधउं राज ।
बेटा बहू अर नंइ विसि हीन थई हूं आज ।।२१७।।

आहे स्यूं तम्हे दूषण दीजइ पाप अम्हारउ घोर ।
तेणइ प्राण हवूं आहे ऊपरि चित्त कठोर ।।२१८।।

आहे स्त्री भरतार वियोग कस्यूं किहीमइ अथि घोर ।
तेणइ कारणि ए मझनई दुःख आव्यु घोर ।।२१९।।

आहे वालकनां मइ दूरि करयां किहीं सांहीय बाप ।
ते उदयागत आज सही मझ आव्यु पाप ।।२२०।।

आहे परभवि परनंदा करी परता बोल्या मर्म ।
तेहज देह विदाहक आवीय प्रगटिउ कर्म ।।२२१।।

आहे दान न दीधूं कीधउ मइ निशि भोजन भूरि ।
तेहज पाप तणइ फलि नाह गयु मझ दूरि ॥२२२॥

आहे पाणीय आणीय छाणीय नइ नवि की धर्म काज ।
तीणइ दाहद नाह वियोग पम्यउ अम्ह आज ॥२२३॥

आहे मइ परभवि किहो लेईय भाज्यां नीम निटोल ।
तेणइ पापिइं नाह न थी मझ देवउ बोल ॥२२४॥

आहे रे सखि मइ पर भवि नवि गुरुनीय मानीय आण ।
तेणइ रणयं रणीय परि मझ मलीयउ माण ॥२२५॥

आहे जे जनमतरि हूं न गई जिन भवन मझारि ।
तेणइ वल्लभ मू कीय नइ चाल्यउ निरधारि ॥२२६॥

आहे माडीय चाडीय कीधीय नइ नवि पुज्या देव ।
तुं किम एहवा वरनीय करठाउ लामइ सेव ॥२२७।

आहे हा हा दिव तइ दीधउ एह तणु मझ भोग ।
तउ हवडां वली काइ करउ छउ एह वियोग ॥२२८॥

आहे जेणइं पुण्यइं मइं वर ए लाधउ जिनराज ।
मात कहउ ते पुण्य किहां गयूं छाडीय आज ॥२२ ॥

आहे देव मिली नइं पू ठिइ जातीय वारीय नारि ।
महुभाउ सम परिणामिइं वनह मझारि ॥२३०॥

आहे पामीय अटवीय .... वरहाउ देव ।
छांडीया वस्त्र विभूपण एक न लागीय खेत ॥२३१॥

आहे पचवि मुष्टि करी नइं मस्तकि कीधउ लोच ।
बाहिर सर्व परिग्रह केरउ कीधउ मोच ॥२३२॥

आहे आसन माडीय छाडीय अभ्यतरनु सग ।
सयम लीधउ कीधउ भोग तणउ वहु भग ॥२३३॥

आहे जीव सहूनीय जयणाउ लीधीय वित मझारि ।
पुत्रीय मात सरिखीय कीधीय सघली नारि ॥२३४॥

आहे अनृत विरति अति पालवा लीधउ मौन अभग ।
स्तेय विरति अति निरमल करवा मूक्यउ सग ॥२६५॥

आहे चैत्र तणी वदि नवमी लीधउ मुनिवर वेस ।
पहिलउ ते यति मारग नउ देखाडयउ देस ॥२३६॥

आहे च्यारि सहस्र नृप जमला रहीया मुनिवर वेखि ।
तत्व न जाणइ मूढ वणइ करी देखा देखि ॥२३७॥

आहे इंद्रादिक किई जिन पूजीया स्तवन कही तेणइ वारि ।
लोच तणा कच मूकीया क्षीर पयोधि मझारि ॥२३८॥

आहे वली वली प्रणमीय प्रणमीय कीधीय भगति वहूत ।
ईंद्र नरेन्द्र खगेन्द्र सहू निज निज ठाम पहूत ॥२३९॥

आहे कासिग लीधउ कीधउ अवधि तदा षट मास ।
इंद्रीय भोग शरीर तणी सहू मूंकीय आस ॥२४०॥

आहे सर्व अचेतन चेतन अरि राग न रोष ।
मानस निरमल कीधउ एक न दीसइ दोष ॥२४१॥

अहे च्यारि सहस्रज मुनिवर तेणइ छांडीय सेव ।
मास ६ प्रोषध पारणा कारणि चालीया देव ॥२४२॥

आहे गामीय २ घरि २ गया कोई न जाणइ रीति ।
मणि माणिक आगलि धरइं राज तणी करइ नीति ॥२४३॥

आहे मास ६ एणी परि हीड्या कुणइं न जाण्यउ भेद ।
अंगि न भग लगार न चिन्त थयू क्षण क्षेद ॥२४४॥

आहे श्रेयास नरपति मदिरि पहुताउ जिनवर देव ।
जाणीय विधि पडिघाईया काधीय वहु परिसेव ॥२४५॥

अहे केवल ईक्षु तणा रस नउ लीधउ आहार ।
रतन घरगणि वरसइ वरत्यउ जय जयकार ॥२४६॥

आहे आहार लेईय चालीया दूरवि मूक्यउ गाम ।
अटवीय माहि रह्या जिहा कोई न जाणइ ठाम ॥२४७॥

आहे सहस वरस वन माहि रही तप कीधउ घोर ।
ध्यान खडग वलि भाजीयू करम तणू वल घोर ॥२४८॥

आहे पर चिंतन सहू छाडीयू माडीयुं आतम ध्यान ।
घाति करम क्षय　　कीधउ प्रगटीयू केवल ज्ञान ॥२४९॥

आहे फागुण वदि एकादशी नु दिन उतम वार ।
केवल सभव जाणउ आणउ हरष अपार ॥२५०॥

आहे जय जय करताउ आवीया सरगि थका सहुदेव ।
समव सरण रचना करी एक न लागीय खेव ॥२५१॥

आहे बार सभा तिहां बइठीय दीधउ वर उपदेश।
सेव करइ नर खेचर देवीय देव सुरेश ॥२५२॥

आहे चउरासी गणधर सुख सघ न लाभए पार।
कीधउ ईहा रहित अनेक सुदेसि विहार ॥२५३॥

आहे तत्व कही प्रतिबोधीय भव्य तणी बहुराशि।
अजान तिमिर निवारता पहुताउ गिरि कैलाश ॥२५४॥

आहे छाडीय समव सरण सहू कीधउ ध्यान वहून।
शेष अघाति करममय सीधउ मुगति पहूत २५५॥

आहे माघ तणो वदि चउदसि दिवसि हवू निरवाण।
निज निज चिन्हि करो त्रिहु भवनि हवू तव जाण ॥२५६॥

आहे कीधउ मोक्ष महोत्सव वासव ग्या सिर नामि।
तेहज चितन करताउ पुहुताउ निज निज ठामि ॥२५७॥

आहे मोक्ष तणु सुख भोगविसिइ काल अनंत।
तेह तणा सुखनी परि सघलीय जाणइ संत ॥२५८॥

आहे फाग करी फल एहज मागू छू जिनराज।
मुक्ति करउ सहू कर्म थकउ बीजइ नही मझ काज ॥२५९॥

आहे ऊरनउ पच कल्याणक उपरि मानसि राग।
ज्ञानभूषण गुरिइ कीधउ तेहभणी एह फाग ॥२६०॥

आहे नारोय नर जे भाव धरी नित गाइसिइ एह।
इंद्रादिक पद पामीय शिवपुरि जासिइ तेह ॥२६१॥

आहे एकाणउं अधिकाशत पंचम लोक प्रमाण।
सूधउं भणिसिइं लिखिसइ ते नर अतिहि सुजाण ॥२६२॥

इति भट्टारक श्री ज्ञानभूषण विरचितं : श्री आदीश्वर फाग
समाप्ता ॥ शुभ भवतु ॥

ग्रंथाग्रंथ श्लोक सख्या ५९१ ज्ञातव्या।

संवत् १६३४ वर्षे पोस वदि १० बुधवारे लिखित मिद शास्त्र
॥ श्री मालपुरे ॥ पांडे श्री डूगा लिखावत आत्मार्थं ॥

नेमीनाथ फाग

नेमिनाथ फाग के रचयिता भट्टारक रत्नकीर्ति हैं। रत्नकीर्ति का जन्म वि० स० १६०० को हुआ और मृत्यु वि० सं० १६५६ को हुई। रत्नकीर्ति के पिता सेठी देवीदास और माता का नाम सहजलदे था। जैनो की हुवड जाति मे वागड प्रदेश के घोघानगर मे रत्नकीर्ति का जन्म हुआ। शैशव से ही ये मेधावी थे। अभयनन्दि ने शास्त्रो मे पारंगत जानकर रत्नकीर्ति को अपना पट्ट शिष्य घोषित कर दिया और वि० स० १६४३ मे भट्टारक पद पर अभिषिक्त कर दिया। रत्नकीर्ति स० १६५६ तक भट्टारक पद पर बने रहे। सौंदर्य की दृष्टि से रत्नकीर्ति अपने युग के सर्वश्रेष्ठ युवक थे।

इस फागु की रचना हांसोट मे हुई थी और इसे राग-केदार मे लिखा गया है। साथ ही फागुकार ने यह भी संकेत दिया है कि इसके वसन्त ऋतु मे गाने से कल्याण होगा :-

गाये सुणे ए माह त, वसत रिते सुखि पाय ॥५५॥

नेमिनाथ फाग की कथानक-रूढियां परम्परागत हैं। सौंदर्य-बोध की दृष्टि से राजुल का सौंदर्य-निरूपण रुढिगत उपमानो के आधार पर किया गया है। इसी प्रकार विप्रलम्भ शृंगार के अन्तर्गत राजुल का विरह वर्णन किया गया है, परन्तु वह भी मार्मिक नही है।

नेमीनाथ फाग

सम्वत् १६५० के आसपास

श्री जिन युग घन जाणिय, वखाणीये वाणि विख्यात ।
सारदा वरदा स्वामिनी, भामिनी भारती मात ॥१॥

विमल विद्या गुरु पूजीइ, बूझिय ज्ञान अनत ।
मुगति तणा फल पाईइं, गाइए राजुल कत ॥२॥

यादव कुल तणो मडण, खडन पापनो अ श ।
अवतरया अवनि अनोपम उपम अधिक वतश ॥३॥

सुंदर शिवादेवी नंदन, वदन त्रिभुवन तेह ।
समुद्रविजय घन तात विख्यात वसुधा एह ॥४॥

कु वर करुणावत महत कहत अपार ।
राज काज मनि आणिय जाणिय करे मोरारि ॥५॥

जो उपारपू एह तणू, अह्य तणू माने मन्न ।
पन्नग सेजि पोढिय कंबु धनुष धरे धन्न ॥६॥

मल्ल युद्ध जो एक रे वहु परिप्राक्रमी होय ।
पारखे प्राक्रमे पूरो, सूरां एसमो नही कोय ॥७॥

पाणिग्रहण करी पाडु देखा डुं विपरीत ।
परणो प्रभू कहे प्रेमे, इम मनोहेरा रीत ॥८॥

सिषवी सुंदरी सामले, आमले पाडवा वात ।
रवडी खली झील वा चालिय झालिए नेमने हाथि ॥९॥

जुगल कमले करी कालिनी स्वामिनी छाटे देह ।
पाणिग्रहण पर प्रेम रे नेम धरो मनि नेह ॥१०॥

वल छल कल करी भोलव्यो भोले नेमिकुमार ।
उग्रसेन केरी कुअरी राजुल रुप अपार ॥११॥

दूहा—चंद्र वदनी मृग लोचनी मोचनी खजन मीन
वासग जात्यो वेणिइं श्रेणिय मधुकर दीन ॥
युगल गल दाथै सारी उपम नाशा कीर ।
अधर विद्रुम सम उपता, दतनू निर्मल नीर ॥

ढाल—चिवुक कमल पर षटपद, आनद करे सुआ पान ।
ग्रीवा सुदर सोभती, कवु कपोत ने वान ॥१२॥

कोमल कमल कलश वे, उपरि मोती सोटे ।
जाणे कमल केरी वेलडी वेलडी वाहोडी सोति ॥१३॥

कनक कजोपम सोभतु नाभि गम्भीर विसेस ।
जाणे विधातार आगुली धान्निय रुपनी रेख ॥१४॥

कटि हरि गति गज जीतिया, पूरिया वनमां वास ।

जघार जीतिय कदालया, अ गुलि पद्म पलास ॥१५॥

आभ्रण अंग अनोपम भूषण शरीर सोहत ।
कवि कहेम्यु वरवाणीये, राजुल रुप अनंत ॥१६॥

उग्रसेन की कुंअरि सुंदरी सुलक्षण अ ग ।
माधव वधव नेम नो, वीवाह मेलो मनरग ॥१७॥

दूहा—वेहू घरि सुभ पर प्रेमस्यु अही अण मिलिया अनेक ।
खरचे वित्त नित चितस्यु वीहवा वार विवेक ॥१॥

करो सजाई सुर मिलि यदुपति हलधर कहांन ।
इंद्र नरिंद्र गसद चढी, ते पणि आव्या जानं ॥२॥

ढोला—जांन मान माहि मोटा महीपति मलिया अनंत ।
अनेक पाहि अधिका घणा, ईश्वर उभया कत ॥१८॥

देई निसाण सजाण, चतुर चढियो रथ सोहि ।
किरिट कुंडल केरी कानि, शक्या रवि शशि सोहे ॥१९॥

आवया मडप दूकडा, कूकडा मृग तणा वृंद ।
देखी वल्यो तत खेचरे, देव दयां तणो कद ॥२०॥

सामलो सारथि वात, विख्यात असंभव आज ।
तह्यें काई कारण जाण्योरे, ए आण्या कौण काजि ॥२१॥

दूहा—उग्रसेन राइ आणीआ, पप पिशू अनेक ।
गोरव वेला मार से, करस्ये तह्य विवेक ॥१॥

वात घातनी सांभली, अ तर पडियो त्रास ।
धिग संसार वीह्वा किस्यो, ए पशु नेस्यो पास ॥२॥

पास छोडावो एहना देहना काकरो घात ।
जाणी वात में एह तणी, वीवाह तणी नही वात ॥२२॥

पाछो चालो रथ सारथि सासो म करस्यो सोस ।
उपनी तृषा अति जल तणी न समे दूधे तथा उस ॥२३॥

विषय भोगवे अग्यानी, ज्ञानी न भोगवे तेह ।
भूता ततु बाधे माक्षिका, नवि बांधे करि देह ॥२४॥

इ द्रिय सुख शुभ तव लगे मुगति न जाणो खेल ।
दीये स्वाद नही जव गे, तव लगे उत्तम तेल ॥२५॥

वीवाह वात निवारू ं, मारू ं मदन मांहूत ।
सुध मने तप साधू, आराधु सिद्ध महत ॥२६॥

दूहा—आलिये आवी इम कहु सखीस्यो करे शृ गार ।
तोरण थी पाछो वल्यो यतुपति नेमिकुमार ॥१॥

सांमली श्रवणे सु दरी, मनि धरी करी एक वात ।
चकित थई तव मति गई, कारण कहो मुझ वात ॥२॥

ढाल—मात तात सहु देखतां, राजुल भई दिगमूढ ।
वात वारती सी घणी, कर्म तणी गति गूढ ॥२७॥

आभ्रण भूषण छोडती, मोडती ककण हाथ ।
मदर ह्येलू ं वहेलिय, ह्ये लिय सहिय साथ ॥२८॥

राखो रें रथ तह्ये समरथ, हसारथ करे बहु लोक ।
लक्षण कोणस संतना मांहतना वचन सुफोक ॥

कां जाये वन हाहला, कला कठिन कां थाप ।
सांमली वीनती साहरी, ताहरी कोमल काय ॥२९॥

छए रति आरति अति घणी, वरसाले रे विख्यात ।
नाथ वात नो हे सोहिली, दोहिली शियाला नीराति ॥३०॥

सीयाले शीत पडे, पडे अति निर्मल हीम ।
हरी करी चरि मद मू के, चूके तापस नीम ॥३१॥

माह उमाह अति आवयो, माहियल माधव राय ।
पचवाण ग्रह्या हाथि रे, ाय ॥३२॥

उण्ण कालि खल सरिषो, निरखो हस कठोर ।
कोमल तनि लू लागस्ये, घागस्ये वाधु निठोर ॥३३॥

दूहा—अपराध पाषे का परिहरो, दया करो देव दयाल ।
जलचर जल विना टलवले, विलवले राजुल वाल ॥१॥

मे जाण्युह तुं मुझने मिलस्ये अगो अगि ।
उलट उपनो अति घणो, रग मा का करो भग ॥२॥

ढाल—भग कांकरि प्रिय भोगनो, भोगवो लोग विख्यात ।
माहरोकर ग्रह करस्ये, करस्ये को जीवनो घात ॥३५॥

प्रारथी ने पाय लागू मागो मया करो मुझ ।
एक रयणी रहो पास रे दास, थाउं घु तुझ ॥३६॥

हरिहर ब्रह्मा इन्द्र रे, चद्र नरेन्द्र ने नारि ।
परण्या दानव देवता सेवता सहूं ससारि ॥३७॥

सुर नर हरि हर परण्या, पशू नो न करचो तेणें मार ।
राजुल साभलि वीनती, बोल्या नेमिकुमार ॥३८॥

अकेका भव ने सगपण, भलपण हिंसा न होय ।
सुगति सुधार।सढोलिय, पीये हलाहल कोय ॥३९॥

किहा थी आव्यु एवडू, डाहापण देव दयाल ।
परण्या विण का परहरो, बोले राजुल वाल ॥४०॥

किम रहु दुख सहु एकली, किम माने मुझ मन्न ।
रजनीपति दहे रोजनीय, वासरपति दहे दन्न ॥४१॥

दूहा—स्यामाटि शशि काढीयो, वास्यो अतिशय सेस ।
सूरमली मेरू'वरासीयो, वासुदेव विसेस ॥१॥

क निधि माही थी काढीयो, विरहिणी केरो काल ।
शीतल शशि ते सहू कहे, विरहा दवानल झाल ॥२॥

ढाल—झाल मटेले परणी करू, धरूं क मालि वेशि ।
भव माहि भव करुं मनका मन करे परवेस ॥४२॥

एम विलवती जूवती, वीनती करे पीयू पासि ।
चतुर चिता करो महारीय, ताहरी राजुल दासि ॥४३॥

सामलि सुंदरि सीख सीखामण अहत्र तणी एक ।
सूंजाणो ए सार ससार असार अनेक ॥४४॥

तन धन गृह सुख भोगव्यां, एभव माहि अपार ।
नरके जाये जीव एकलो, एकलो स्वर्ग दुआर ॥४५॥

देवना दानव मानव तेह तरणा घरणा करया भोग ।
तेंह जीव नृपति न पामीयो, मानव भवनो सो जोग ॥४६॥

उपनी तृपा अति नीरनी, क्षीरधि नें कीयो पान ।
तृपतिन पाम्यो आतमा, तृरण जल कोरण समान ॥४७॥

तात मात सहू देखतां जीव जाये निरधार ।
धर्म विना कोई जीवनें नवि तारे संसार ॥४८॥

राजुल मन मनाविय आवी चढयो गिरिनारि ।
वार भेद तप आचरे आचरे पंचाचार ॥४९॥

सुकुमालो परिसा सहै सहेमा धन मभारि ।
पनर प्रमाद दूरें करे, धरे शील सहश्र अढार ॥५०॥

ध्यान बले कर्मक्षयकरी, अनुसरो केवल ज्ञान ।
लोकालोक प्रकाशक भासक तत्व निधान ॥५१॥

राजुले तो परतो करी, मन धर रह्यो वेराग ।
भूषरण अ गना मू किय, मूकिय शरीर सोहाग ॥५२॥

भव्य जीव प्रतिबोधिय, कीधो शिवपुर वास ।
तव वलें स्त्री लिंग छेदीय राजुल स्वर्ग निवास ॥ ५३ ॥

उदधिसुता सुन गोरनमी प्रणमी अमेचद पाय ।
मानियो मोटे नरिद अमेनद गच्छपति राय ॥५४॥
तेह पद पकज मनधरी, रत्नकीरति गुरण पाय ।
गाये सूरणे ए माहत, वसत रिते सुखि पाय ॥५५

हा—नेमि विलास उल्हासस्यु, जे गास्ये नरनारि ।
रत्नकीरति सूरीवर कहे, ते लहे सौख्य अपार ॥१॥

हांसोट माहि रचना रची, फाग राग केदार ।
श्री जिन जुग धन जाणीये, सारदा वर दातार ॥२॥

॥ इति श्री रत्नकीरति विरचिते नेमिनाथ फाग समाप्त ॥